मगलाचरण

प्रेमचंद

मंगलाचरण

आरंभिक उपन्यास

- ✓ असरारे मआबिद
- ✓ प्रेमा
- ✓ हम खुर्मा व हम सवाब
- ✓ रूठी रानी

प्रस्तुतकर्ता अमृतराय

हंस प्रकाशन
इलाहाबाद



प्रकाशक—हंस प्रकाशन	इलाहाबाद
मुद्रक—सम्मेलन मुद्रणालय	इलाहाबाद
आवरण सज्जा—कृष्ण चन्द्र	श्रीवास्तव
प्रथम संस्करण—प्रेमचंद स्मृति दिवस १९६२	

मूल्य—पन्द्रह रुपया

अनुक्रम

भूमिका

प्रेमचन्द-साहित्य के सभी पढ़नेवाले जानते हैं कि मुंशी प्रेमचन्द ने पन्द्रह-बीस साल तक उर्दू में लिखने के बाद हिन्दी में लिखना शुरू किया। लेकिन क्या लिखा और कब लिखा इसके बारे में जनसाधारण को तो छोड़ ही दीजिए, प्रेमचन्द-साहित्य के गम्भीर अध्येताओं को भी ज़्यादा कुछ नहीं मालूम। पहली बात तो यह है कि वह सब आरम्भिक रचनाएँ पुस्तक-रूप में निकलीं नहीं। जो निकलीं वह भी कुछ ही बरसों में खो गयीं क्योंकि जिस भी वजह से हो उनके बराबर निकलते रहने का सिलसिला नहीं क़ायम हो सका। खुद मुंशीजी ने भी उनको या उनकी स्मृति को जीवित रखने का कोई प्रयत्न नहीं किया। कभी अगर किसी ने पूछा भी तो बहुत अनमने ढंग से जवाब देकर बात को टाल दिया। २९ जनवरी १९२१ को उन्होंने अपने दोस्त इम्तियाज़ अली 'ताज' को जवाब देते हुए लिखा था—'हाँ हमखुर्मा व हमसवाब और किशना वगैरह मेरी इब्तदाई तसानीफ़ हैं। पहली किताब तो लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस ने छापा की थी दूसरी किताब बनारस के मेडिकल हाल प्रेस ने। ये ग़ालिबन् सन् १९   की तसानीफ़ हैं। मुंशी दयानरायन निगम को एक पत्र में अपना संक्षिप्त जीवनवृत्त देते हुए उन्होंने ७ जुलाई १९२१ को लिखा था—सन् १९ १ से लिटरेरी ज़िन्दगी शुरू की। रिसाला ज़माना में लिखता रहा। कई साल तक मुतफ़र्रिक़ मज़ामीन लिखे। सन् १९ ४ में एक हिन्दी नाविल 'प्रेमा' लिखकर इण्डियन प्रेस से छापा कराया

'प्रेमा' मुंशीजी ने खुद हिन्दी में लिखा होगा इस बात को मानने में थोड़ी दिक़्क़त कुछ मुंशीजी के इस ख़त की वजह से पैदा होती है जो उन्होंने ४ सितम्बर १९१४ को मुंशी दयानरायन निगम को लिखा था—'प्रताप' के इसरार से मजबूर होकर एक मुख्तसर-सा क़िस्सा हिन्दी में उसके विजयदशमी नम्बर के लिए लिखा है। हिन्दी लिखनी तो आती नहीं मगर कुछ क़लम तोड़-मोड़ किया है।

जिस आदमी को १९१४ में 'एक मुख्तसर-सा क़िस्सा' लिखने भर को हिन्दी नहीं आती उसने १९ ७ में पूरा एक नाविल हिन्दी में कैसे लिखा?

अन्दाज़ यही होता है कि मुंशीजी ने अपने उर्दू क़िस्से 'हमखुर्मा व

हमसवाब' का हिन्दी अनुवाद अपने किसी दोस्त से करवा लिया होगा और शायद खुद भी एक नज़र डाल ली हो। 'हमखुर्मा व हमसवाब' के प्रकाशन का वर्ष तो ठीक-ठीक कहीं से न मालूम हो सका क्योंकि खुद किताब पर वह कहीं दर्ज नहीं है। मेरे पास जो प्रति है वह उसका दूसरा संस्करण है। नवलकिशोर प्रेस में मुझे जो प्रति देखने को मिली वह भी उसके दूसरे संस्करण ही की थी। किसी पर प्रकाशन का वर्ष अंकित नहीं है। नवलकिशोर प्रेस में ऐसा कोई रिकार्ड नहीं मिला जिससे इस बात का पक्का पता चल सकता। पटना की खुदाबख्श लाइब्रेरी में इसका पहला संस्करण है लेकिन उस पर भी प्रकाशन का वर्ष नहीं छपा है।

ऐसी स्थिति में अनुमान ही किया जा सकता है। लेकिन अनुमान के लिए आधार है। उसका पहला विज्ञापन सितम्बर १९०६ के 'ज़माना' में मिलता है और फिर बराबर मिलता है। इससे यह नतीजा निकालना शायद बहुत ग़लत न होगा कि 'हमखुर्मा व हमसवाब' १९०६ के मध्य में कभी निकली होगी। यानी 'प्रेमा' से पहले क्योंकि 'प्रेमा' १९०७ में निकली जैसा कि आप स्वयं उस पर अंकित देखेंगे — १९०४ में निकलने की बात मुंशीजी ने ग़लत लिखी है।

उपन्यास का पहला मसौदा उर्दू में तैयार करने का तरीक़ा मुंशीजी ने बहुत बाद तक बनाये रखा। 'सेवासदन' (१९१९) का पहला मसौदा उर्दू में है। 'प्रेमाश्रम' (१९२१) का पहला मसौदा उर्दू में है। 'रंगभूमि' (१९२५) मुंशीजी के उपन्यासों में पहला है जिसका पहला मसौदा हिन्दी में लिखा गया। लिहाज़ा अगर 'हमखुर्मा व हमसवाब' और 'प्रेमा' के साथ भी यही बात हुई हो तो कोई ताज्जुब नहीं।

इस संकलन में आप इन दोनों उपन्यासों को पायेंगे। हमें यह निश्चय करने में थोड़ा समय लगा कि हम इन दोनों उपन्यासों को छापें या किसी एक को ही छापकर संतोष कर लें। लेकिन फिर हमने यही निश्चय किया कि इन दोनों को ही छापना ठीक होगा क्योंकि ये दोनों ही नाम जिज्ञासु पाठकों के सामने आते रहे हैं और शायद अपने पूर्ण सन्तोष के लिए वे इन दोनों को ही देखना चाहेंगे। वैसे दोनों के कथानक में थोड़ा-सा अन्तर भी मिलता है। पर हमारे इस निश्चय के पीछे प्रेमचन्द-साहित्य के गम्भीर अध्येताओं की जिज्ञासा का शमन ही विशेष कारण रहा है। दोनों ही पुस्तकें अपने अविकल रूप में छापी जा रही हैं।

'असरारे मआबिद' (देवस्थान रहस्य) का हवाला मुझको दो-एक उर्दू मालूमात-ग्रन्थों में देखने को मिला लेकिन बस इतना ही कि 'असरारे मुहब्बत (!) नाम का एक क़िस्सा मुंशीजी का बनारस से निकलनेवाले उर्दू साप्ताहिक 'आवाज़ए ख़ल्क़' में सिलसिलेवार निकला। इतना ही सूत्र काफ़ी हुआ और इसे एक बहुत बड़ा शुभ लक्षण मानना चाहिए कि उस पर्चे की फ़ाइल मिल गयी। यह एक निहायत गुमनाम-सा पर्चा था जिसकी फ़ाइल खुद उसके दफ़्तर में ही मिल सकती थी अगर मिलती, दूसरी किसी जगह उसके मिलने की क़तई उम्मीद नहीं थी। नसीब अच्छा था जो यह फ़ाइल अब तक वहाँ सुरक्षित रही आयी — बीच का एक अंक गुम हो गया है जिसका संकेत यथास्थान दे दिया गया है।

मुंशीजी की जो रचनाएँ अब तक मिली हैं उनमें 'असरारे मआबिद' ही सबसे पुरानी रचना है और यह एक विचित्र संयोग है कि इस क़िस्से की पहली क़िस्त ८ अक्तूबर १९०३ के अंक में छपी — तैंतीस साल बाद ठीक इसी दिन मुंशीजी का देहान्त हुआ।

यह क़िस्सा बिलकुल सरशार के रंग में लिखा गया है, लेकिन बाद के मुंशी प्रेमचन्द की झलकियाँ भी उसमें भरपूर हैं। पता नहीं क्यों मुंशीजी ने बीच ही में उसे ख़त्म कर दिया। कथानक बहुत ढीला होने की वजह से उसे जहाँ मन चाहे ख़त्म कर देने की थोड़ी-सी सुविधा तो ज़रूर है, ताहम लगता है कि क़िस्सा पूरा नहीं हुआ।

इस क़िस्से को बिलकुल ज्यों का त्यों न छापकर मैंने उसका हिन्दी रूपान्तर करना ठीक समझा क्योंकि भाषा कहीं-कहीं हिन्दी पाठकों के लिए बहुत क्लिष्ट हो गयी है। लेकिन इतना और भी कह देना ज़रूरी है कि यह रूपान्तर बहुत हल्का रूपान्तर है। कम से कम शब्दों और वाक्यांशों को बदला गया है और वह भी इस तरह कि न केवल अर्थ की या भाव की रक्षा हो बल्कि मुंशीजी की शैली की भी पूरी-पूरी रक्षा हो। सिवाय की शेष भाषा से बिलकुल बेमेल एक टुकड़ा जो बेहद फ़ारसी-बोझिल है और किसी ख़ास मक़सद से (शायद कायस्थों की उर्दू का मज़ाक़ उड़ाने के लिए) दिया गया जान पड़ता है, ज्यों का त्यों दे दिया गया है। उतने शब्दों का अर्थ भी नीचे फ़ुटनोट में देना बहुत बेढंगा मालूम होता इस ख़याल से उसका केवल सारांश उस टुकड़े के बाद दे दिया गया है।

'रूठी रानी' नाम का क़िस्सा भी जो अप्रैल से लेकर अगस्त १९०७ तक 'ज़माना' में निकला था हिन्दी के लिए बिलकुल नया है। लिहाज़ा वह भी पेश किया जा रहा है बहुत कुछ ज्यों का त्यों।

मुंशीजी की आरम्भिक रचनाओं की खोज-ढूँढ का काम इस तरह बहुत कुछ पूरा हो जाता है। अब बस एक उपन्यास बचता है 'किशना' जो बहुत तलाश करने पर भी अब तक कहीं नहीं मिला। बहरहाल तलाश अब भी जारी है। 'किशना' का पहला इश्तहार अगस्त १९०७ और समालोचना अक्तूबर-नवम्बर १९०७ के 'ज़माना' में मिलती है। उम्मीद है कि अगले दो-एक वर्षों में वह भी कहीं न कहीं मिल ही जायगी।

'प्रतापचन्द्र' नाम के किसी उपन्यास का ज़िक्र करनेवाले बस एक सज्जन हैं—बशेश्वर नाथ 'बेताब' बरेलवी। उसका और कहीं कोई ज़िक्र मेरे देखने में नहीं आया इसलिए समझ में नहीं आता कि बेताब साहब की सनद को कहाँ तक ठीक या एतबार के क़ाबिल माना जाय। उन्होंने भी बस इस किताब का नाम ही लिया है दूसरी कोई तफ़सील उसके बारे में नहीं दी। अगर इस नाम की कोई किताब मुंशीजी ने सच मुच लिखी है तो वह शायद 'जल्वए ईसार' या 'वरदान' का कोई आरम्भिक रूप हो। इस अनुमान का आधार दो बातें हैं—एक तो यह कि इनका भी नायक प्रतापचन्द्र नाम का ही आदमी है और दूसरे यह कि मुंशीजी के लिए अपने किसी पुराने क़िस्से को फिर उठाकर नये रूप में लिख डालना कोई नयी बात नहीं। 'प्रेमा' को ही उन्होंने पूरे बीस बरस बाद फिर से उठाकर नये रूप में 'प्रतिज्ञा' के नाम से लिखा है।

पाकिस्तान के अपने दोस्त ज़हीर फ़तेहपुरी की मेहरबानी से मुझे 'हमखुर्मा व हमसवाब' सबसे पहले देखने को मिला। उन्हीं की भेजी हुई प्रति से मैंने काम लिया है और मैं उनका एहसानमन्द हूँ।

'असरारे मआबिद' की प्राप्ति के लिए मैं 'आवाज़ए ख़ल्क़' के वर्तमान अधिकारियों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ।

'प्रेमा' की प्रति मुझे काशी नागरीप्रचारिणी सभा के पुस्तकालय में मिली। उन्होंने मुझे सुविधापूर्वक उसका उपयोग करने दिया इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

अमृतराय

★ ★ ★

असरारे मआबिद

उर्फ़

देवस्थान-रहस्य

रँगीले बलम काहे करो चतुराई।
रँगीले बलम काहे करो चतुराई॥ रँगीले बलम०॥

रात का वक़्त। अभी इस काली बला की पहली ही मंजिल है। दूर से मीठे सुरों की आवाज सुनायी पड़ती है। मालूम होता है कि कोई कोकिल-कंठी गौरवर्णा, सुन्दरी प्रेमिका खूब दिल तोड़-तोड़कर गा रही है, बयानों को भाव बता-बताकर सुना रही है। तारीफ़ों की बौछार हो रही है। सदक़ों की भरमार हो रही है। वाह-वाह की सदा बुलन्द है। हर शख्स का दिल खुर्सन्द है। महफ़िल के लोग संगीत की शराब से मख़मूर हैं। जलसे के श्रीमंत अंगूरी शराब से चूर हैं। महफ़िल का चिराग़ दिल की जलन के मारे बेक़रार है, परवाना उस पर जान से निसार है। तमाम मेम्बर मदहोश हैं। दीवार भी हमातनगोश है।

दोस्तो! आपको शायद यह ख़याल होगा कि ऐसी दिल लुभाने वाली सदा कहाँ बुलन्द है? किस खुशनसीब के भाग जागे हैं? किस बदनसीब के रंजो-ग़म दूर भागे हैं? हाँ, यह आप जानिये क्यों पहले पूरी बात तो सुन लीजिए, फिर सिर और गर्दन हिलाइयेगा। एतराज निकालियेगा। यह आवाज श्री महादेव त्रिमेश्वरनाथ के मन्दिर से आ रही है।

यह सुन्दर मन्दिर सरयू नदी के किनारे है। इसके आस-पास की हरियाली ऐसी प्राणदायिनी और ऐसी आत्मा को सुख पहुँचानेवाली है कि अमरीका और स्विट्ज़रलैण्ड के मनमोहक दृश्य भी इसके आगे पानी भरते हैं। इसके नामों को सुनकर कानों पर हाथ धरते हैं। एक तरफ़ नदी लहरें मार रही है, रात के वक़्त सफ़र करनेवाली किश्तियाँ पाल

डोले चली आ रही हैं और उनके तख़्तों पर धीमे धीमे टिमटिमाते हुए चिराग़ उम्मीद की तरह धुंधले नज़र आते हैं। दरिया की लहरें बड़े जोशो-ख़रोश से उठती हैं और करारों से टक्कर खाकर रुक जाती हैं। बिलकुल उसी तरह जैसे कोई गुस्सावर और झल्लायी हुई फ़ौज किसी मज़बूत और पायेदार क़िले पर हमला कर रही हो मगर उसका तो बाल भी बाँका न कर सके खुद ही अपना-सा मुँह लेकर रह जाये। दूसरी तरफ़ कुछ हरे भरे पेड़ अपनी ऊँची शाख़ों को हवा में उठाये मस्ती से झूम रहे हैं और इस बात का स्पष्ट प्रमाण दे रहे हैं कि जो ज़माने की लहरों ने अनगिनत हेकड़ों को जड़ से खोदकर फेंक दिया और हज़ारों मज़बूत लोगों का नाम हस्ती के पन्ने से मिटा दिया मगर उन थोड़े से नामवालों का कुछ भी न बिगाड़ सके जिनका नाम आज तक दोपहर के सूरज की तरह चमक रहा है और अनन्त काल तक यों ही चमकता रहेगा। पास-पड़ोस के गाँव बिलकुल अँधेरे हो रहे हैं। इस मन्दिर में दाख़िल होते ही एक बड़ा फाटक मिलता है जिस पर दरबानों की मूर्ति इस सफ़ाई से खींची गयी है कि पहली नज़र में इन्सान ज़रूर धोखा खा जाये। फाटक से आगे बढ़कर एक लम्बा-चौड़ा सहन है जिस पर हरी-हरी घास ख़ूब सुहावनी मालूम होती है। इस सहन के सामने महादेव जी का आलीशान मन्दिर है और उसके इधर उधर नफ़ीस इमारतें बनी हुई हैं जिनमें से कोई तो गोशाला है कोई धर्मशाला कोई मठ और कोई महंत जी का निवासस्थान। महंत जी की बैठक का कमरा तरह-तरह की सुन्दर चीज़ों से सजा हुआ है। फ़र्श पर संगमरमर के ख़ूबसूरत तख़्ते जड़े हुए हैं। दीवारों की पच्चीकारी इस इमारत की तमाम ख़ूबियों को बढ़ाती है। एक-एक गुल-बूटा देखकर अक़्ल दंग हो जाती है। जो सजावट और नफ़ासत यहाँ देखने में आती है शायद शरीफ़ों और अमीरों के पुरतकल्लुफ़ कमरों में मुश्किल से नज़र पड़ेगी। हर क़िस्म की क़ीमती चीज़ें तरह-तरह के सजावट के सामान यहाँ पर सुशोभित हो रहे हैं और उनका मुनासिब मौक़ों पर सजाया जाना मकान मालिक की सुरुचि और परिष्कृत रुचि का प्रमाण देता है।

इस वक़्त श्रीमान् बाबा त्रिलोकीनाथ माथे पर लाल चन्दन का टीका

लगाये पीले रेशम की भड़कीली मिर्ज़ई डाटे बैठे हैं। गले में अनमोल मोतियों की एक मोहनमाला पड़ी हुई है। सिर पर एक जड़ाऊ टोपी अजीब शान से रक्खी हुई है। उनके ख़ूनी दाँतों ने बेचारे बेगुनाह पान के बीड़ों का ख़ून इतना ज़्यादा किया है कि ख़ून की लाली क़ातिलों के गले का हार होकर बार-बार उनकी तरफ़ उँगली दिखा रही है और चूँकि ये जल्लादी दाँत ख़ून करने के आदी हो गये हैं, उन्हें बिना किसी बेगुनाह के ख़ून से हाथ रँगे चैन नहीं और इस समय वे बड़ी तत्परता से अपने काम में लगे हैं। यह जो आप महंत जी के माथे पर लाल निशान देख रहे हैं यह चन्दन के निशान नहीं बल्कि इस बात को सिद्ध कर रहे हैं कि हज़रत ने न्याय और धर्म का ख़ून कर डाला है। आप जो इनके गले में मोहनमाला देख रहे हैं यह असल में लोभ का फंदा है जो आपको ख़ूब कसकर जकड़े हुए है। सिर पर तिरछी रखी हुई टोपी आपकी अक़्ल के तिरछेपन को ज़ाहिर कर रही है। आपके शरीर पर रंग-बिरंगी मिर्ज़ई नहीं है, बल्कि अंधविश्वासियों को सब्ज़ बाग़ दिखाने का ढंग है जो आपके हृदय के अन्धकार और कालिमा के ऊपर पर्दे की तरह पड़ा हुआ है या मूर्खों को लाल परवाना दिखाने का औज़ार है जो भीतर की कालिमा को संन्यास और वैराग्य के पर्दे में छिपा रहा है, या धोखे की टट्टी है जो भक्तों को जाल में फँसाने के लिए फैलायी गयी है। त्रिलोकीनाथ यह अमीरों जैसा ठाट-बाट बनाये गावतकिया लगाये बड़ी आन-बान से सुशोभित हो रहे हैं। उनके दाहिने तरफ़ एक और महानुभाव आसीन हैं। यह महाशय उम्र में महंत से कुछ बड़े होंगे क़द भी उनसे कुछ ऊँचा होगा। इन दोनों साहबों के अलावा और लोग भी मौजूद हैं, मगर कोई ऐसा नहीं जिसके चेहरे से पवित्रता न टपकती हो, जिसने बाबापन का तमग़ा न हासिल किया हो। इन लोगों के शरीर ही से प्रकट है कि ये परले सिरे के पेटू हैं। इसमें तनिक भी अति रंजना नहीं है कि उनका पेट नाँद से कम नहीं। गाल इतने फूले हुए हैं कि लगता है हड्ड ने काट खाया है। उस पर तुर्रा यह है कि मुँह में पान ठुँसा हुआ है। महफ़िलवालों का हाल तो हम कुछ विस्तार के साथ बतला चुके, अब महफ़िल की शान और महफ़िल की रौनक़ का भी कुछ ज़िक्र सुन

लीजिए। त्रिलोकीनाथ के सामने एक फूल जैसे मुखड़ेवाली बड़े-बड़े महर्षियों का तप भंग करनेवाली सबको तबाह करनेवाली कमसिन छोकरी बड़े नाज़ो-अन्दाज़ से विराज रही है। यह परी उन सब प्रशंसाओं की अधिकारिणी है जो कवियों की अतिशयोक्ति में सदियों पसीना बहाने और जान खपाने के बाद पककर निकली है। उसके गहने-कपड़ों का क्या पूछना। मालूम होता है कि आसमान से कोई अप्सरा उसके भेष में उतर आयी है। इस परी के साथ साज़िन्दे ग्रह-मण्डल की तरह जमा हैं। तबले पर थाप पड़ रही है। जोड़ी बज रही है। कमरे का दरवाज़ा अफ़ीमची की आँख की तरह बन्द है।

स्वामी जी — (त्रिलोकीनाथ के असली दोस्त) ओ हो हो क्या मज़ा पाया है!

छोकरी (मुस्कराकर) — तसलीम यह आपकी क़द्र-अफ़्ज़ाई है।

त्रिलोकी — वाह वाह वाह क्या ख़ूब! ईश्वर जानता है, यह मज़ा आ रहा है जैसे कोई अप्सरा गा रही हो।

छोकरी (आँखें मटकाकर) —

मोहे आवत सौतिन घर जाइयो।
अरे हाँ मोहे आवत सौतिन घर जाइयो
भला ई है कौन भलाई।
रँगीले बलम काहे करो चतुराई॥ काहे करो०॥

त्रिलोकी — हाय हाय ज़ालिम क़त्ल कर डाला! क्यों स्वामी जी कैसा रंग गठा?

स्वामी — भाई हमसे इस वक़्त कुछ न पूछो किस अभागे के होश हवास ठिकाने हैं।

त्रिलोकी — अजी यह चीज़ ही ऐसा है कि पत्थर हो तो वह भी पिघल जाय हमारी-तुम्हारी क्या बात है?

स्वामी — उस्ताद मेरा तो दम निकला चाहता है। बुरी गत हो रही है।

तिलोकी (छोकरी की तरफ मुखातिब होकर)—कहो बीबीजान हमारे स्वामी जी का तो अब दम टूटा चाहता है।

छोकरी (एक खास अन्दाज से मुस्कराकर)—भला मेरा वार भी कभी खाली जाता है।

तिलोकी—अच्छा अच्छा इस वक्त घाव पर नमक छिड़क दो। जिन्दा हैं तो हम भी देख लेंगे।

छोकरी—जरा मुँह तो देखूँ? बस इसी पर समझ लेने का दावा है? यह कहकर उस रूपसी ने फिर सुर भरा—

सास-ननद मोहिं बरछी मारें।
अरे सास-ननद मोहिं बरछी मारें॥
भला का पहुँ मोका बलाई।
रँगीले बलम काहे करो चतुराई॥

तिलोकी—वाह वाह, क्या बात है!

छोकरी (रूमाल से चेहरे का पसीना पोंछकर)—कहिये बाबा जी आज क्या कंजूसी पर कमर बाँधी है? क्या कुछ मरदाना वगैरह न पिलवाइयेगा?

तिलोकी—हाय जान साहब तुम्हारे लिए तो जान तक हाजिर है।

यह कहकर बाबा जी उठे, एक अलमारी का खाना खोला जिसमें हर तरह की शराबों की बहुत-सी बोतलें बड़े करीने से चुनी हुई रखी थीं। कई बोतलें निकालीं नमकीन चटपटी चीजों का भी प्रबन्ध किया गया।

स्वामी—शराब पीने का मजा तो तभी मिलता है जब कोई मेहरी का ऐसा कोमल हाथ गिलास भरकर दे और यार लोग आँख मूँदकर सब का सब एक ही दम में चट कर जायें—क्यों जान साहब जरा इधर देखो हमारी खातिर से इतना ही करो।

छोकरी (अँगूठा दिखाकर)—मेरी बला जाती है। अल्लाह की

कीजिए। त्रिलोकीनाथ के सामने एक फूल जैसे मुखड़ेवाली बड़े-बड़े ऋषियों का तप भंग करनेवाली सबको तबाह करनेवाली कमसिन छोकरी बड़े नाजो-अन्दाज से विराज रही है। यह परी उन सब प्रशंसाओं की अधिकारिणी है जो कवियों की अतिशयोक्ति ने सदियों पसीना बहाने और खाक छानने के बाद गढ़कर निकाली है। उसके गहने-कपड़ों का क्या पूछना। मालूम होता है कि आसमान से कोई अप्सरा उसके भेष में उतर आयी है। इस परी के साथ साजिन्दे ग्रह-मण्डल की तरह जमा हैं। तबले पर थाप पड़ रही है। जोड़ी बज रही है। कमरे का दरवाजा शहीमची की आँख की तरह बन्द है।

स्वामी जी—(त्रिलोकीनाथ के असली दोस्त) ओ हो हो क्या गला पाया है।

छोकरी (मुस्कराकर)—तसलीम यह आपकी कद्र-अफ़्ज़ाई है।

त्रिलोकी—वाह वाह वाह क्या खूब! ईश्वर जानता है, वह मजा आ रहा है जैसे कोई अप्सरा गा रही हो।

छोकरी (आँखें मटकाकर)—

> मोहे लाजत सौतिन घर जाऐं।
> अरे हाँ मोहे लाजत सौतिन घर जाएँ
> भला है है कौन भलाई।
> रँगीले बलम काहे करो चतुराई॥ काहे करो॥

त्रिलोकी—हाय हाय जालिम क़त्ल कर डाला! क्यों स्वामी जी कैसा रंग जमा?

स्वामी—भाई हमसे इस वक्त कुछ न पूछो किस जमाने के होश हवास ठिकाने हैं।

त्रिलोकी—अजी यह गीत ही ऐसा है कि पत्थर हो तो वह भी पिघल जाय हमारी-तुम्हारी क्या बात है?

स्वामी—उस्ताद मेरा तो दम निकला चाहता है। बुरी गत हो रही है।

त्रिलोकी (छोकरी की तरफ मुखातिब होकर)—कहो बीबीजान हमारे स्वामी जी का तो अब दम टूटा चाहता है।

छोकरी (एक खास अन्दाज से मुस्कराकर)—मजा मेरा वार भी कभी खाली जाता है।

त्रिलोकी—अच्छा अच्छा इस वक्त घाव पर नमक छिड़क दो। जिन्दा है तो हम भी देख लेंगे।

छोकरी—जरा मुँह तो देखूँ? बस इसी पर छमक लेने का दावा है? यह कहकर उस कमसी ने फिर सुर भरा—

लाल-नगर मोहें बरछी मारें।
अरे लाल-नगर मोहें बरछी मारें॥
लला का चाहें मोला बलाई।
रँगीले बलम कछु करो चतुराई॥

त्रिलोकी—वाह वाह क्या बात है!

छोकरी (रूमाल से चेहरे का पसीना पोंछकर)—कहिये बाबा जी आज क्या कंजूसी पर कमर बाँधी है? क्या कुछ परसाद वगैरह न मिलेगा?

त्रिलोकी—हाय जान साहब तुम्हारे लिए तो जान तक हाजिर है।

यह कहकर बाबा जी उठे एक अलमारी का ताला खोला जिसमें हर तरह की शराबों की बहुत-सी बोतलें बड़े करीने से चुनी हुई रखी थीं। कई बोतलें निकालीं नमकीन चटपटी चीजों का भी प्रबन्ध किया गया।

स्वामी—शराब पीने का मजा तो अभी मिलता है जब कोई मेहरू रुखा कोमल हाथ गिलास भरकर दे और यार लोग बीच घूरकर सब का सब एक ही दम में चट कर जायें—क्यों जान साहब जरा हमार देखो हमारी खातिर से इतना ही करो।

छोकरी (अँगूठा दिखाकर)—मेरी बला जाती है। अल्लाह की

जाम मैं भरूँ और आप पियें। ऐसी खातिरदारी को दूर ही से सलाम है।

त्रिलोकी — हम लोगों का दिल न तोड़ा करो जान साहब हम लोग चोट खाये हुए हैं।

गरज कि बड़ी मान-मनौवल के बाद उस कमसिन छोकरी ने शराब उँडेली और यार लोग इहलोक और परलोक को भूलकर गिलास पर गिलास चढ़ाने लगे।

त्रिलोकी — भाई, ईश्वर जानता है, ऐसी खुशी हासिल हुई कि जैसे स्वर्ग का द्वार खुल गया।

छोकरी — जी हाँ जरूर, बहिश्त का दरवाजा आप जैसे पियक्कड़ों के वास्ते ही तो खुलेगा।

स्वामी जी — जान साहब हमको स्वर्ग-नरक लेकर चाटना थोड़े ही है। तुम जिस दिन हमारी बगल गरम करती हो उस दिन हम समझते हैं कि स्वर्ग का दरवाजा खुल गया।

छोकरी — अब आप बहुत बढ़ चले हैं। यही मसल हुई कि मुँह लगाये डोमनी गावे ताल बेताल। मैं तरह देती जाती हूँ और आप बोली बोले जाते हैं। वल्लाह अब तुम्हारी शामत आया ही चाहती है।

स्वामी — इस वक्त मेरा दिमाग सातवें आसमान पर है।

त्रिलोकी — और मेरा दिमाग रसातल में है।

स्वामी — मेरा दिमाग सातवें आसमान पर इस वजह से है कि आज जान ने मुझ पर करम किया और मुझको चूमने की इजाजत दे दी।

त्रिलोकी — और मेरा दिमाग रसातल में इस वजह से है कि आज जान ने इनकार करके दिल तोड़ दिया।

छोकरी — मालूम होता है कि तुम लोगों की खोपड़ी खुजला रही है। लाओ तो जरा सहला दूँ।

त्रिलोकी — खोपड़ी सहलाओ चपतें जमाओ मगर आज दिन न टले। मुराद जरूर पूरी करो।

अभी बेचारे के मुँह से पूरी बात भी न निकलने पायी थी कि उस छोक

लड़की ने उठकर वह तड़ाके की टीप जड़ी कि तमाम कमरा गूँज उठा और वह पहाड़ टोपी एक तरफ को गिर पड़ी।

छोकरी — और लोगे बचा और लोगे। चले थे मुझसे ठिठोली करने। (कहकहा लगाती है)

त्रिलोकी — मेरी जान अगर तुम कत्ल भी कर डालो तो उफ़ न करें। यह खोपड़ियाँ ऐसे कितने पटाखे खाया करती है मगर जरा भी असर नहीं होता। कुछ कांच की तो बनी नहीं है कि टूट जायेगी हाँ शायद तुम्हारे नाजुक हाथ को कुछ ठेस लगी हो।

कथावाचक — क्या कहने हैं जिस हाथ की टीप से तमाम कमरा गूँज उठे उसे नाजुक कहना आप ही का हिस्सा है।

गरज कि बड़ी देर तक आपस में नोक झोंक होती रही। आखिर कार शराब ने सबके होश-हवास को मार भगाया और इन बेवकूफ पीने वालों को खूब ठिगनी का नाच नचाया। जब सुरूर जरा ज्यादा हुआ तो स्वामी जी ने उस सुन्दरी का हाथ पकड़कर उसे अपनी गोद में खींचा। त्रिलोकीनाथ भी चुपके से बढ़ आये। कमसिन छोकरी ने 'छोड़ दे छोड़ दे तेरे पैयाँ परूँ, छोड़ दे छोड़ दे पैयाँ परूँ छोड़ दे' कहकर स्वामी जी को नाजुक-नाजुक हाथों से थपतियाना शुरू किया।

कथावाचक — अब तो आपको हाथ की नजाकत का हाल बखूबी ही मालूम हो गया होगा।

स्वामी जी बेशुमार थपड़ें खाते-खाते थपरपरट्ट बन गये लेकिन इस खयाल से कि कहीं मेरा खिसियानापन जाहिर न हो जाय और यह लोग आड़े हाथों न लेने लगें बेचारे खामोश होकर सब कुछ सहते जाते थे।

छोकरी (एक और जमाकर) — देखो देखो छोड़ दो नहीं तो ठीक नहीं होगा। (धीरे से) क्यों जामे से बाहर हुए जाते हो? मस्ती के मारे मरे जाते हैं। पहले इन समाजियों को तो दूर करो। इस तरह हथेली पर सरसों नहीं जमायी जाती।

त्रिलोकी (समाजियों से) — तुम लोग बड़े बदतमीज हो जो बड़े बैठे हो क्या गर्दनिया खाओगे?

बूढ़ा समाजी — बिस्मिल्लाह हुजूर खुशी से शौक फ़रमायें बन्दा हरगिज बाड़े न आयेगा। अगर गुलाम को खबर होती कि मेरे सबब से हुजूर के ऐश में रुकावट हो रही है तो मैं कभी का चला गया होता। हुजूर ही के क़दमों की बरकत से बड़े-बड़े रईसों के दरबारों और महफ़िलों में हाजिर होता हूँ और जो हुनर खुदावन्द करीम ने इस नाचीज को अता फ़रमाया है, उसी से हुजूर की तबीयत बहलाता हूँ। हुजूर बन्दापरवर, इतनी उम्र गुलाम की बड़े-बड़े अमीरों और शरीफ़ों के क़दमों तले बसर हुई है मगर जो अमीराना अन्दाज और शरीफ़ाना तर्ज व तरीका हुजूर के दरबार में दिखायी पड़ता है, शायद और किसी को मयस्सर भी न हो। और हो क्योंकर, आप पीढ़ियों के रईस हैं हुजूर

त्रिलोकी — स्वामी जरा इस मरदूद को देखा तो एक बुड्ढा। बेहूदा फ़िजूल बक-बक करके मगज चाट गया। किसी तरह जाता ही नहीं। निकाल बाहर करो मरदूद को।

समाजी — जरा हुजूर मामयशूर इस गुलामे बिरम नाजरीदा कि चन्द नसीहतें ग़ौर से

त्रिलोकी — चुप रह उल्लू का पट्ठा आया है यहाँ से बुकरात बनके। यही गँवारू मसल है कि मौंडू माव न जाने अपने दीन पसर से काम। क्या जिन्दगी भर भाड़ झोंकते रहे या घास काटते रहे। बाल सफ़ेद हो गये मगर मौके-महल की तमीज न आयी न आयी।

समाजी — हुजूर की यह सख्त बातें इस नाचीज को बहुत मीठी मालूम होती हैं। आखिरकार तो हुजूर के नमक पर पला हुआ गुलाम ठहरा। अगर इस नाचीज से कोई ऐसी बात हो गयी हो जो आपकी तबीयत के खिलाफ़ हो तो हाथ जोड़कर विनती है कि उसे आप अपने दिल से निकाल डालिये।

त्रिलोकी (झल्लाकर) — भई, इस बेईमान की चिकचिक ने तो नाहक परीशान कर दिया। न मालूम कहाँ की बातें पेट में भरी हैं। अरे मियाँ होश की आप इस वक्त हैं कहाँ यह कोई नया दरबार थोड़े ही है जो आप इस क़दर बहस-मुबाहसा कर रहे हैं। होश में आइये।

समाजी—हुजूर बन्दे की एक गुजारिश सुनने की तकलीफ़ कीजिए। एक दफ़ा इस नाचीज को नवाब साहब बहादुर की महफ़िल अर्शमंजिल में हाजिर होने का मौक़ा मिला। नवाब साहब बड़े ही दरियादिल खुश मजाक़ और हँसोड़ तबीयत के थे। ज्यों ही नाचीज ने महफ़िल में क़दम रक्खा उन्होंने फ़रमाया—वल्लाह, क़िब्ला इधर तशरीफ़ लाइये। वल्लाह आँखें आपको ढूँढ रही थीं। इस नाचीज ने फ़ौरन कहा—हुजूर, क़िब्ला की कड़ी नजरों से मालूम होता है। अब देखिये नजरों के सामने। इस जवाब महफ़िल के तमाम लोग हँसी के मारे लोट-लोट गये वो था फ़रमाइशी क़हक़हे पड़े कि कमरा हिल उठा। हुजूर और फ़रमायें कि हाज़िरीन से एक हज़रत ने पूछा कि क्यों साहब यह जो हँसते वक्त लोग बार बार क़हक़हा मारा करते हैं उसकी क्या वजह है? फ़िदवी ने छूटते ही कहा—सुनिये क़िब्ला आदमियों के दिल में हर वक्त किसी न किसी क़िस्म का मजाक़ रहता है और चूँकि खुशी और रंज फ़ितरत से एक-दूसरे के उल्टे हैं इसलिए जब खुशी का दौर होता है तो वह पहले आती है, डाँट बतलाती है ताकि रंज फ़ौरन डरकर भाग जाय। इस लतीफ़े पर लोग यहाँ तक हँसे कि पेट में बल पड़-पड़ गये।

अभी मिर्ज़ा साहब का तक़रीर का सिलसिला ख़त्म नहीं हुआ था और क़रीब था कि वह कोई नया चिगूफ़ा छिलायें मगर स्वामी जी ने धक्के देकर निकाल बाहर किया। शेख़ जी जब निकाल बाहर किये गये तो उनके साथियों ने भी रास्ता लिया। धीरे-धीरे पैंचकस्वामी जितने थे सबको धुत्कार बताई गयी और अब इस महफ़िल में स्वामी साहब और कमसिन छोकरी को छोड़कर कोई न रहा। इस तरह जब एकांत हो गया तो आपस में प्रेम और लगावट की गुपचुप बातें होने लगीं।

तिलोकी—स्वामी अब आज तो वादा पूरा करो। आ जाओ कलेजे में छिपा लूँ।

स्वामी—स्वामी हाथ जोड़ता हूँ आज खुशी से एक चुम्मा दे दो।

तिलोकी—देखें पहले किस भाग्यवान की क़िस्मत जागती है।

बूढ़ा समाजी — बिस्मिल्लाह हुजूर खुशी से शौक़ फ़रमायें बन्दा हरगिज आड़े न आयेगा। मगर गुलाम को खबर होती कि मेरे सबब से हुजूर के ऐश में रुकावट हो रही है तो मैं कभी का चला गया होता। हुजूर ही के क़दमों की बरकत से बड़े-बड़े रईसों के दरबारों और महफ़िलों में हाजिर होता हूँ और जो हुनर खुदावंद करीम ने इस नाचीज को अता फ़रमाया है उसी से हुजूर की तबीयत बहलाता हूँ। हुजूर बन्दापरवर, इतनी उम्र गुलाम की बड़े-बड़े अमीरों और शरीफ़ों के क़दमों तले बसर हुई है मगर जो अमीराना अन्दाज और शरीफ़ाना तर्ज व तरीक़ा हुजूर के दरबार में दिखायी पड़ता है, शायद और किसी को मयस्सर भी न हो। और हो क्योंकर, आप पीढ़ियों के रईस हैं हुजूर

त्रिलोकी — स्वामी ज़रा इस मरदूद को देना तो एक गुद्दा। बेहूदा फ़िजूल बक-बक करके मग़ज़ चाट गया। किसी तरह चलता ही नहीं। निकाल बाहर करो मरदूद को।

समाजी — ज़रा हुजूर सामयमूर इस गुलामे हिरस नाचरीदा कि मन्द मसीहतें गौर से

त्रिलोकी — चुप रह उल्लू का पट्ठा आया है यहाँ से बुकरात बनके। यही गँवारू मसल है कि मोंडू नाच न जाने अपने तीन पसर से काम। क्या जिन्दगी भर भाड़ झोंकते रहे या घास काटते रहे। बाल सफ़ेद हो गये मगर मौक़े-महल की तमीज न आयी न आयी।

समाजी — हुजूर की यह सख्त बातें इस नाचीज को बहुत मीठी मालूम होती हैं। आखिरकार तो हुजूर के नमक पर पला हुआ गुलाम ठहरा। अगर इस नाचीज से कोई ऐसी बात हो गयी हो जो आपकी तबीयत के खिलाफ़ हो तो हाथ जोड़कर विनती है कि उसे आप अपने दिल से निकाल डालिए।

त्रिलोकी (झल्लाकर) — भई, इस बेईमान की चिकचिक ने तो मग़ज़ परेशान कर दिया। न मालूम कहाँ की बातें पेट में भरी हैं। अरे मियाँ शेख जी आप इस वक्त हैं कहाँ यह कोई नया दरबार थोड़े ही है जो आप इस क़दर बहस-मुबाहसा कर रहे हैं। होश में आइये।

समाजी — हुजूर बन्दे की एक मुख्तसिर सुनने की तकलीफ़ कीजिए। एक दफ़ा इस नाचीज़ को नवाब साहब बहादुर की महफ़िल मर्दमशिनास में हाज़िर होने का मौका मिला। नवाब साहब बड़े ही दरियादिल खुश मज़ाक़ और हँसोड़ तबीयत के थे। ज्यों ही नाचीज़ ने महफ़िल में क़दम रक्खा उन्होंने फ़रमाया — वल्लाह किब्ला इधर तशरीफ़ लाइये। वल्लाह आँखें आपको ढूँढ रही थीं। इस नाचीज़ ने फ़ौरन कहा — हुजूर, क़िब्ला भी कहीं नज़रों से ओझल होता है। अब देखिये नज़रों के सामने। बस जनाब महफ़िल के तमाम लोग हँसी के मारे लोट-पोट गये और वो वो फ़रमाइशी क़हक़हे पड़े कि कमरा हिल उठा। हुजूर और फ़रमायें कि शाहिद से एक हज़रत ने पूछा कि क्यों साहब यह जो हँसते वक्त लोग ज़ोर से क़हक़हा मारा करते हैं उसकी क्या वजह है? ज़रीफ़ ने छूटते ही कहा — सुनिये क़िब्ला आदमियों के दिल में हर वक़्त किसी न किसी किस्म का मलाल रहता है और चूँकि खुशी और रंज फ़ितरत से एक-दूसरे के उल्टे हैं इसलिए जब खुशी का दौर होता है तो वह पहले आती है, डाँट बतलाती है ताकि रंज फ़ौरन डरकर भाग जाय। इस लतीफ़े पर लोग यहाँ तक हँसे कि पेट में बल पड़-पड़ गये।

अभी मियाँ साहब का तक़रीर का सिलसिला ख़तम नहीं हुआ था और क़रीब था कि वह कोई नया शिगूफ़ा खिलायें मगर स्वामी जी ने धक्के देकर निकाल बाहर किया। शेख जी जब निकाल बाहर किये गये तो उनके साथियों ने भी रास्ता लिया। धीरे-धीरे प्रेमकल्याणी जितने थे सबको दुत्कार बतायी गयी और अब इस महफ़िल में स्वामी महंत और कमसिन छोकरी को छोड़कर कोई न रहा। इस तरह जब एकांत हो गया तो आपस में प्रेम और बनावट की गुपचुप बातें होने लगीं।

त्रिलोकी — स्वामी जब आज तो वादा पूरा करो। आ जाओ कलेजे में बिठा लूँ।

स्वामी — जानी हाथ जोड़ता हूँ आज खुशी से एक चुम्मा दे दो।

त्रिलोकी — देखूँ पहले किस भाग्यवान की किस्मत जागती है।

छोकरी — अजी अलग हटकर बैठो, चले हो ठंडी गर्मियाँ जताने! न मालूम इन मरदुओं को इतना बात बनाना किसने सिखा दिया!

त्रिलोकी — मेरी जान हम तो तुम्हारे आशिक़ हैं, हम बात बनाना क्या जानें।

त्रिलोकी — मेरी जान क़समिया कहता हूँ कि न मालूम कितने दिनों से तुम्हारी प्यारी सूरत पर फ़िदा हूँ मगर तुम्हारा दिल ऐसा सख्त है कि अभी तक न पसीजा। हम तो तुम्हारे ऊपर जान दें और तुम हमसे यों भागी भागी फिरो! क्यों यही इन्साफ़ है?

स्वामी — करतार ईश्वर ने इन हसीनों की मिट्टी में बेचारे टूटे हुए दिल के मर्दों को सताने का कुछ माद्दा इकट्ठा कर रखा है। चाहे कोई ग़रज़ हो या न हो मगर इनको इस काम में ऐसा मज़ा आता है कि जब देखो इसी टोह में रहते हैं। हम तो इनके बेदामों गुलाम बनने को तैयार हैं और इनकी भी ज़िद है कि हम अपनी बात बनायेंगे।

छोकरी (हसरतभरे लहजे में) — अजी यह सब चाली-पीली बातें हैं। इस ज़बानी फ़लसफ़े से काम नहीं चलता। मैं ऐसी नन्ही भी नहीं हूँ कि अपने फ़ायदे की बात न समझूँ। यो अभी पन्द्रहवें साल में हूँ मगर तुम लोगों की बेवफ़ाइयाँ खूब देख चुकी। तुम लोगों की तो यही हालत है कि मुँह पर झाला जानी और पीठ पीछे दुश्मन जानी — मुँह में और, मन में और। मुँह से तो जो जो बातें करोगे कि ज़मीन और आसमान के कुलाबे मिला दोगे और मन में छुरी छिपाये रहोगे। तुम लोगों के हथकंडे खुदा की पनाह खुदा बचाये उनसे।

त्रिलोकी (जोश से जोश में खींचकर) — मेरी जान क़समिया कहता हूँ कि मैं तुम्हारी सूरत पर मरता हूँ। मैं वह मर्द नहीं हूँ कि दग़ा फ़रेब खेलूँ एक बेचारी औरत को धोखा दूँ। तुम आज़मा लो हर बात मामले में हमको खरा पाओगी।

छोकरी — अजी ऐसी ही ऊँची ऊँची बातें तो सभी करते हैं मगर कलई तो बाद को खुल जाती है न! पहले तो ऐसी ऐसी मनभाई बातें करोगे कि जैसे कुछ तीन-पाँच छक्का-पंजा नहीं जानते मगर बाद को जो

जो बातें बनाओगे कि तोबा ही भली। तुम लोगों की मीठी बातों पर लट्टू होना मन की मिठाई खाना है।

स्वामी—मेरी जान हम अब ऐसे शब्द कहाँ से लायें जो हमारी सच्ची बातों को तुम्हारे दिल पर जमा दें। गणेश की शपथ खाकर कहता हूँ कि हम लोगों की बात में रत्ती भर भी नमक-मिर्च नहीं। (कुछ सोचकर) मेरी एक बात मानो तो कहूँ मगर तुम काहे को मानने लगीं!

छोकरी—क्या कहते हो कहो मानने काबिल होगी तो क्यों न मानूँगी।

स्वामी—हमारे यहाँ इस वक्त सब तरह का आराम का सामान मौजूद है—इलाका नौकर चाकर, हाथी-घोड़े सभी कुछ हैं। तुम्हारे वास्ते एक खूबसूरत मकान अलग कर दिया जायगा। हर तरह का जरूरी सामान भी इकट्ठा कर दिया जायगा। दो-एक लौंडियाँ भी नौकर रख दी जायेंगी जो हर तरह का आराम देंगी। हम लोग खुद ही तुम्हारे नौकरों जैसे रहेंगे। तुम्हारी खातिरदारी में कोई बात उठा न रक्खी जायगी। खूब गौर से सोचो।

यह कहकर स्वामी जी ने चाहा कि लपककर उसके लाल-लाल होंठों को चूम लें, मगर उसने मुँह हटा लिया।

छोकरी—भई, तुम्हारा एतबार नहीं। आज तो मैं यहाँ आकर रहना-सहना शुरू करूँ, कल को कोई मुसीबत आ पड़े और मैं यहाँ से अलग होने पर मजबूर की जाऊँ तो नाहक मुफ्त की शर्मिन्दगी हो। रिश्ते-बिरादरी की औरतों को ताना मारने का मौका हाथ आ जाये कि भरी हुई नेमत को लात मारकर यहाँ गयी थीं आखिरकार ज़लील होकर निकाल दी गयीं।

त्रिलोकी—अब तुम्हारे इस अविश्वास का क्या इलाज है?

छोकरी—भाई सुनो, दूध का जला छाछ भी फूँक-फूँक पीता है। मैं एक दफा यह पापड़ बेल चुकी हूँ। तब से मैंने कान पकड़े कि अब बिना सोचे-समझे हरगिज हरगिज ऐसे पेचीदा मामलों में जान न फँसाऊँगी। अभी कुछ ही रोज बीते हैं मेरी एक मुँह बोली बहन रहती है, उनसे और एक ताल्लुकेदार से कुछ साँठ-गाँठ हो गयी। बाबू साहब ने ऐसी-ऐसी

चिकनी-चुपड़ी बातें कीं कि वह बेचारी कमसिनी की मारी फूल उठी और बोरिया-बधना लेकर उनके यहाँ आ धमकी। कुछ दिनों तक तो ऐसा मजा बना रहा कि क्या बतलाऊँ। हम लोग समझने लगे थे कि बेचारी की जिन्दगी अब बिना किसी झंझट के कट जायगी। मगर थोड़े ही दिनों में तमाम उम्मीदें हवा हो गयीं। पहले तो दो-तीन बार पेट गिराया गया आखिरकार बाबू ने उसे निकाल दिया। बेचारी की वही मसल हुई—न खुदा ही मिला न विसाले सनम न इधर के हुए न उधर के हुए। वहाँ से निकलने के बाद उसने कैसी-कैसी परेशानियाँ और मुसीबतें झेली हैं कि उनको याद करके मेरे तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। कौन-कौन सा दुख नहीं भोगी बेचारी। जेलखाने तक गयी पर उसका कुर्क हुआ जहर भी बेचारी को दिया गया मगर जिन्दगी मजबूत थी बच गयी और सब पर तुर्रा यह कि यह सब बाबू साहब ही की बदौलत हुआ।

स्वामी—सब मर्द एक ही थैले के चट्टे-बट्टे होते हैं। वह बेवफ़ा था बेवफ़ाई कर गया। हमको तो ऐसे आदमियों की सूरत से ही नफ़रत है।

छोकरी—इसका तो खुद ही इम्तिहान हो जायगा।

त्रिलोकी—मेरी जान अब इस बात का फ़ैसला सोचकर कल कर लेना। इस वक्त मजा किरकिरा हो रहा है।

यह कहकर उसने गिलास पर गिलास चढ़ाना शुरू कर दिया। उसके साथियों ने भी उसका अनुकरण किया। थोड़ी ही देर में वह सब नशे में चूर हो गये।

(छोकरी त्रिलोकीनाथ के कान में कुछ कहकर मुस्कराती है।)

स्वामी—क्यों यार जी किस बहाने मेरी नजरों में खाक डाली जाती है! अकेले ही अकेले मजा लोगे!

त्रिलोकी—तो तुम क्यों जलते हो? क्या इसमें भी कुछ साझा है तुम्हारा।

यह कहकर महंत जी महाराज ने उस परी को गोद में बिठा लिया और ताबड़तोड़ कई बोसे लिये।

स्वामी—यार, अब तुम बड़ा जुल्म कर रहे हो। हमारा हिस्सा तो बढ़कर लगना चाहिए। यह बेइन्साफ़ी अब नहीं देखी जाती।

त्रिलोकी—चलो परे हटो किस खेत की मूली हो तुम! हुं. बड़े धन्नासेठ बनकर आये हो वहाँ से अपना भी हिस्सा लगने!

स्वामी—अब तुम पिटे मेरे हाथ से आ गयी शामत तुम्हारी।

त्रिलोकी—तुम अब बहुत बढ़े जा रहे हो। जबान में लगाम दो, नहीं तो अभी खींचकर बाहर निकाल दूँगा।

यह बात सुनकर स्वामी जी कुछ नाराज़ हो गये। इसी बीच उस ज़ालिम औरत ने उन पर एक फ़िकरा चुस्त किया और त्रिलोकी ने बड़े ज़ोर से क़हक़हा लगाया। स्वामी जी बेचारे खूब झेंपे। झेंप मिटाने की ग़रज़ से उन्होंने महंत को एक हल्का-सा थप्पड़ रसीद किया और उस माशूक़ा का हाथ पकड़कर अपनी तरफ़ घसीटा। त्रिलोकी का मिज़ाज तो शराब से यों ही उबल रहा था अब जो तमाचा पड़ा तो कुछ झेंप भी मालूम हुई और कुछ गुस्सा भी आ गया। उन्होंने बढ़कर स्वामी के एक घूँसा रसीद किया। स्वामी ने वह कसके जड़ी कि महंत को छठी का दूध याद आ गया। मगर उन्होंने भी हिम्मत करके लड़ाई लगाना शुरू किया। ग़रज़ उन दोनों में खूब गुत्थमगुत्था हुई, खूब ही मारपीट हुई। स्वामी जी ज़रा हट्टे-कट्टे आदमी थे उनकी जीत हुई और महंत बेचारे भी किसी तरह कमज़ोर या मरियल न थे मगर ग़ाफ़िल रहने की वजह से उनमें ताक़त न रह गयी थी खूब ही पिटे। वह तो पिटपिटाकर निकल भागे मगर यहाँ स्वामी जी की सिट्टी पिट्टी भूल गयी। तमाम नशा हिरन हो गया सोचे कि अब खैरियत नज़र नहीं आती। त्रिलोकीनाथ इस वक़्त बिफरा हुआ है, इस हालत में जो कुछ न कर गुज़रे थोड़ा है। अगर मैं यहाँ रहूँगा तो नाहक को ज़लील होना पड़ेगा। इस वक़्त समझदारी इसी में है कि यहाँ से खिसक चलूँ। यह सोचकर स्वामी जी रफ़ूचक्कर हो गये और उनकी माशूक़ा भी चम्पत हो गयी मगर त्रिलोकी का गुस्सा महज़ गीदड़भभकी थी। वह बाहर आये तो शिव जी की आरती का वक़्त आ गया था। आरती वग़ैरह के बाद मंदिर का फाटक बंद कर दिया गया।

२

हिन्दू जाति की धार्मिक परम्पराओं में तैंतीस करोड़ देवताओं में से तीन देवता सारी सृष्टि के स्वामी बतलाये गये हैं। शिव जी महाराज अपने तेजस्वी शरीर पर भभूत रमाये सिर पर जटा बढ़ाये हरदम और हर घड़ी निर्गुण भगवान से लौ लगाये रहते हैं। आपको ईश्वर से कुछ ऐसा प्रेम है कि आठों पहर उसी की स्तुति में और दिन-रात उसी की प्रशंसा के गीत गाने में लगे रहते हैं। उसी के नाम पर बिके हुए हैं और अध्यात्म के रंग में खूब रँगे हुए हैं। जब देखिए उसी के स्मरण में लीन अपने प्रियतम के दर्शन में खोये हुए, ज्ञान की सुधा पीकर मस्त और वेदान्त के नशे में चूर रहते हैं। आपके वैराग्य का यह हाल है कि सांसारिक ऋद्धि सिद्धि की ओर आँख उठाकर नहीं देखते बावजूद इसके कि सर्वेश ईश्वर ने आपको विशेष रूप से दो छोड़ तीन-तीन आँखें दी हैं। आप भौतिक वस्तुओं को घास फूस से भी कम समझते हैं। भाग्यशाली हैं वे लोग जो क्षणिक सुख-चैन को त्यागकर अपना जीवन परलोक बनाने में खर्च करते हैं। महात्मा हैं वे लोग जो लोभ के फंदे में न फँसकर वैराग्य धारण कर लेते हैं। क्या खूब कहा है महाराज भर्तृहरि जी ने—ऐ बुद्धिमानो तुम समझते हो कि बड़े-बड़े राजाओं के पास हर तरह की अच्छी-अच्छी चीजें होती हैं और भोग विलास के सब सामान होते हैं इसलिए उनका जीवन ईर्ष्या करने योग्य है। मगर मैं कहता हूँ कि जिनको वैराग्य का मजा मिल गया है वे तीनों लोक के राज्य को भी कुछ नहीं समझते। बादशाहों के ठाटदार कमरे एक से एक अनोखी और नायाब चीजों से सजे होते हैं मगर दुनिया को छोड़ देनेवाले वैरागियों के लिए किसी पहाड़ की गुफा ही सजा हुआ कमरा है। बादशाहों के यहाँ सुन्दर मसहरियाँ होती हैं जिन पर नरम-नरम

तकिये लगे होते हैं और उनसे कुछ देर तक शरीर को आराम मिलता है मगर वैरागियों के लिए पत्थर की चट्टान ही प्राकृतिक मसहरी है और अपना हाथ ही सीना जागता तकिया है। बादशाहों के यहाँ अच्छे-अच्छे पर्दे लटके होते हैं और मोमी फ़ानूस जला करती हैं मगर वैरागियों के लिए शीतल सुगन्धित हवा ही प्राकृतिक पंखा है और चन्द्रमा ही प्राकृतिक दीपक है। बादशाहों के यहाँ शय्या पर कोई नवयौवना रूपवान स्त्री विराजती है जो उनकी काम वासना को क्षण भर के लिए तृप्त कर देने का साधन है मगर वैरागियों के लिए वर-कन्या ही वह स्त्री है जिस पर उन्होंने अपना तन-मन-धन सब अर्पण कर दिया है और जो उनके लिए मन प्राण से प्रसन्न चित्त होकर ईश्वर के दर्शन का उपाय बतलाती है। महादेव जी महाराज के इन्द्रिय-दमन का एक छोटा-सा प्रमाण यह है कि आपने कामदेव को जला कर खाक कर दिया। आपका सिर उस पवित्र धारा का कोष है जिसे चश्मए-हैवाँ कहें तो ठीक है बल्कि चश्मए कौसर से उपमा दें तो उचित है। इस नदी से हिन्दुस्तान का एक बड़ा-सा भाग उपजाऊ होता है। जनता का विश्वास है कि जो लोग भूलकर भी इस नदी में डुबकी लगाते हैं वे पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति पाकर स्वर्ग के मजे उड़ाते हैं और जो लोग इस वरदान से लाभान्वित होने के लिए मंजिलें तय करके आते हैं वे तो देवताओं के भी उपास्य हो जाते हैं। इन्द्र, कुबेर, नारद और दूसरे अजेय देवताओं को भी उनके पुनीत चरणों पर सिर झुकाने की लालसा हो जाती है और फरिश्ते उनके कदमों तले की खाक सर और आँखों पर चढ़ाते हैं। इस नदी की लहरों का बहाव मनुष्य के पापों को काटकर फेंक देने की मशीन है और भवसागर पार उतरने की नैया है। बैल को, जो आपका वाहन है सारे संसार का अन्नदाता कहें तो ठीक होगा। मानव जाति को जितने काम इस जानवर से मिलते हैं संभव नहीं कि उनकी तुलना भी किसी और जानवर से हो सके। मानो सबको रोजी देनेवाले ईश्वर ने सृष्टि को रोजी पहुँचाने का सारा इन्तजाम इसी के हाथ में दे रखा है। शिवरात्रि का उत्सव आप ही की स्मृति में आयोजित होता है। इस दिन सभी कट्टर विश्वस्त पाक हिन्दू व्रत रखते हैं और शिव जी की पूजा बड़ी धूमधाम से की जाती है।

आज बड़ी शुभ दिन है। इस वक्त औरतों की एक टोली चली आ रही है। तमाम औरतें कपड़े-लत्ते से लैस हैं नाक-चोटी से दुरुस्त जेवरों से गौंडनी की तरह लदी हुई, मारे जेवरों के जिस्म पर तिल रखने की जगह नहीं। आज वह क़ीमती जोड़े निकाले गये हैं जो बराऊँ कहलाते हैं और जो शादी-ब्याह के वक्त बड़े ठाट-बाट से पहने जाते हैं। उसमें हरेक बेजोड़ है कोई काटने क़ाबिल नहीं। कस्तूरी में बसी हुई चोटियाँ जो स्नान करने के बाद कंधों पर बिखेर दी गयी हैं, उनकी सुन्दरता को और भी बढ़ाती हैं। हरेक स्त्री के सुन्दर और सुकुमार हाथों में एक बहुत अच्छा पीतल का कमण्डल लटक रहा है जिसमें पूजा का सामान है। यह व्रत कुछ ऐसा लोकप्रिय है कि बूढ़ी तो बूढ़ी जवान और कमसिन औरतें भी बड़े सच्चे दिल से उसको रखती हैं ताकि पार्वती शिव जी की प्यारी पत्नी उनके सदाचार पर प्रसन्न होकर उनके दिल के सब अरमान पूरे कर दें। आम रिवाज के मुताबिक यह औरतें भी रास्ते की थकन को आसान करने की ग़रज़ से एक फड़कानेवाला गीत अलापती हुई चली जा रही हैं—

सोनरे गड़वा गंगाजल पानी
सोनरे गड़वा गंगाजल पानी
अरे पनिया न पिये अरे मोरी बहियाँ
मोरा सैंयाँ घरे आये रतियाँ॥ मोरा सैंयाँ ॥

चुन चुन कलियाँ मैं सेज बिछाऊँ
अरे चुन चुन कलियाँ मैं सेज बिछाऊँ
सेज न सोवे अरे मोरी बहियाँ
मोरा सैंयाँ घरे आये रतियाँ॥ मोरा सैंयाँ ॥

सोने की थारी मैं जेवना परोसेउँ
अरे सोने की थारी मैं जेवना परोसेउँ
जेवना न जेवें अरे मोरी बहियाँ
मोरा सैंयाँ घरे आये रतियाँ॥ मोरा सैंयाँ ॥
मोरा सैंयाँ घरे आये रतियाँ।

एक नौजवान चंचल औरत आगे बढ़कर अपनी सहेली से पूछने लगी—क्यों बीबी, तुमने कौन मनौती की है?

वह औरत (नौजवान, सुन्दर, गोरी-चिट्टी, सीना उभरा हुआ, उम्र क़रीब बीस साल)—मुझको वर अच्छा मिलेगा।

पहली औरत—क्या इतने ही दिनों में एक से मन भर गया जो दूसरा करने पर तुली हुई हो?

वही औरत—क्या कहूँ, मेरा आदमी मुझको मानता ही नहीं।

पहली औरत—मैं तुम्हारे मर्द को पाऊँ तो छाती से लगा लूँ। ऐसी प्यारी-प्यारी सूरत पायी है, मेरा दिल मसोसकर रह जाता है!

दूसरी औरत—आओ फिर अदला-बदली हो जाय!

पहली—ना बहन, मेरा आदमी बेचारा मेरी-सी बीबी कहाँ पायेगा! चिराग लेकर ढूँढ़ेगा तब भी बेचारे को मुझ-सी बीबी न मिलेगी।

दूसरी—ऐ लो, अल्लाह, अब आपको भी सुन्दर होने का दावा हुआ है! वही मसल है सूरत न शकल भाड़ में से निकल। कुप्पी-कुप्पी आँख लेकर चली हो वहाँ से दून की लेने! ज़रा जाकर आइने में मुँह तो देखो!

एक तीसरी औरत (अधेड़, भद्दी, मोटी)—तुम छोकरियों से आज बरस बरस के दिन भी चुप नहीं रहा जाता।

पहली—आप अपनी नसीहत तहकर रखिये। बरस बरस का दिन है, आज भी आपस में न हँसें-बोलें—आखिर रोज तो मुँह में पानी देकर बैठना ही है। जिसको आज का दिन देखना नसीब होगा, वही फिर इधर से इस मन्दिर तक आयेगा।

ये चंचल जवान औरतें आपस में हँसती-बोलती, दिल्लगी-मज़ाक करती चली जा रही थीं। आपस में छेड़-छाड़ भी होती थी, बोली-ठोली भी मारी जाती थी, मज़ाक की बातें भी कही जाती थीं, ताने-तिश्ने की भी नौबत आ जाती थी, फिर मिलाप हो जाता था। इसी बीच एक बुड्ढे महाशय मिले। इनकी चाल-ढाल उन तीनों बुड्ढों-सी थी जो आजकल लखनऊ में ख़ाक छानते फिरते हैं या उन मुहम्मदशाही नौजवान आशिक़-मिज़ाजों की-सी जो गलियों में नज़रें लड़ाया करते थे। सफ़ेद दाढ़ी मूछें

मारती हुई। एक कुब्बानुमा टोपी सर पर, कामदानी का अँगरखा बदन पर। आपने जो इन परियों को देखा तो आँखों में दीदार का शौक़ पैदा हुआ और मुँह में पानी भर आया। आप क़दम बढ़ाकर उन सबों के बराबर हो गये और एक बहुत ही चपल-चंचल औरत की तरफ़ घूरकर फ़रमाने लगे —

मर्द — क्यों शरीफ़ज़ादियो ज़रा मुझे भी बतलाना आज कौन-सा मेला है जो तुम लोग बन-सँवरकर चली जा रही हो?

औरत (मुस्कराकर) — आज तो शिवरात्रि का मेला है हम लोग मन्दिर को जा रहे हैं।

अब जब हज़रत ने जो देखा कि दस-बारह परीज़ाद औरतें आँखें उठा-उठाकर मेरी तरफ़ देखने लगीं तो आपको यह ख़याल गुज़रा कि यह सब मेरी सूरत पर लट्टू हो गयीं। ज्योंही आपके दिल में यह बात समायी आपने फ़ौरन टोपी टेढ़ी कर ली कमर को जो मोटापे के बोझ से झुक गयी थी बड़ी कोशिशों से सीधा किया। इस तरह दिल चुरानेवाली चीज़ों से लैस होकर आपने उन परीज़ादों पर दया-दृष्टि डाली कि जैसे आपकी आँखें कह रही हों कि जो तुमने बिना समझे-बूझे दिल दिया है मगर मैं तुम्हारी मुहब्बत की क़द्र करूँगा।

अब की दफ़ा एक अधेड़ औरत ने बोली कसी — क्यों मियाँ क्या यहाँ अपनी नतिनियों को ढूँढ़ते हो?

इस सवाल ने मीर साहब की अक्ली-बक्ली भुला दी बेचारे बेहद शरमाये और इस फ़िक्र में कि कोई मौके का मुँहतोड़ जवाब दूँ, इधर उधर ताकना शुरू किया। उन सबों ने इन्हें जो बगलें झाँकते देखा तो और भी दो-चार फबतियाँ जमायीं और क़हक़हे पर क़हक़हा पड़ने लगा। मीर साहब बेचारे मज़ाक़ का निशाना बन गये और इस ठिठोली से कुछ ऐसे लज्जित हुए कि कुछ बस न चला रफ़ूचक्कर ही गये। यों यह हज़रत दिल्लगोई में ताक़ जुगतबाज़ी में शोहरए आफ़ाक़ थे हज़ारों ही मतलब भरी फबतियाँ कह डाली थीं और अपनी मण्डली में हँसी-मज़ाक़ के उस्ताद माने जाते थे मगर इन बेचारे ने कभी शरीर, कमसिन छोकरियों से मात नहीं खायी थी। बड़े-बड़े चालबाज़ यारों के मुक़ाबले में पाला मारा

था। मगर ऐसी लड़कियों से जिनका मज़ाक से कोई वास्ता नहीं कभी नीचा नहीं देखा था। आपको यह पछतावा हुआ कि हाय अफ़सोस ज़िन्दगी भर की मेहनत अकारथ गयी अब नौबत यहाँ तक पहुँच गयी कि इनके मुक़ाबले में भी हार हो गयी। मेरी वह तबीयत ही न रही या दिमाग़ ही पर पत्थर पड़ गया कि जवाब न दे सका और झेंपकर चला आया। यह भी सोच रहे थे कि ऐसे मौक़े मज़ाक का जवाब तो इस फ़न के पुराने और नये उस्तादों में से एक ने भी नहीं दिया। लिहाज़ा अगर मैं चूक गया तो क्या हुआ अब भी पाला मेरे ही हाथ है। क़िस्सा कोताह जब मीर साहब इस तरह हार खाकर अपनी राह लगे तो यहाँ आपस में चुटकियाँ होने लगीं।

पहली—तुम लोगों ने इनकी दाढ़ी को नहीं देखा मालूम होती थी जैसे बन्दर की दुम। मुआ ताड़ की तरह तो बढ़ता चला गया है!

दूसरी—और मूँछकाटे को टोपी तक मयस्सर नहीं सर पर एक हँडिया-सी औंधाये हुए है।

तीसरी—मुँह में दाँत न पेट में आँत मगर दमख़म वही है। सत्तर बरस का हुआ बेचारा मगर अभी जवान ही बना फिरता है!

चौथी उसी अधेड़ मोटी नहीं औरत से मुस्कराकर मज़ाक़िया कहने लगी—क्यों मामी यह मरदुआ तुम्हारे जोड़ लायक़ अच्छा था न?

वही अधेड़—वाह रे तेरी समझ यह तो मेरे बाबा से भी दो-चार बरस निकलता होगा।

अब यह टोली घूमती-घामती मन्दिर के क़रीब पहुँच गयी। रास्ते में कुछ आवारा छोकरों से भी मुठभेड़ हुई। उन सबों ने भी फ़िक़रे चुस्त किये। इधर से भी जवाब तुर्की-ब-तुर्की दिया गया। यह नौजवान औरतें मज़ाक पर किसी तरह कम न थीं। उनके इस रोज़ाना स्नान और पूजा ने उनको ज़रा निडर और चंचल बना दिया था। शर्मो-हया का आँखों में नाम नहीं। कुलेलें करतीं सड़क पर बुलन्द क़हक़हे और ऊँचे सुरों में गाती हुई आख़िरकार मन्दिर के अहाते में दाख़िल हुईं।

आज यहाँ पर बड़ी ज़बरदस्त भीड़ देखने में आयी। हज़ारों ही

आदमी शिव जी की पूजा को आये हुए थे। अजब मेहियाधसान लोग थे। हरेक इसी धुन में था कि पहले मैं जाकर पुण्य लूट लूँ। जो औरतें कर्मों की मारी आयी हुई थीं उनकी जो गति होती थी कि परेशान हो हो जाती थीं। वह धक्कम धक्का था कि खुदा की पनाह। वह रेलम-रेला था कि अलअमल्लाह। जो बेचारे जरा कमजोर थे वह बेदम होकर हाँफ रहे थे तो भला औरतें किस गिनती में थीं। जिन साहबान ने जरा हिम्मत करके निश्चित सीमा से आगे कदम बढ़ाया उन्हें वह धक्का पड़ा कि छठी का दूध याद आ गया। लाचार बेचारियाँ एक कोने में खड़ी थीं कि जरा भीड़ छँटे तो दाखिल हों मगर वह औरतें जिनका हम ऊपर जिक्र कर आये हैं एक खास रास्ते से मन्दिर में दाखिल हो गयीं। वहाँ रस्म के मुताबिक पूजा करके जब वह बाहर निकलीं तो एक पुजारी (यशोदानन्द) ने मुस्करा कर कहा—आज रामकली का पता नहीं है। बेचारे बाबा जी राह अगोरते बैठे हैं।

रामकली (एक अनोखी अदा से आँचल हटाकर)—तेरी आँखों में तो छा गयी है चर्बी मुआ देख देख अंधा बनता है। परत्यच्छ देख रहा है कि सामने खड़ी हूँ मगर चकोरी बनाये जाता है! और यह तो देखो कहता है बाबा जी राह अगोरते बैठे हैं। कौन बाबा रे बतलो जरा बेहया नहीं तो!

यशोदानन्द—बस करो महारानी बस करो ज्यादा गुस्सा मत हो। जाओ महंत जी को जो कुछ दक्षिणा देना हो दे आओ।

रामकली नाजो-अन्दाज से इठलाती फूँक-फूँककर कदम धरती महंत के कमरे की तरफ चली।

यशोदानन्द—आज तो रामकली ने वह सिंगार किया है कि शिव जी बेचारे भी मोहित हो गये।

रामकली—मालूम होता है कि तुम लोगों की शामत आ गयी है।

यशोदानन्द—शामत न आयी होती तो तुम यों बनकर निकल जातीं।

गरज जब आदमियों के दिलों को लूटती और पाजेब की छमाछम से जगा का शोर करती हुई रामकली बाबा जी के कमरे में दाखिल हुई,

उस वक्त बाबा जी आइना सामने रक्खे कंघा करे बैठे थे। उसको जो देखा तो मारे खुशी के उछल पड़े।

महंत—अब तो तुम्हारे दर्शन को आँखें तरसा करती हैं। गूलर का फूल हो जाती हो!

रामकली—क्या कहूँ मैं तो तुमसे भी ज्यादा बेचैन रहती हूँ।

महंत—तो फिर आयीं क्यों नहीं?

रामकली—आजकल हमारे यहाँ कुछ जरूरी काम-काज पड़ गया, नहीं तो भला मैं कब रुकनेवाली थी।

महंत—बहाना करना कोई तुमसे सीख ले।

रामकली—और बहाना भी करूँगी तो तुमसे।

महंत—अजी जाओ ऐसी बहुत-सी बातें सुने बैठा हूँ।

रामकली—अब तुम्हें यकीन ही न आये तो इसका क्या इलाज।

महंत—यकीन करने क़ाबिल बात भी तो हो।

रामकली—निरे भोंदू ही हो और अब क्या साफ़-साफ़ कहलवाना चाहते हो!

महंत (हँसकर)—अल्लाह यह बात भी अब समझ गया। हाँ ठीक है, आज चौथे दिन तुम्हारी सूरत दिखलायी पड़ी है।

यह कहकर त्रिलोकीनाथ ने उस औरत को मस्ती से खींचा और झुक-कर ताबड़तोड़ कई बोसे लिये।

रामकली—हटाओ मुँह न मालूम कैसी बू आती है! तुम बड़े वो हो! आज भी न छोड़ते बनी।

महंत—क्या करें जानी तुम्हारे वियोग में इसी के सहारे जीते हैं। मन भी ताज़ा हो जाता है और कुछ नशा भी जम जाता है।

रामकली—इसकी बू बड़ी खराब होती है।

महंत—जो लोग नहीं पीते उनके लिए बीसों हीले होते हैं। मगर जहाँ एक दफ़े मुँह लग गयी तो फिर छूटना जानती ही नहीं।

रामकली—भला शरीफ़ औरतें तो काहे को पीती होंगी?

महंत—बड़े-बड़े घराने की सब औरतें पीती हैं। आजकल यह भी तहज़ीब और फ़ैशन में शामिल हो गया है।

रामकली—जो मैं पी लूँ तो कैसा हो?

महंत—फिर तो मज़ा आ जाय। मैं तो तुमसे कुछ नहीं तो हज़ारों ही दफ़ा कहा होगा मगर तुमने कभी अपनी नहीं न छोड़ी। आज आकर देवता सीधे हुए हैं।

रामकली—पीने को तो पी लूँ मगर मुँह से बदबू आयेगी और फिर घूमेगा।

महंत—बदबू देसी शराब में होती है और वही किसी क़दर कड़वी भी होती है। मैं तुमको विलायती शराब पिलाऊँगा। पहले तो तुम उसकी खुशबू ही से मस्त हो जाओगी और पीने पर तो आँखें जायेंगी। ईश्वर जानता है, ऐसा मालूम होता है कि जैसे बैकुण्ठ में बैठे हैं।

ग़रज़ कि अंग्रेज़ी शराब की और भी दो-चार तारीफ़ें करने के बाद बाबा जी ने रामकली को एक गिलास उम्दा शराब की भरकर दी। पहले तो रामकली ने कुछ मुँह सिकोड़ा कुछ हिचकिचायी मगर त्रिलोकी के इस वाक्य ने क्या सोचती हो आँख मूँदकर पी जाओ उसकी हिम्मत बढ़ायी और वह सब का सब गटगटा गयी। यह शराब स्वादिष्ट थी इस वजह से उसने गिलास पर गिलास चढ़ाना शुरू किया और अगर त्रिलोकीनाथ मना न करते तो वह क़यामत तक बस न करती। जब सुरूर चढ़ा और नशे में आयी तो उसने महंत के गले में बाँहें डाल दीं और घुल-घुलकर बातें करने लगी।

रामकली—तुम यह भेष क्यों बनाये रहते हो? आओ हम-तुम कहीं निकल जायें, चैन-चौक मज़ा उड़ायें।

महंत—मज़ा कहाँ से उड़ायेंगे कौड़ी-कौड़ी को तो मोहताज हो जायेंगे। इस वक्त बीस हज़ार सालाना की आमदनी है, उस पर भी तो ख़र्च को काफ़ी नहीं होता जब टके की भी आमदनी ही न होगी तो कैसी बुरी गत होगी।

रामकली—यह इलाक़ा निगोड़ा किस दिन काम आयेगा? इसे बेच-बाचकर ठिकाने लगा दो और आओ कहीं का रास्ता पकड़ें।

महंत—क्या? मुझे इलाक़े को बय करने का अख़्तियार ही नहीं है जानी नहीं तो क्या कब चूकनेवाला था और जो सच पूछो तो यहाँ भी चैन है। दिन भर एक से एक सजीली औरतें पूजने में आती हैं। रात भर नाच रंग की महफ़िल गर्म रहती है। कभी-कभी तुम भी आकर कृतार्थ कर देती हो। हर वक़्त शराब-कबाब का दौर चला करता है। यार दोस्तों का जमघट रहा करता है। इतने आराम के होते मुझे क्या भैंस ने काटा है कि कुत्ते ने काटा है कि इधर-उधर मारा-मारा फिरूँ।

रामकली—तो मालूम हो गया कि तुमको मुझसे ज़रा भी प्रेम नहीं है बस ज़बानी जमाख़र्च है!

महंत—तुम तो जानी कभी-कभी लड़कपन की बातें करने लगती हो।

रामकली—बस-बस माफ़ कीजिए, मैं अब तक धोखे ही धोखे में थी।

महंत—होश में आओ प्यारी तुम्हारे बिना तो मुझे दिन भी अँधेरा मालूम होता है और तुम उल्टे गिला करती हो!

रामकली—तो फिर क्यों नहीं भाग चलते?

महंत—तो यह ख़र्च कहाँ से आयेगा?

रामकली—ख़र्च न आयेगा न सही ज़रा आज़ादी के साथ दो गाल हँसना-बोलना तो नसीब होगा। यहाँ तो चोरों की तरह हरदम जी धड़का करता है।

महंत—जानी मैं तो तुम्हारे आराम के लिए कहता था लेकिन जब तुमको ख़ुद ही तकलीफ़ उठाना मंज़ूर है तो मैं कोई न कोई तदबीर लगाऊँगा।

इसके बाद कुछ इधर-उधर की गप-शप हुई। जब सुरूर और भी ज़्यादा हुआ तो चूमा चाटी की बातें होने लगीं।

महंत—क्यों जानी तुम कभी अपनी ससुराल गयी हो कि नहीं?

रामकली — एक दफा गयी हूँ लेकिन उल्टे पाँव भागी। तब घरवाले लाख-लाख सिर मारते हैं मगर मैं जाने का नाम ही नहीं लेती।

महंत — तुम्हारा दूल्हा कैसा है? है तुम्हारी मर्जी के मुआफ़िक़?

रामकली — मारो गोली मुए को! बेचारे ने चार हरफ़ अंग्रेजी क्या पढ़ ली है कि बाबा अंग्रेज बन बैठा है। हर काम में एक न एक ऐब लगा रक्खी है। मन्दिर मत जाओ। किसी के घर बिला वजह मत जाओ। मोहल्ले की औरतों को फ़िजूल मत इकट्ठा करो। किताब लेकर दिल बहलाया करो। स्त्री-धर्म पढ़ा करो। सौदे-सुलुफ़ का इन्तजाम रक्खो और न मालूम क्या-क्या अल्लम-गल्लम। मेरी तो नाक में दम आ गया। दिन भर चारदीवारी के अन्दर पड़े-पड़े हौल हो जाता था और दिल बहले तो क्योंकर। आखिर कोई सामान भी तो हो। न किसी से हँसना न बोलना निगोड़ी किताबों को देख-देख मेरी आँखें फूटती थीं। ज्यों-त्यों करके चार दिन तो मैंने बिताया लेकिन फिर न रहा गया।

महंत — सूरत शक्ल कैसी पायी है?

रामकली — बाबा छुट्टा-कट्टा गोरा जवान है। चेहरा निहायत सलोना है। जिस्म बिलकुल सुडौल। पढ़ने से आँखें जरा कमजोर हो गयी हैं, इस वजह से चश्मा लगाता है। कपड़े निहायत सादे और खूबसूरत रखता है। खिदमतगार इतना है कि दाँत से चौकी उठा ले।

महंत — सच सच बतलाओ हम अच्छे हैं कि वो?

रामकली (हँसकर) — इन्साफ़ की बात तो यह है कि सूरत-शक्ल में तुम उसके पासंग भी नहीं हो। मगर मुझको तुम्हारी चाल-ढाल अच्छी मालूम होती है। तुम्हारे यहाँ जितनी शराब चाहे पी जावे और वह शराब से सख्त नफ़रत रखता है। शराबियों से कोसों भागता है। बेचारे को पोस्त के तो नाम से भी परहेज है। अगर कभी दमड़ी की चीज को भी फ़रमाइश करो तो मुँह बनाकर कहता है 'भई, इस फ़िजूलखर्ची से तो हफ़्ते भर में मेरा दीवाला निकल जायगा। मेरे गाढ़े पसीने की कमाई इस तरह फूँक दी जायगी तो मैं कहीं का न रहूँगा।

महंत — हाँ यह तो बताओ जीविका का साधन क्या है?

रामकली—यही रेशम की दुकान करता है और कुछ आमदनी इलाके से हो रहती है मगर खर्च करना जानता ही नहीं। सुनती हूँ कि कई हजार बैंकर में जमा है। न मालूम कितनी दुकानों में साझा है मगर खर्च वही आजिजी-आजिजी। क्या मजाल कि कोई पैसे की चीज बिला जरूरत खरीद ले।

महंत—जानी बातों में वक्त जाता है, जरा खुशी से एक चुम्मा दे दो।

रामकली—नई आज तक है आज तो माफ़ करो। क्या अपने साथ मुझे भी नरक में घसीटना चाहते हो!

महंत—यह तो मैंने पहले ही समझ लिया था कि साफ़ मुकर जाओगी।

अलग़रज़ थोड़ी देर के बाद रामकली अपनी सहेलियों के साथ मुस्कराती हुई दिखलायी दी। ज्योंही उन सबों ने उसकी छिपी हुई सूरत देखी आपस में आँखों ही आँखों में बातें करने लगीं। कोई उसकी तरफ़ देख-देख मुस्कराती थी कोई उसको देखकर अपनी हमजोली के कान में कुछ कहती थी। खूब कानाफूसी हो रही थी। रामकली गो दीदा दिलेर और शोख थी मगर शर्म के मारे जमीन में गड़ी जाती थी। इस तरह हर हँसिया तो पक रही थी मगर जबान सबकी बंद थी और क्यों न बंद होती आखिर खुद भी तो उसी घाट का पानी पी चुकी थी। आखिर कार एक शोख चुलबुली औरत से न रहा गया बोल ही उठी—बुआ रामकली इस वक्त चेहरा कुछ कुम्हलाया हुआ है!

रामकली—आपकी बला से।

वही—नहीं नहीं आखिर कुछ तो वजह होगी। अभी यहाँ से जा रही थीं तब तो यही मुखड़ा कुन्दन की तरह दमक रहा था और अब जो देखती हूँ तो वह चमक-दमक क्या उसका चौथा हिस्सा भी नहीं है। आखिर इसकी कोई वजह?

रामकली—मेरा चेहरा मुरझाया हुआ सही मिट्टी से भी ज्यादा मैला सही तुमसे वास्ता गरज़! तुम्हारा चमकता है तो आपको और मेरा उतरा हुआ है तो आपका!

वही सहेली—खफ़ा क्यों होती हो बहन मैंने तो दिल्लगी की थी

रामकली—ऐसी दिल्लगी को दूर ही से सलाम है। किसी के सीने को छुरियों से ज़ख़्मी करो और कहो मैंने तो दिल्लगी की थी। बेतुक दिल्लगी की एक ही कही। सदक़े इस अनोखी दिल्लगी के।

वही—अच्छा अब सच-सच बता दो आज कैसी बीती?

रामकली—फिर तुमने वही छेड़खानी शुरू की?

वही—इसमें कौन-सी छेड़खानी। आपस में कैसी लाज-शर्म। मुझसे न छिपा जायगा।

रामकली—तुम तो बड़ा बेढ़ा सवाल करती हो इसका जवाब तो

वही—और हम लोग बेसमें थे कि जो कुछ तुम पूछती थीं बिला खटके बता देती थीं रत्ती भर न छिपाती थीं।

रामकली—फिर तुम समझने क्यों?

वही—समझने की तो बात ही है। हम तो दिल का सारा हाल कह डालें और तुम हमसे हर एक बात छिपाओ। मैं तो जब तक रोज़ की बीती किसी सहेली से न कह सुनाऊँ तब तक पेट में पानी नहीं पचता।

रामकली—मैंने कौन-सी ऐसी बात छिपा रक्खी है कि आप शिकवा कर रही हैं?

वही सहेली—अब दूर कहाँ ढूँढ़ने जाऊँ अभी तुमसे एक बात पूछ रही हूँ और तुम साफ़ मुकर रही हो।

रामकली—अरे वह बात भी निगोड़ी बतलाने क़ाबिल हो।

वही—कुछ भी क्यों न हो हमको इस दम ज़रूर बतलाना होगा।

रामकली—क्या बताऊँ। अच्छा बताती हूँ। नहीं तुम हँसने लगोगी क़सम खाओ न हँसूँगी।

वही—तेरे सर की क़सम जो न हँसिये।

रामकली—बता ही दूँ? ऐ लो देखो वह तुम मुस्करायीं। शर्म के मारे ज़बान बँध जाती है। किसी दूसरे वक़्त कह दूँगी।

वही—ख़ैर, हाँ कुछ और ज़िक्र भी आया था?

रामकली—क्यों नहीं। जब मैं जाती हूँ तभी तो सारे ज़माने की

गप उड़ाने लगते हैं। अब आज बातों ही बातों में कहने लगे कि रामदुलारी आजकल न मालूम क्यों नहीं आती। दस-बारह दिन बीत गये अभी तक उसकी परछाईं भी न दिखायी दी। तो मैंने कहा कि बेचारी क्यों आये क्या जान भारी पड़ी है।

नहीं—ऐ तो उन्होंने भी तो ग़जब ही कर दिया था घुसते ही घास काट लिया! शुरूआत ही ग़लत कर दी। वह तो अछूती जान-जान पहले सिरे की सुकुमार और उन्होंने आते ही हाथापाई शुरू कर दी। लाजिम था कि जरा दो-चार दिन भक्ति भाव की बातें करके परचा लेते तब उसे यहाँ आने की लत पड़ जाती तो जो चाहते सो करते। अब तो वह ऐसा चौंक गयी है कि उसका ढंग पर चढ़ना जरा टेढ़ी खीर है।

दूसरी—अरे वह तो कहो खैरियत हो गयी कि उसने अपने घर पर किसी से कुछ नहीं कहा नहीं तो लेने के देने पड़ जाते।

तीसरी—उल्टी आँतें गले पड़ जातीं और सब शेखी किरकिरी हो जाती। (इस छोकरी को त्रिलोकी ने बेतरह छकाया था।)

चौथी—अगर कोई ऐसी-वैसी होती तो जरूर इसके दम-झांसे में पड़ जाती। मगर दुलारी एक जमाना बला की निडर है। अब देखिये मजदूरिनों की तरह घर का कोई न कोई काम-काज किया करती है।

रामकली—बेचारी का मुखड़ा तो है जैसे भुना हुआ बैंगन। काले तवे से भी बढ़ा हुआ। मगर यह है कि उस पर लट्टू हुई जाती हैं। अब दोनों मियाँ-बीवी एक साथ बैठते होंगे तो कैसा भोंडा मालूम होता होगा जैसे चाँद में ग्रहण लग जाय।

तीसरी (जिसने बाबा जी के हाथों खूब मुँह की खायी थी)—बहन मैं तो लगी-लिपटी रखना नहीं जानती कहूँगी मुँह ही पर, चाहे तुमको बुरा लगे चाहे भला। क्या काले-भुजंगे भौंरे से भी ज्यादा सियाह होती होगी कोई चीज। मगर उस निगोड़े को देखो कि कमल के फूलों का रस लेता है। जब तक कमल के पत्तों पर भौंरा न गूँजता हो उसकी शोभा ही नहीं होती। तुम ऐसी गोरी चिट्टी हो जैसे खिलता हुआ चंपा मगर जो तुम्हारे सर पर काले बाल न हों तो इस चाँद से मुखड़े की क्या गत हो?

सफ़ेद आँखों में काली पुतली न हो तो आदमी अंधा हो जाय। सुर्ख़ और सफ़ेद मुखड़े पर जब तक काले तिल न हों वह नमकीनी ही नहीं आती। उजले कागज़ पर जब तक रोशनाई से न लिखो कागज़ की कोई क़ीमत ही नहीं।

रामकली—मालूम होता है कि तुम्हारा मियाँ भी काला मुँहवा है, तभी गुस्से में लड़ने लगीं।

तीसरी बोली—बहन बुरा न मानो तो एक बात कहूँ।

रामकली—बुरा मानने की होगी तो ख़ामख़ाह बुरी मालूम होगी।

तीसरी—तुम हमारे मियाँ को एक दफ़े भी देख पाओ तो सच कहती हूँ उस पर मरने लगो।

रामकली—ऐसा कौन-सा सुर्ख़ाब का पर लगा है उसमें कि मैं देखते ही आशिक़ हो जाऊँगी?

तीसरी—जवान है ऐसा तरहदार है, बिल्कुल सुर्ख़ और सफ़ेद, जैसे कोई विलायती साहब।

रामकली—कभी तुमने त्रिलोकीनाथ को देखा था। सच कहो इससे अच्छा है?

तीसरी—ऐसे-ऐसे मुन्नों की उसके सामने क्या हस्ती है। वह तो खासा कन्हैया है।

ग़रज़ कि यह औरतें चटकारियाँ उड़ाती चली जा रही थीं। राह किनारे एक बहुत खूबसूरत तालाब बना हुआ था। इस जगह शाम के वक़्त शरीफ़ लोग अक्सर हवाख़ोरी और जी बहलाने के लिए भी आया करते थे। चुनांचे इस वक़्त भी बहुत से लोग अपनी-अपनी रुचि के अनुसार दिल बहलाने का सामान कर रहे थे। कहीं कोई साहब सिलौटी रक्खे भंग घोटने में दिलोजान से लगे हुए, उकड़ूँ बैठे हुए अपनी ताक़त के जोश में बेचारी भंग को पीछे डालते थे। उनके हवाली मवाली उनको बढ़ावा देते जाते थे—वाह गुरु क्यों न हो। इस फ़न में तो तुम अपने वक़्त के उस्ताद हो। भाई वाह इस फुर्ती और सफ़ाई के साथ भंग काटना तुम्हारा ही काम है। कोई क्या पाकर भंग काटेगा। पहले कुछ दिनों

तुम्हारी मासियत करे तब मन काटने का दावा करे। चोटी का पसीना एड़ी तक आता है तब कहीं जाकर रंग पकता है। इसके लिए बड़ा दिल गुर्दा चाहिए। तुमने तो भाई, हद कर दी। अब मार लिया है उस्ताद यह मिसीटी उठा चाहती है' यह काम तुम्हारे ऊपर खत्म हो गया। बत्तरे की। पहरों की मेहनत अब जाकर कहीं ठिकाने लगी।

एक — भाई, यह बूटी भी ईश्वर ने क्या चीज बनायी है। सच तो यह है कि तमाम नेमतों की सरताज है और फिर कमखर्च बालानशीन। दमड़ी की लागत में सफर गठ जाता है। एक भाड़ की और मग्न होकर तने बैठे हैं।

दूसरा — वाह गुरु खूब छनवायी तुमने! हम घूम-घूम के सदके!

तीसरा — अरे यार, इस अनमोल जवाहर की कीमत कोई क्या लगाकर बतायेगा। तीनों लोक का साम्राज्य एक तरफ और यह नेमत एक तरफ! शिव जी महाराज ने इसके अनन्त लाभों को सभी पहलुओं से देख-भालकर तब इस्तेमाल करना शुरू किया था। एक गोला चढ़ा लिया और मस्त हाथी की तरह झूम रहे हैं। क्या मजाल कि रंज और गम पास फटक सके।

चौथा — गुरु इसकी गोली बन्दूक की गोली है जो रंज और दुख को ताक के ऐसा निशाना लगाती है कि तीर अचूक बैठता है वार खाली जाना क्या माने! इधर मन की सूरत देखो उधर तमाम फ़िक्र और परेशानियाँ दुम दबाकर भागीं।

पाँचवाँ — जिसने चार दिन की जिन्दगी में इसको न चखा वह भी कहेगा कि मैं आदमी हूँ। मैं तो उसे अहमक़-नालायक समझता हूँ चौपायों से भी गया-गुजरा। गधे और चौपाये भी उससे अच्छे हैं।

छठा — और गुरु चेहरा कैसा लाल हो जाता है!

सातवाँ — क्या कहना!

ग़रज़ ये लोग केसर की उड़ा रहे थे तारीफ़ के पुल बाँध रहे थे। सच में इसको ऐसा चाव पर चढ़ाया था कि जामो-मय को ताक पर रखकर बेफ़िक्र दम उड़ा रहे थे। इसी बीच एक नौजवान जटाधारी तशरीफ़ लाये। लोगों ने बड़े तपाक से उनका स्वागत किया।

पहला — क्यों मियाँ जौहर, यह तख़ल्लुस ही रखना। जानते हो कि कभी कुछ कहा-सहा भी है?

नौजवान (जौहर तख़ल्लुस) — क्या बताऊँ यार, मेरी तबीयत का शायरी से मेल ही नहीं बैठता मगर अब तक तूमार के तूमार कह डाला। हाँ, तुम्हारे दिलबहलाव के लिए नज़्म में कुछ लिखा है कहो तो सुनाऊँ।

यार लोग — ज़रूर सुनाओ अब इससे बढ़कर कौन मौक़ा हाथ आयेगा। हम लोग दिलोजान से कान लगाये बैठे हैं।

जौहर (हँसकर) — कान लगाये बैठे हो अच्छा तो लो सुनो —

• जब बाग़बाने क़ुदरत ने इस गुलशने गेती को मख़लूक़ के गुलबूटे से मुज़य्यन करके नयी-नवेली दुल्हन की तरह आरास्ता और ख़ियाबान व ख़यामीन की रविशें काटकर बाग़े अदन की तरह पीरास्ता कर दिया शमाइमों के ज़रिये सिंचाकर हर पौधे को अरज़ंगे चीन बना दिया और सहकारियों की जल्वानुमाई करके हर क्यारी को नमूनए बाग़े इरम कर दिखाया। बाग़े दुनिया की हरेक अदा निराली है। हर क्यारी रश्के फ़िरदौसे बरीं बनी और हर गोशा सानिये पुरा हुआ। बादल के गुम्बदनुमा हौज़ में इल्म का शफ़्फ़ाफ़ पानी मुहैया कर दिया और रियाज़त व तहज़ीब की दो नालियाँ बना दीं जिनके ज़रिये से नौनिहालाने चमन सरसब्ज़ व शादाब होते रहें। उस वक़्त तमाम देवता मय अवाम व मुतफ़र्रिक़ राय होकर जगदीश्वर की बारगाहे अर्शनिशाँ में बग़रज़ तहनियत व मुबारकबाद व इज़हारे मसर्रत हाज़िर हुए।

जगदीश्वर ने आप लोगों की बड़ी तवाज़ो व तकरीम की। बड़ी गर्मजोशी से मुसाफ़िहा किया। तआरुफ़े रस्मी के बाद हरेक महात्मा अपने-अपने रुतबे के मुताबिक़ मुतमक्किन हुआ। जब हाज़िराने महफ़िल इत्मीनान से बैठ गये तो जगदीश्वर ने बकमाले शीरीं बयानी व फ़सीहुल बयानी यों फ़रमाना शुरू किया —

मेरे प्यारे दोस्तो! मैं आप लोगों के क़दमरंजा फ़रमाने का तहेदिल से मशकूर होता हूँ और मुझको तवक़्क़ो कामिल है कि मेरी यह बेमहल तसदीहदिही मुआफ़ फ़रमाई जायगी। ज़हेनसीब मेरे कि आप साहबों ने

बराहे तहनियत तशरीफ़फ़रमा होकर मुझको ममनूने मिन्नत किया। मेरे जानोदिल से प्यारे दोस्तो क़ायदे की बात है कि जो मुहिम बिला मुशीराने साहबुर्राय व दानिशमंदाने बेदारमग्ज़ के सलाह व मशविरे के इन्सराम पाती है उसमें अज़राहे आदमी एक न एक नुक़्स एक न एक ऐब ज़रूर क़ाबिले गिरफ़्त रह जाता है। यही वजह मुझको असहाब की ख़िदमत में इल्तमास है कि आप लोग इस अधूरे और नामुकम्मलशुदा काम को नज़रे ग़ौर व तअम्मुक़ मुलाहिज़ा फ़रमायें और मेरे अयूब से मुझको मुत्तला फ़रमायें ताकि मक़रूरे इन्सान इसलाह की सय की जाय।

विष्णु जी महाराज ने जो तमाम देवताओं पर फ़ज़ीलत रखते हैं और एहसास व विकार की नज़रों से देखे जाते हैं दस्तबस्ता ईस्तादा होकर बकमाल इज्ज़ यों अर्ज़ गुज़ारिश की—दीनानाथ! इस दो मंमुस्त की बयान में यह क़ुव्वते-गोयाई व ज़ोरे बयाँ हुआ कि उस हुस्नवे कामिला का एक शिम्मा भी मारिज़े बयान में ला सके जिसके महज़ अदना इशारे पर यह गुलज़ार सरापा बहार मअ़रज़पिज़ीर हुआ। इस दीदए कोर में यह ताक़ते बिसारत हुआ कि उस सनअ़ते एज़दी का मुशाहिदा कर सके जिसकी बात से यह गूनागूँ ख़िलक़त ज़हूर में आयी। इस तबए नाक़िस में यह लियाक़त व फ़िरासत हुआ कि असरारे हक़ीक़ी का एक ज़र्रा भी इदराक कर सके जिसकी नैरंगकारियाँ एक-एक ज़र्रे से मुनकशिफ़ हैं। इस दीदए दिल में यह इस्तइदाद हुआ कि अनवारे सरमदी का इनकशाफ़ कर सके जिसकी रोशनी से सारा ज़माना रौशन है और जो बजीले यहाँ पर नक़्शो मुहीत है। अभी चन्द ही दिनों की बात है कि बजुज़ तीरा-ओ-तार ख़िला के कुछ भी न था। मगर यह क़ुदरत ने तुर्फ़तुल ऐन में कुछ से कुछ कर दिखलाया। इस चमने बेख़िज़ाँ को बहुमा सिफ़ाते मौसूफ़ व अज़ हुस्ना मक़ामात मुनस्सा व मुज़ैय्यन बनाया। पस इस कमतरीन का क्या मुँह है कि उसको नज़रे एतबार देखे मगर चूँकि अन्तर्यामी महाराज अज़ल से नियाज़मन्द जैसे फ़ज़ीलतबआअत मख़लूक़ की अर्ज़दाश्त किये आम इससे कि वह वाजिबुलअर्ज़ हो या बेमसलहत समाअ़तपिज़ीर हुआ करती है, कमतरीन को कुछ इल्तमास करने की जुरअत होती है। इजाज़त का मुस्तजी है।

जगदीश्वर — मेरे प्यारे दोस्त मैं तुम्हारे तर्ज़े-अत्वार से निहायत महज़ूज़ हुआ। मेरे बसीलोया तुम्हारी कलामे मोहरबार से दुरें बेबहा चुनने के लिए हमातन मुश्ताक़ हो रहे हैं।

विष्णु जी — दरयाफ़्त कि अफ़्सरानामे रंगारंग कमाहक़्क़ मुनासिब नवादात व नौ ब नौ हैवानात से मामूर किया जायगा। मज़ामीन ख़ुलासा ज़हूर में आयेगा। हैवाने नातिक़ अग़राज़ मज़मूआत मज़मूआत माने नसनुमा के लिए तमहुक व तक़ल्लुफ़ का होना कहलायेगा। लाज़मी है। अगर जगदीश्वर इस उबूदियतकेश को अपने बड़ अफ़्ज़ाई ख़िदमते रिफ़ाहआमी तक़दीस फ़रमायें तो आफ़्तार अहिद्दे दिल व सरगर्मिये तमाम बमतक़ाबेकार मशूरा में सरगर्म रहेगा और अंजामदिहीये ख़िदमते माहूदा में कोई दक़ीक़ा फ़रोगुज़ाश्त न करेगा।

जगदीश्वर — मैं इस बात का इज़हार बकमाल मसर्रत करता हूँ कि तुमने इस मुहिम को अंजाम रसानी अपने सर पर ली और मुझको उम्मीद क़वी है कि तुम इस बारे गरां को इस्तक़लाले मुस्तक़ल व हुस्ने तदबीर से इन्तहा बजा लोगे।

विष्णु जी की जब यह इस्तदुआ मंज़ूर की गयी थी उन्होंने चन्द लम्हे की ख़ामोशी के बाद फिर कहा — जहांपनाह महाराज। दरख़्तान को तैयार व आबाद करने का तरीक़ा अहसन्तरीन यह है कि कुऍं से एक नाली बनायें और हर क्यारी में पानी पहुँचायें। अगर हर पौधे के लिए एक-एक नाली बनायी जाय तो वक़्त बेइन्तहा और हर्ज अज़ीम वाके हो। यह बहुत बिला अगरचे एक ही अपने तरीक़े से मुफ़ीदतरीन होने की क़ाबलियत पूर में नहीं पाता। यह उम्मीदवार है कि जो तरावत बर्ग दरख़्त से मुनासिब है, न कोई उससे मुस्तग़ना होता है और न वह ख़ुद किसी से मुस्तग़नी होती है बहुतर की मुहीम व मख़्तसार बनायी जाय। जम्हूरीन मज़रूए ज़मायक़ को नाले रिज़्क़ से तैयार करेगा। पर हर पौधे को जुदा-जुदा व फ़र्दन-फ़र्दन सैराब करना तरावत का काम होगा। सिहाना इसकी इमदाद से शीरक्मेश को उमूरे मुतालिक़ा के अंजाम देने में निहायत आसानी होगी।

जगदीश्वर ने विष्णु जी की दरख़्वास्त बकमाल कुशादापेशानी मंज़ूर फ़रमायी और उनके फ़हमे आला व ज़कावते तबा पर बवजूह मसरूर व मुब्तहिज हुए। बाद अज़ाँ ब्रह्मा जी महाराज ने मुनहनी सर व दस्त बस्ता होकर नर्मी व लजाजत से अर्ज़ किया — दीनानाथ! यह आसी भी कुछ गुज़ारिश किया चाहता है। इजाज़ते तकल्लुम का मुल्तजी है।

जगदीश्वर ने निहायत लुत्फ़ टपकानेवाले लहजे में फ़रमाया — ऐ मुनव्विरे अक़्ल व मख़्ज़ने दानिश! ऐ मुसन्निफ़े वेद व बानिये आफ़रीनश! ऐ देवताओं के ताईद व तरबियत के मुजिद! ऐ रमूज़े हक़ की कलीद! मेरे गोशेहोश तुम्हारी ज़बाने तूतीबयान को गुल-अफ़्शानी करते हुए देखने की निहायत शायक़ हैं।

ब्रह्मा जी ने बजायते मुर्तास्सिम होकर फ़रमाना शुरू किया — दरहालेकि यह मख़लूक़ मेरी मरवाते नुत्फ़-अरवाह से आबाद होगी जिनके अजसामे बज़ाहिरी तग़ैयुरपज़ीर होंगे जिनको बरक़रारिये मख़लूक़ात इजाइये वक़्ती महसूस होंगे और हयात का दारोमदार फ़ुसिल्लियत रिज़्क़ पर है। हलाकत की ताक़ातें कोशिश बसूद व बकार फ़ानी होंगी। क़याम व बक़ाये दुनिया के लिए सिलसिलए हयात व ममात जारी रखना अज़्बस लाज़िमी होगा। बिख़्लाफ़ इसके अगर सिलसिलए फ़ना बराबर जारी रहेगा तो मुद्दते क़लील में यह दुनिया जा-बजा से ख़ाली व ग़ैर-आबाद नज़र आयेगी। पस बदीं नज़र कि यह सिलसिला मुनक़ता न हो उसमें हैवानी की तरकीब पेशनज़र करनी पड़ेगी ताकि अमवात से जिस क़दर कमी वाक़े हो पैदाइशों से पूरी हो जायगी। यह जाँनिसार इस ख़िदमत की तामील का तकफ़्फ़ुल होता है और बमुआविनते जमात फ़रायज़े मुतअल्लिक़ा को बकमाल ज़र्रेबीनी व वाक़िफ़कारी अंजाम देगा।

जगदीश्वर — तुमको ममात की मदद से क्या फ़ायदा मुतसव्विर है?

ब्रह्मा — महाराज बनीए नौअ इंसानी में हर वक़्त के आमाल व अफ़आल मुतशाबे व ममासिल न होंगे। कोई तो मुत्तक़ी व मुतवरिए, पाक व रास्तबाज़ होगा और कोई मुफ़्तरी व दोषसाज़ कोई उमर का वफ़ादार होगा कोई सियासत का मस्तूजिब कोई दसीक़ुलअक़्ल होगा और

कोई सखी कोई मुसरिफ़ कोई बख़ील कोई सखी कोई मुमसिक कोई नर्म-दिल और कोई संगदिल ग़रज़ हर फ़र्द बशर के आमाल व अख़लाक़ में बेइन्तहा इख़्तलाफ़ होगा। जिस शख़्स के औसाफ़ हमीदा व अतवार पसंदीदा रहे हैं, जिसने बदीमहमात खुद किसी मुतनफ़्फ़िस को अज़ीयत नहीं पहुँचायी अपनी नफ़्सानी व तरग़ीबाते दुनियावी को पास फटकने न दिया जादए रास्ती से मुनहरिफ़ न हुआ और अपनी तमाम हरकात व सकनात में सूरते ईमानिया की हिदायत पर अमल किया वह शख़्स ईश्वर का नूरे नज़र होगा और तामुद्दते मुनासिब बेरे नजात रहेगा और जो शख़्स बदपुर्दगिये नजात रहेगा वह सिलसिलए तनासुख से छुटकारी पायेगा अनवा व अक़्साम के असबाबे ऐशो-इशरत उसको मयस्सर होंगे लेकिन सवाबे उठायेगा बदकिरदार से अफ़सुर्दा होकर उक़ूबत का मज़ा चखेगा मसर्रत का मज़ा बसरत उसकी मीरास होगी और ख़ुद उसका इन्तक़ाम होगा। जब नजात बमहदीम को हासिलाते मैलो-नार में नहर देखी क्योंकि जो नेक है वह बमुहाफ़िज़ते नजात वाले हरम के मज़े लूटेंगे और वह जो बद है वह फिर इसी दुनिया में रवि पावेंगे।

ब्रह्मा जी की दरख़्वास्त भी मंज़ूर हुई और वह ख़ुशी-ख़ुशी अपनी जगह पर जा बैठे। बाद अज़ाँ महाराजा इन्द्र ने दुनिया में अम्नो-अमान क़ायम रखने का ज़िम्मा लिया और हुक्मरानी को बतौर मुशिर व मुआविन तलब किया। उनके बाद भी अन्य देवताओं ने अपनी-अपनी राय ज़ाहिर की मगर शिव जी महाराज जोगियों के सरताज आरिफ़ों के साहिब दुनियावी मआशियत के मालिक आफ़िलों के हादी पीर-फ़ुनिन्दे कोह-ओ-बारी ज़ाहिदों के रहनुमा दरवेशों के मुश्किलकुशा फ़क़ के मुर्शिद मैयिद्दियों के मुरशिद रियाज़त के बानी मैयिद्दियों के हामिद आबिदों के दस्तगीर, आक़िबुल्मीत व रौशन-ज़मीर, देवताओं के सरमायए नाज़ मुम्ताज़ अज़ आलो-निमाज़ जो सर बजुनूब होकर बैठे तो ऐसे मस्त हुए गोया मुराक़िबे में बैठे हैं, बिल्कुल दुनिया व माफ़ीहा से बेख़बर। आख़िर कार परमेश्वर ने आपकी तरफ़ नज़रे इल्तफ़ात मबज़ूल किया और एक ख़फ़ीफ़ तबस्सुम के साथ फ़रमाया — अय भोलानाथ! हमारे महमान हैं

अगरचे रिसाले सनायक व महसूरे आम मुताबिक इत्तफ़ाक़ किये हैं और उम्मीद की जाती है कि उनके मक़बूलपिज़ीर होने से सारे दुनिया बेशक बहुस्ने तमाम अंजाम पायेगा। मगर तुम जो हमारे हबीबे ख़ालिस व दोस्त हो न मालूम क्यों ख़ामोश बैठे हो। तुमको लाज़िम है कि इसबारे मुफ़स्सल में हरगिज़ ताख़ीर न किया करो और ऐन इख़्लास ऐसे मौक़ों पर जहाँ यही ग़रज़ मद्देनज़र रखी गयी है।

इसके जवाब में शिवजी ने सर को जेबे तफ़क्कुर से बाहर निकाला और अपने डमरू को बजाकर बलहजे दाऊदी व खुश-अलहानी तरन्नुमपरदाज़ हुए —

प्रभु तुम मेरे आक़ा
मैं हूँ तुम्हारा चाकर प्रभु और तुम मेरे दाता
मनमोहन, संसार में बाबा क्योंकर तोड़ूँ नाता
प्रभु, तुम मेरे आक़ा
पाप की गठरी सिर पे लदी है मुझ से न निकले रास्ता
कृपादृष्टि मुझ पर प्रभु फेरो मुझे अब कुछ न सुझाता
प्रभु तुम मेरे आक़ा
योग महाजन प्रभु मोहे धन्य धन्य है धन्य विधाता
जिन प्राणी ने यह धन पाया उसे अब कुछ न सुहाता
प्रभु तुम मेरे आक़ा

इस भजन को इस लबो-लहजे में अदा किया कि तमाम हाज़रीन वज्द रक़्स करने लगे। अक्सर महमान वज्द में आ गये। क़ामिल दो घण्टे तक महफ़िल में अजीब अज़ख़ुदरफ़्तगी का आलम रहा। जब ज़रा होश दुरुस्त हुआ तो शिव जी ने फ़रमाया — दीनबन्धु, आप मेरे हाल से वाक़िफ़ हैं। मुझमें एक ऐब यह है कि साफ़गो हूँ। परदादारी से मुझको सख़्त नफ़रत है। मैं दूसरों के ऐब से चश्मपोशी और इग्माज़ करना नहीं जानता। यह जो ब्रह्मा विष्णु इन्द्र, कुबेर और दीगर असहाब ने इरशादें फ़रमायी हैं वो मेरी नज़रों में सब की सब मज़मूम हैं। मैं देवताओं की तहक़ीर नहीं

करता। यह लोग जरूर काबिलेएहतरामीम हैं मगर उनकी मसलहत-अंदे- क़ाबिले समाअत हरगिज़ नहीं। दुनिया दारे मकाफ़ात है। दुनिया ब दो दिन रहते हैं। दुनिया नाहमवार कहलाती है। अलबत्ता इस बाग़े दरगाह से उस किस्मके जनसाम में वही लोग जायेंगे जिनका जिस्म गुनाह मासूम हो गया है और जो इस मुक़द्दस सरज़मीन में क़दम रखने के क़ाबिल नहीं हैं। पस जो उमूर कि अलावा के हसूले नजाते रूहानी में मदद हों वह पत्थर-मिस-ज़हर मज़मूम व मायूब हैं। इस हकायत से जो इनाके फ़रमाये हैं वह सब के सब इंसान को दुनिया की तरफ़ मायल व राग़िब करने वाले हैं। पस मेरी नज़रों में हेच व पोच। आप ज़रा मेरी तरफ़ मुख़ातिब हो जायें। जहाँ इंसान को असबाबे ज़ाहिरी पर फ़रेफ़्ता व मायल करने के लिए बेइन्तहा उमूर मुहय्या व फ़राहम किये गये हैं वहाँ उसके ख़यालात को बजाये बदी की तरफ़ रुजू करने के लिए कम अज़ कम इन असबाबे सलासा का दुनिया में रायज किया जाना ज़रूरी मालूम होता है — फ़न इस्तगना व भंग और मुझको उम्मीद है कि यही तीनों चीज़ें बेइन्तहा तर चीज़ों की इश्तमाई कूवत के मुक़ाबले में हरगिज़ कमज़ोर या नाक़ाबिल न ठहरेंगी।

जगदीश्वर — (मुस्कुरा कर) क्यों मुफ़लिस भला फ़न व इस्तगना तो बजाहिर इंसानी को हमारे बालमी की तरफ़ रुजू करेगी मगर भंग से किस किस्म का फ़ायदा मक़सूद ज़ाहिर है?

शिव जी — हस्बुल तक़रीर जनाबे चहारवदन (ब्रह्मा) दुनिया के हर मुतनफ़्फ़िस के औज़ा व किरदार, अख़लाक़ व अतवार में बेइन्तहा इख़्तलाफ़ पहुँचा। मैं इसकी ताईद करता हूँ। पस कोई तो मफ़लूकुलहाल और कोई तो अपने मज़ाक़ में सरगर्म और कोई तहसीले इल्मात में मसरूफ़, कोई ग़ाफ़िल व कमअक़्ल कोई काहिल और ऐशपसन्द। जो लोग कि अफ़- कारे दुनियावी से बाज़ार हैं वह बआसानी तोशए आख़िरत के जमा करने में सरगर्म हो सकते हैं। पर जो लोग कि मुफ़लिस व कंगाल मुतहम्मिले अयाल व अतफ़ाल नाने-शबीना को मुहताज और तहसीले मआश में हैरान व सरगर्दां हैं, उनके ज़माने को असबाबे जहानी का गुज़री मज़ा चखाने

के लिए यह भंग अक्सीर सिफ़त होगी। क़दीम तकल्लुफ़ात से पीछा छुड़ा कर दम भर के लिए आलमे बाला की सैर व तफ़रीह करने के लिए यह भंग रहनुमा होगी और यही भंग उनके दिलों पर असरारे हक़ीक़ी के इन्कशाफ़ करने का ज़रिया होगी। किसी शायर ने इसके औसाफ़ को यूं बयान किया है —

भंग वासिए फ़ख़्रो इज़्ज़त है, भंग हामिए इज़्ज़ो वक़ार है
भंग अहले दिलों का तोहफ़ा है, भंग ही मुफ़लिसों का सरमाया है
भंग है एक वलियए उज़्मा जिससे बेपरवा हुई है मला
भंग नूरे नज़र फ़क़ीरों है भंग नूरे जिगर ग़रीबों है
भंग ही के तुफ़ैल से आलम तालाबन्द पड़ा यूँ ही आलम
भंग से ज़ेहन तेज़ होता है, भंग से रंज दूर होता है
भंग होता अगर न दस्तपज़ीर, तब बताए कहाँ से होते अमीर
दूनी फ़लसफ़ा मुनासिब होती किस्सागोई भी कमकम होती
शमा'रिफ़त का निशान मिट जाता, सच्चे हस्ती से नाम भी उठ जाता
अफ़लिसा नापसूद हो जाते, अग़्निया पुरग़रूर हो जाते
शायरों का न कोई पता मिलता, ऐसी मशहूर शायरी के बग़ैर
इस्लामी शायरों का ऐसा मज़मून बनता कहाँ होता?
उनके ज़िक्र जिस तरह चलता, लोग आज़ियों में सर धुनता
भूले सबा पीनकी होती, बुलबुले ज़िक्र बेताबी होती
ग़ोसमीर सबा हवा होती लेकिन दिल बलाए जाँ होती
पता बाक़ी न नाम शाहों का नाम मिट जाता अहले शाहों का
भंग का जो कोई बयान करे, शेर जो देवनागरी मे करे
इसका दुनिया में बोलबाला है, इससे आफ़ाक़ में उजाला है
दम ग़नीमत है इसके सब गुन है, पर न हो यह तो यां सभी सुन है
ऐब दीवाना क्या है, भंग है भंग, इसने उसका किया है क़ाफ़िया तंग
भंग पीकर जो कोई जंग करे, दम में दुश्मन को अपने दंग करे
हो मुख़ालिफ़ तमाम एक तरफ़ वस्तोपा उसके जिसके मज़मून सख़्त
दम में भंग उसका अंग-भंग करे, तोड़कर हाथ पैर तंग करे

यार मुख़ालिफ़ हो मिस्ल शिवाजीन, भंग उसको बोतलमें रक्खे पहीत
खर्चा इसराफ़ हो क्यों मालूम भंग की बास से मस्त रही है चूम
ढंग ही उसका कुछ निराला है, उसका हमसर न देखा जाता है
एक माशूक़ शोख़-ओ-संग है ये जिसकी आशिक़ से बेदिरंग है ये
मुनहरफ़ नहीं ये करती है अपने आशिक़ का दम ये भरती है
जो है माशूक़ यार ये आशिक़ है, यार की अख़्तियार तालिब है
इश्क़ में इसके जो हुआ है मगन, गोया उसको मिला है बोध का धन
उससे वोचो-मिन्नार है छिन-छन सुनते हैं उसकी मीठी-मीठी बात
उसकी सोहबत से जो मसरूर हुआ एक है उसका फ़िकर दूर हुआ

बदनीस्वर — बस करो यार, बस करो इतने औसाफ़ जिसके हों भला वह क्या सिफ़ारिश का मुहताज हो सकता है।

अलग़रज़ शिव जी की रज़ाए बक़ाबत की ख़ूब ही तारीफ़ हुई। भंग की मंज़ूरी हो जाने से लोगों में ख़ूब जश्न मना तमाम देवताओं ने इज़हारे मसर्रत किया असमान से मुख़्तलिफ़ानी की फूलों की बरखा हुई, गन्धर्व व अप्सरा आये और यह लावनी अलापना शुरू किया —

पियो भंग यार रंग जमाना चाहो
ले लो हाथ में लोटिया और शर मे सिलौटी से लो
पंसख़ोर जमा के आसन भंग यहाँ पर रगड़ो
छोड़ के फ़िक्रें बलाय इलाजी, समझा सब धुन पी लो
ध्यान में शिव जी के सब बैठो माला फूल चढ़ाओ
पियो भंग यार रंग जमाना चाहो

अलग़रज़ इस लावनी के साथ तमाम देवता मुख़ालिफ़तफ़र्मा हुए और जलसा बरख़ास्त हुआ।†

मुंशी बंदूहर ने अपनी पुरज़ोर तबीयत का नतीजा ख़ात्मे पर पहुँचाया।

---

† इस व्यवहार का कोई मेल मुंशीजी की साधारण उर्दू शैली से नहीं। भारी-भरकम दुर्बोध इबारतों से भरी हुई फ़ारसी से बोझिल उर्दू जिसमें केवल विभक्तियाँ उर्दू की होती हैं किसी समय कायस्थों की उर्दू

चारों तरफ़ से तारीफ़ों की सदा बुलन्द हुई। मेंगिड़ियों ने उनके विचारों की बुलन्दी और तबीयत की सूझ-बूझ की खूब तारीफ़ की।

इनमें कुछ लोग नश्काराबाजी कर रहे थे। उस मण्डली में से एक महाशय जो अपनी हुलिया से शरीफ़ और पढ़े-लिखे मालूम पड़ते थे नमकीन हुस्न के मज़ों का बड़े विशद ढंग से चित्रण कर रहे थे और उनकी मण्डली के लोग कान लगाकर सुन रहे थे। कुछ बेइपेस लड़कियें बलाम सैमोट कस कस के तालाब में धमाधम कूद रहे थे। तैराक लोग अपने-अपने करतब

की विशेषता थी। ऐसा लगता है कि इस बेमेल टुकड़े को यहाँ डालने में जिसका मूल कथा से कोई संबंध भी नहीं है लेखक का उद्देश्य कायस्थों की इस उर्दू का मज़ाक़ उड़ाना है। यह सोचकर इस पद्यखण्ड को ज्यों का त्यों देना ही ठीक जान पड़ा।

थोड़ी-सी बात को ढेरों शब्दों में व्यक्त करना यह भी इस शैली का एक गुण है। यही बात यहाँ भी दिखायी पड़ती है।

बात इतनी ही है कि जगदीश्वर ने जब यह सृष्टि रची तो ब्रह्मा विष्णु महेश इन्द्र कुबेर आदि देवता जगदीश्वर को बधाई देने के लिए उनके पास पहुँचे। उसी प्रसंग में उनके बीच फिर मनुष्य के स्वभाव उसकी प्रवृत्तियाँ सृष्टि में उसके स्थान को लेकर चर्चा छिड़ गयी। उसी चर्चा के बीच से यह प्रश्न उठा कि मनुष्य को सदाचार के मार्ग पर बनाये रखने के लिए कैसा क्या विधि विधान होना चाहिए। अलग अलग देवताओं ने अपने अलग-अलग समाधान दिये। पुण्य को पुरस्कृत करने के लिए स्वर्ग और पाप को दंडित करने के लिए नरक की व्यवस्था हुई। उसी प्रकार पापात्माओं के लिए जनम-मरण के अनन्त चक्र की और पुण्यात्माओं के लिए मोक्ष की व्यवस्था की गयी। ब्रह्मा विष्णु, महेश इन्द्र आदि ने अपने ऊपर अलग-अलग कार्य-भार लिये। शिव जी महाराज ने और सब बातों के साथ-साथ भंग का राग अलापा।

इन्हीं कुछ बातों को बड़ी लच्छेदार शब्दावली में घोंटकर यहाँ पर पेश किया गया है।—स

दिखा रहे थे। जो लोग डुबकी लगाने की कला में माहिर थे वो डुबकियाँ लगा-लगाकर लोगों से तलब कर रहे थे। कहीं अखाड़े में कुश्ती हो रही थी। पहलवान लोग अपने दाँव-पेंच लगाकर जोर-आजमाई कर रहे थे। तमाशाइयों की भीड़ थी। ठट के ठट लोग जमा थे। यह औरतें भी यहीं से होकर गुजरीं। यार लोग आँखें फाड़-फाड़कर घूरने लगे। जैसे फब्तियाँ उठने लगीं। जो हजरत हुस्न के नमक और रंग की सफ़ेदी के झगड़ों में फँसे हुए थे उन्हें अब रसिकों को प्रत्यक्ष उदाहरण देकर अपनी बात उनके दिमाग में बैठा देने का खूब मौक़ा हाथ आया। आपने फ़रमाना शुरू किया — देखो भाई, यह जो गोरी-गोरी लड़की बदन चुराये हुए कमर को लचकाती जा रही है, उसके चेहरे पर नमक की नमकीनी है। यह रूप घोबी से मिलकर कैसा छवि दिखला रहा है। देखो उसकी आँखें। मालूम होता है कि नशे में भरी हैं। अच्छा अब उस बगली का मुक़ाबिला फ़रमायें। भी रूप और जवानी में वह पहलेवाली से किसी तरह कम नहीं मगर चेहरे पर वह नमक कहाँ। बिल्कुल रूखा सूखा हुआ। अब तो आप इस गहरे प्वाइण्ट को जरूर ही समझ गये होंगे।

जब यह श्रीमान् अपना दार्शनिक व्याख्यान समाप्त कर चुके तो यारों को साथ लेकर औरतों के साथ हो लिये और क़ाफ़िये कसना शुरू किया।

एक — यार, जो बचपन से कानों सुना करते थे वह आज आँखों देखा।

दूसरा — क्या है भाई, जरा मैं भी आँख सेंक लूँ।

तीसरा — आज पार्वती जी की सहेलियाँ अप्सराएँ कैलाश पर्वत से उतरी हैं। जिनको दर्शन मिलेगा वे तर जायेंगे। हम लोगों का फ़र्ज है कि जरूर दर्शन करें। जो चूके वह बेवकूफ़। बिल्कुल पापी। बल्कि पागल।

चौथा — यारो छः बरस से परियों के वशीकरण का अमल चिल्लोमान से कर रहा हूँ मगर कभी अकेले में भी देखना नसीब न हुआ। आज इस अमल का असर पड़ा है आकर। क्यों उस्ताद, क्या शीशे में उतारा है इनको?

पाँचवाँ — यह न कहिये। यह तो आप ही की कारस्तानी है। वल्लाह बड़े पुरुमस्ताक हो।

चौथा — अजी यह तो अपने बायें हाथ का करतब है। चुटकी बजाने में हजारों परियाँ हाथ बाँधे हाजिर हो जायें मगर उनमें यह नमक और सादगी कहाँ !

पाँचवाँ — सादगी ! सादगी की एक ही कही। आप इनको सादा मिजाज कहियेगा। अरे यह तो भोली-भाली है। घाट घाट का पानी पिये है। देखते नहीं तिरछी नजरें, मालूम होता है कि सीधे कलेजे में उतर जायेंगी !

किस्सा मुख्तसर यह है कि यह हजरत इधर से उधर चक्कर लगा रहे थे अगर कोई नमकीली सूरत नजर पड़ी तो उसे घूरने लगे। यह औरतें निहायत आन-बान से इस जगह से भी आयें यहाँ और तालाब से कोई दो सौ गज के फ़ासले पर एक बाग में हवा खाने चलीं। यह बाग निहायत खुशनुमा बना हुआ था। ठीक बीचोंबीच एक संगमरमर का हौज बना हुआ था। हौज के चारों तरफ़ खूबसूरत कुर्सियाँ रखी हुई थीं ताकि अगर कोई मजामामत सैरो-तफ़रीह की गरज से आये तो उसे बैठने की दिक्कत न हो। जिस वक्त यह औरतें उस बाग में दाखिल हुईं वो अटिलमन उसी हौज के किनारे बैठे हुए किसी बात पर बातें कर रहे थे।

पहला (दकियानूसी खयालात के आदमी) — क्यों हजरत भला यह भी किसी किताब में मना किया गया है कि औरतें घर के बाहर कदम न निकालें ? सब काम घर ही में हो ?

दूसरा (सुधरे सुसंस्कृत विचारों के आदमी न तो यह अंग्रेजियत की लेते थे और न पुरानी लकीर के फ़कीर थे। जो काम करते थे समझ-बूझ के साथ) — मैंने तो आज तक किसी प्रामाणिक पुस्तक में ऐसी बात लिखी नहीं देखी जिसका यह विषय और उद्देश्य हो कि औरतें घर के अन्दर कैद कर दी जायें और उनको बाहर निकलने की कतई मनाही कर दी जाय।

पहला — तो फिर आप लोग इस मसले पर क्यों इतने जोरों के साथ बहस करते हैं ?

दूसरा — हम लोगों की यह मंशा नहीं है कि औरतें घर में बन्द की जायें। मगर हम लोग इस बात को हरगिज मुनासिब न समझेंगे कि सांसारिक कर्तव्यों के पूरा करने में उनको पूरी आजादी दे दी जाय या बिल्कुल निरंकुश कर दिया जाय। अगर औरतों का निकलना कतई तौर पर बन्द कर दिया जाय तो उससे दुनिया के कामों में बड़ा विघ्न पड़े और गरीब लोगों का काम तो दम भर भी न चले। इसलिए यह लाजिम आया कि औरतों को जरूरतन् और मजबूरी दर्जे घर से बाहर निकलने की इजाजत दी जाय। मगर यह बात ध्यान में रहे कि वे सीमा से आगे न जाने पायें।

पहला — इसको जरा खोलकर बतलाइयेगा मैं ठीक से न समझा।

दूसरा — मेरे कहने का यह मतलब है कि औरतें बाहर निकलें जरूर मगर मजबूरी वश। सैर-सपाटे के लिए अकेले हरगिज नहीं। बिना जरूरत छुट्टा सांड़ की तरह मटरगश्ती करना बहुत बुरा मालूम होता है।

पहला — बिना जरूरत कोई क्यों इधर-उधर घूमने लगा?

दूसरा — इसकी क्या ऐसी सख्त जरूरत है कि औरतें भोर में नित्य कर्म से निवृत्त होकर मन्दिरों में पूजा के लिए जाय? पूजा के लिए नियत की सच्चाई और ध्यान की एकाग्रता शर्त है। सिर्फ नुमाइश से कुछ हासिल नहीं और खासकर सांसारिक कर्तव्यों के पूरा करने में। अगर पूजा का सब सामान घर के अन्दर इकट्ठा कर दिया जाय तो मेरी समझ में कोई दिक्कत न हो। सब काम बिना झंझट चला जाये।

पहला — आपने अभी फरमाया कि क्रियाओं में बाहर निकलने की मनाही नहीं। अगर औरतें सच्चे दिल से और लौ लगाकर पुण्य लूटने और मुक्ति प्राप्त करने के लिए मन्दिरों को जाती हैं तो क्या बुरा करती हैं?

दूसरा — मगर गौर करने की बात तो यह है कि मन्दिरों में जाने के बाद भी उनकी तबीयत की सच्चाई कायम रह सकती है या नहीं।

पहला — मैं तो समझता हूँ कि उनकी नैतिक दशा रोज-ब-रोज सुधरेगी और अच्छे नतीजे पैदा होंगे।

दूसरा — यह आपकी ग़लती है। हरगिज़ ऐसा नहीं। मन्दिरों की हालत इस ज़माने में ऐसी है कि कुछ न कहना ही बेहतर है। महंतों के हथकंडों की चर्चा अगर मैं बहुत थोड़े में ही करूँ तो पोथे का पोथा हो जाय और यह कुछ महंतों ही की बात नहीं है। जो लोग मुफ़्त की चपातियाँ करेंगे दूसरे के सिर पर फुलौड़ियाँ खायेंगे वे आख़िरकार ऐशपसन्द और आरामतलब हो जायेंगे। जिन दिनों इंगलिस्तान की सभ्यता और संस्कृति इस शिखर पर न पहुँची थी वहाँ पर यह रस्म थी कि शाही इन्साफ़ करने वाले, पादरियों के ख़िलाफ़ मुक़दमों की सुनवाई के लिए, अयोग्य समझे जाते थे। पादरी लोग कैसे ही संगीन जुर्म करें, बड़े से बड़ा गुनाह कर बैठें मगर गवर्नमेण्ट कुछ पूछताछ न करती थी। इन पादरियों के मामलों का फ़ैसला पोप के दरबार से होता था। मगर चूँकि वह ख़ुद भी इसी फ़िरक़े का आदमी था और फ़िरक़े की बदनामी को डरता था इस वजह से अक्सर ऐसे लोग जो सज़ा पाने के क़ाबिल थे बेदाग़ छूट जाया करते थे। इन लोगों ने ऐसा अन्धेर किया ऐसी ऊधम मचायी कि प्रजा को भयंकर कष्ट पहुँचा और वह सब मिलकर अपने वक़्त के बादशाह के दरबार में हाज़िर हुए और अर्ज़ की कि हुज़ूर इन बने हुए पाखंडी पादरियों के मारे हम लोगों का नाक में दम हो रहा है। उनके अन्याय इस हद तक बढ़े हुए हैं कि जिसकी कोई सीमा नहीं। बच्चा-बच्चा इनके ज़ुल्मों से दुखी है। तमाम सल्तनत में वावेला मचा हुआ है। अगर हुज़ूर सुनवाई न फ़रमायेंगे तो रिआया बाग़ी हो जायगी गिरजों को जड़ से खोदकर फेंक देगी महल से महल और ईंट से ईंट बजा देगी उन साधुओं को क़त्ल करके उनका नामो-निशां हस्ती के सफ़े से मिटा देगी। बादशाह दूरदेश और मामले को समझनेवाला आदमी था ताड़ गया कि यह सब इस वक़्त झल्लाये हुए हैं अगर कोई बात इनके ख़िलाफ़ की गयी तो ज़रूर से ज़रूर बिगड़ जायेंगे और चूँकि ख़ुद भी कई बार पादरियों की ज़्यादतियाँ देख चुका था उसने नादिरशाही हुक्म निकाला कि आज से पादरियों को आपसी फ़ैसले का कोई हक़ न होगा। सभी मामले शाही अफ़सरों के हाथों तय पायेंगे। पादरियों के कान में इस ख़बर के पड़ते ही एक खलबली-सी मच गयी। फ़ौरन आर्च बिशप आफ़ कैण्टरबरी के

यहाँ जमा होकर अपने सबसे बड़े महंत पोप आफ़ रोम को इस अपमान की सूचना दी। वह बहुत ही नाराज हुआ और इंगलैण्ड के बादशाह को कम भाया। इसके बाद दूसरे देशों के बादशाहों को इंगलिस्तान से लड़ाई छेड़ने पर आमादा किया और खुद भी दूसरे-दूसरे जरियों से झगड़े-फ़साद को भड़काता रहा। मगर बादशाह ने तमाम आफ़तों को दम के दम में दूर कर दिया क्योंकि रिआया उस पर जान न्योछावर करने के लिए सिर हथेली पर लिये हुए थी। एक इतिहासकार लिखता है कि जिस दिन यह अख्तियार पादरियों के हाथ से निकला उसी दिन इंगलिस्तान के उस सांस्कृतिक भवन की नींव पड़ी जो आजकल दुनिया में अभिमान की दृष्टि से देखा जाता है।

रिआया ने घी का चिराग जलाया। घर घर जश्न मना। आप इस उदाहरण से यह देख सकते हैं कि इन साधु-संन्यासियों पुरोहितों पादरियों के हाथों रिआया किस क़दर मुसीबतें उठा रही थी। आजकल हमारे पुजारियों का भी बिल्कुल यही हाल है। जमाने भर के मुफ्तखोर, काहिल ऐशपसन्द लोग इसी जरिए से अपनी जीविका प्राप्त करते हैं और भोले-भाले सीधे-सादे लोगों को अपनी चालबाजियों का शिकार बनाते हैं। उनकी नैतिक दशा इतनी बिगड़ी हुई है, कि तोबा ही भली। चिराग लेकर ढूंढिये मगर तमाम फ़िरक़े में कोई सीधा-सच्चा आदमी न पाइयेगा।

पहला — हजरत इसका तो किसी काफ़िर ही को यक़ीन आयेगा कि महंत लोग इतने खराब होते हैं। आपने तो उनको पाप का पुतला बना दिया।

दूसरा — आपको कभी उनसे काम नहीं पड़ा तभी आपको उनके साथ इतनी हमदर्दी है। कहीं एक दफ़ा भी आप उनके पंजे में आ गये तो आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा। मुझसे कहिये तो इसी वक्त सौ-सौ ऐसे लोगों का नाम गिना जाऊँ जो परले दर्जे के ऐयाश हैं, नम्बर एक के जालिम हैं और इन्तहा दर्जे के बेईमान हैं।

पहला — फ़र्ज कीजिए हम अगर यह भी मान लें कि वह ऐसे मक्कार और चालबाज होते हैं और उनका प्राइवेट रहना-सहना गिरफ्त के क़ाबिल

होता है तब भी इसका हरगिज यह मतलब नहीं कि उनका धार्मिक करेक्टर भी खराब हो।

दूसरा — जनाबमन माफ़ कीजिएगा आप ग़लती पर हैं। उनके व्यक्तिगत जीवन का असर नौजवान तबीयतों पर जितना पड़ता है उसका अन्दाजा करना हम लोगों की शक्ति से बाहर है।

पहला — आपकी बातों से यह सार निकलता है, कि स्नान और पूजा क़तई तौर पर मना कर दी जाय।

दूसरा — जब इस बात की कोई जरूरत नहीं कि ख़ामख़ाह मन्दिर को जायें (क्योंकि पूजा जहाँ कहीं सच्ची नियत से की जायगी उसका पुण्य एक जैसा होगा) तो बेज़रूरत इतनी सब माथापच्ची से क्या हासिल? किताबों में इसका जिक्र ही नहीं आया न तो मनाही है न इजाजत। इस हालत में हमको वह रवैया अख्तियार करना चाहिए जो मौजूदा तहज़ीब और तरक्की की शान के क़ाबिल हो ताकि दूसरी क़ौमें हमारी टीका टिप्पणी न करें। अगर इन्साफ़ की नज़र से देखिए तो यह बुरी रस्म खुद अपनी ही नज़रों में बुरी मालूम होती है। कैसी शर्म की बात है कि ऊँचे ऊँचे घराने की औरतें सबेरे तड़के गंगा-स्नान को जायें तीर्थयात्रा के लिए भी कमर बाँधें ठाकुरद्वारों में भटरगश्ती करें। आप खुद देख सकते हैं कि आवारा लोगों की बुरा-भूरी बुरे लोगों का सामना ज़माने की लानतें और बासना की मुँहजोरियाँ औरतों की स्वाभाविक हया-शर्म पर कैसा बुरा असर डालती हैं। (इन औरतों को देखकर) लीजिए मुआइना कीजिए। यह औरतें देखने में शरीफ़ ख़ानदान की मालूम होती हैं मगर इनसे पूछिये कि यहाँ पूजा को आने की क्या ज़रूरत थी। देखिये कितने बेहूदा निकम्मे इनके साथ-साथ चले आ रहे हैं। आपस में फब्तियाँ कसते हैं। मौक़ा-महल देखकर इन से मज़ाक़ भी कर बैठते हैं। अगर यही पूजा ठीक ढंग से की जाती तो यह नौबत क्यों आती?

यह औरतें खड़ी होकर हौज में मछलियों को देखने लगीं। इसी बीच वहाँ दस-बारह लड़के दौड़ते हुए आये और मछलियों को इधर-उधर घूम करते देखकर बहुत खुश हुए।

एक—बाबा हमें पढ़ने को किताब ले दो।

बाबा—कौन-सी किताब लोगे?

लड़का—क़िस्सा शेरशाह पूरी की लड़की और राजा मालवा के लड़के का।

यह सब एक किताब बेचनेवाले की दुकान पर पहुँचे और किताब बेचे को ख़रीदकर उसी ठौर पर आये और लड़के ने पढ़ना शुरू किया—

क़िस्सा रत्नपाल और क़मरुन्निसा बेगम
लेखक मौलवी मुहम्मद ताहिर ताहिर

एक रोज़ शेरशाह पूरी अपने तख़्त पर बैठा हुआ अमीरों से कुछ सलाह-मशविरा कर रहा था कि एक ख़वास महलसरा से दौड़ती हुई निकली और निहायत बदहवासी से सर के बाल नुचे अपना जिस्म नोचती-खसोटती दरबार में पहुँची। बादशाह उसे देखकर घबरा-सा गया और पूछा—क्यों क्यों, ख़ैरियत तो है?

ख़वास ने रोकर जवाब दिया—जहाँपनाह ख़ैरियत तो बहुत दूर है, आज सुबह से क़मरुन्निसा बेगम का पता नहीं है। तमाम महल की अंगुल-अंगुल ख़ाक छान डाली।

इस ख़बर के सुनते ही बादशाह की तो अक़्ल गुम हो गयी। फ़ौरन तख़्त से उठा और नंगे पाँव दौड़ता हुआ महलसरा में दाख़िल हुआ। देखा तो वहाँ पिट्टस पड़ी हुई है, कोहराम मचा हुआ है, तमाम बेगमें सर के बाल खोले चूड़ियाँ तोड़े कपड़े-फाड़े बेसुध छाती पीट रही हैं। बादशाह ने अपनी प्यारी चहेती बेगम को दिलासा दिया और पूछने लगे कि आख़िर कुछ मालूम तो करो इस तरह रोने-धोने से क्या हासिल? उसने जवाब दिया—या हुज़ूर क्या जवाब दूँ। अभी कल शाम को मैं अपनी बच्ची के साथ बाग़ की सैर को गयी थी। वहाँ से वह मेरे साथ वापस आयी। हाँ आते ही ज़रूर उसका चेहरा कुछ उतरा हुआ था। आज सुबह से पता नहीं है। न मालूम उस बेचारी पर कौन बला आ पड़ी।

इतना सुनकर बादशाह दरबार में आया और हुक्म दिया कि जितने चालाक जासूस इस शहर में हैं अभी मेरे पास दरबार में हाज़िर हों। चुनांचे थोड़ी देर में हज़ारों जासूस एक से एक बढ़कर हाज़िर हुए। बादशाह ने फ़रमाया — शहज़ादी का आज सुबह से पता नहीं है। तुममें जो कोई ठीक-ठीक पता लगाकर सब किसी के सबसे पहले यहाँ हाज़िर होगा उसे पाँच हज़ार सोने के दीनार इनाम दिया जायगा। यह हुक्म सुनकर जासूस अपने-अपने साज़-सामान से लैस होकर टोह में निकले। जिसके जिधर सींग समाये उधर चला। पर एक बुड्ढा जासूस फ़क़ीरी भेस बदलकर आहिस्ता-आहिस्ता इधर-उधर देखता भालता पूरब की तरफ़ चला। कई घण्टे तक वह बराबर धावा मारे चला गया पर कुछ निशान न मिला। शाम के वक़्त एक गाँव में पहुँचकर उसने बाज़ार की सड़क पकड़ी। पहुँच कर क्या देखता है कि एक नौजवान आदमी तमाम हथियारों से लैस हलवाई की दुकान पर मिठाइयाँ ले रहा है और उसके साथ एक और नौजवान शख़्स उसके कंधे पर हाथ दिये खड़ा है। जासूस की तेज़ आँखों ने फ़ौरन पहचान लिया कि अब शिकार फँस गया। लिहाज़ा उसने उनका पीछा किया और यह कहता चला —

मैं हूँ बिदेसी इक भिखमंगा कोई मेरी पार लगा दे।
तीन (उपवास किया है हमने पलक सोय नहिं चैन रे।
भिया हमारा पेट जलत कोई मोहे भोजन करावे रे।
पुन हमारी बड़ी स्वामी त्याग दीन देहिया रे।
अब आइ मिलि चार गिरायो कोई मेरी भूखा बुझावे रे।

उसने यह दरद भरा हुआ गीत ऐसी दर्दनाक आवाज़ में गाया कि शहज़ादी के दिल में दर्द के मारे रुलाई आने लगी। उसने अपने साथी से कहा — प्यारे रतनपाल यह ग़रीब फ़क़ीर भूखा है इसे कुछ खिला दो।

रतनपाल ने जवाब दिया — पहले उससे यह पूछ लेना चाहिए कि इतने वक़्त कौन-सा रास्ता पकड़ें हमको तो कुछ मालूम नहीं और इस वक़्त यहाँ रह जाना ख़तरे से ख़ाली नहीं।

सिखाया सहचारी ने फ़क़ीर से पूछा—

मैं हूँ विदेसी एक मुसाफिर तुम हो विदेसी फ़कीर।
सुना तुम्हारी हम भर देवें, कोई मोहे बाट बता दे रे।
सून के सीधी राह यहाँ हम आय पड़े अफसोस।
तुम से कोई शरण हमारी अब मोहे डगर बता दे रे।

यह सुनकर फ़क़ीर ने कुछ दिल में सोचकर फिर कहा—

पूरब दिशा में चोर लम्पट हैं उत्तर विधि नहिं बाट।
दक्खिन दिशा में नदी पहुँच है पार न कोई उतारे रे।
पच्छिम ओर को जाओ मुसाफिर सब कुछ है भरपूर।
चोर-बटमार न डाकू एकहू कोई नहिं बीच सतावे रे।
बचन को मोरी मानो मुसाफिर तो पच्छिम की राह।
थोड़ी दूर इक नगर बसत है वो आलम घूम बसा है रे।

यह सुनकर सहचारी ने रोनी सूरत बनाकर रतनपाल से कहा—प्यारे, रात यहीं बसर करो सुबह को सीधा रास्ता पकड़ेंगे। इस वक्त मंज़िल चलने में बड़ा डर है। कहीं डाकुओं से मुठभेड़ हो जाय तो नाहक की ज़हमत हो।

प्यारी अगर डाकू हज़ार जान लेकर आवें तो एक भी सलामत न ले जावे। मगर इस वक्त उनसे बचना ही मसलहत है।

यही सोच-समझकर सहचारी ने वहीं बिस्तर जमाया। फ़क़ीर को बिछाया दूर जाया और दोनों आशिक़-माशूक़ गले मिलकर सो रहे। जब यह सोने लगे तो फ़क़ीर उठा और दिल में सोचने लगा इस बेवफ़ा की सूरत कैसी प्यारी है। आज माशूक़ के गले मिल ऐंड-ऐंड सो रहा है, कल यही सर सूली पर होगा। आज माशूक़ की गोद में है, कल सूर मौत की गोद में होगा।

पर उसकी लालच ने उसको न छोड़ा। वह सीधा थाने पर गया और दारोग़ा से कहा कि दो राही कैसी ख़ास पेड़ के तले ग़ाफ़िल पड़े हैं, तुम इसी

दस्त रौंद लेकर जाओ और उनको बाँध लो। खबरदार, होशियार रहना। उसमें से एक जवान बड़ा बहादुर है। उसकी बहादुरी की धूम है।

हाकिम थानेदार सवारों समेत मौत की तरह सर पर पहुँचा और दोनों बदकिस्मतों को क़ैद करके थाने में लाया। यह सब ऐसी ग़फ़लत की नींद सोये थे कि रात को आँख भी न खुली। सुबह को इस दशा में घिरा हुआ पाया।

शहज़ादी ने रोकर रतनपाल से कहा —

नाव मेरी मझधार में डूबत है अफ़सोस।
नहीं है प्यारी कोई न खिवैया जो बेड़ा पार लगावै रे।
भाग में मेरे यही लिखा था, मेट सके ना कोय रे।
लिखेहि विधाता जो माथे में वह कोई कैसे मिटा दे रे।
जान से प्यारे आँखों के तारे मोरे प्रीतम प्यारे।
मैं हूँ अभागिन एक सिहागिन कोई मौत से मोरे मिला दे रे।

शहज़ादा रतनपाल यह दुखभरा गीत सुनकर रो दिया और बड़े करुण स्वर में बोला —

धीरज धरो मोरि प्राण पियारी, छोड़ो तुम मत आस।
जीता हूँ जब तक आस लगी है, ईश्वर तुमको बचावे रे।
भाग तो अपनो हमि दे कैसे क्यूँ दें आस।
तुम हो हमारी म हूँ तुम्हारा कोई जग से तुमको छोड़ा दे रे।

बदकिस्मत दोनों ने आखिरी दीदार किया और मौत के मुन्तज़िर हो बैठे। थोड़ी देर में कोतवाल ने दोनों को जुदा-जुदा कमरे में बन्द किया और जासूस के साथ राजधानी की तरफ़ चला।

बादशाह ने अपनी लड़की को प्रसन्न की आँखों से देखकर कहा — प्यारी, तुमने अपने बूढ़े बाप को ऐसा भुला दिया उसका ज़रा भी ध्यान न किया!

लड़की ने रोकर कहा —

हमको क्या मालूम था होगा गज़ब का सामना।
हाथ से अपने चली जायगी प्यारी हाय हाय।
चली चली आँखों की पुतली हाय हाय।

इन औरतों ने इस दर्दनाक किस्से को सुना और शहज़ादी की क़िस्मत पर अफ़सोस करती हुई चलीं मगर ग़म ग़लत करने के वास्ते एक गीत चलती था पस यह गीत गाने लगीं —

पिया मोरे गले का हार रे, सावन घर आये।

गाती हुई अपने-अपने घर पहुँचीं और प्रतिष्ठित घराने की पर्दानशीन औरतें बन बैठीं जैसे कुछ नहीं जानतीं।

पिया प्रीत ऐसी बला कि फूंके सब घर-बार।
यही लालसा दिल में रहत है कोई पीतम से मिला दे रे।

बादशाह अपनी लड़की के जवाब पर बेहद गुस्सा हुआ और झल्लाकर उसने हुक्म दिया कि रतनपाल की इस हिमाकत को अभी बन्दीखाने में ले जाओ और जब तक इसका जुनून दूर न होगा यहीं पड़ी रहे। इसके बाद रतनपाल की तरफ़ मुख़ातिब होकर पूछा — क्यों जी तुम कहाँ से आये हो तुम्हारा क्या नाम है और यहाँ तुम्हारा क्या काम था? तुमने बादशाह का ज़रा भी लिहाज़ न किया और ऐसा शर्मनाक काम किया। अब तुम्हारी यही सज़ा है कि तुम सूली पर चढ़ाये जाओगे और तुम्हारी लाश चील-कौवों को खिला दी जायगी ताकि दूसरे इससे नसीहत लें।

रतनपाल ने जवाब दिया —

प्रीत की नगरी है बड़ी जो नहीं परजा कोई।
ना कोई राजा राज करे जो ना दुनिया को सतावे है।

बादशाह ने उसे उसी वक़्त सूली पर खिंचवा दिया। दूसरी सुबह को महलसरा से यह आवाज़ सुनायी दी —

(मातमी गीत)

मन बसी आँखों की पुतली हाय हाय।
कुछ न देखा कुछ न जाना चल बसी वह हाय हाय।
ज़िन्दगी का सुख न भोगा चल बसी वह हाय हाय।
मन बसी आँखों की पुतली हाय हाय।
कैसी प्यारी उसकी सूरत कैसा उसका रंगो-रूप।
थी अभी कोंपल जवानी चल बसी वह हाय हाय।
मन बसी आँखों की पुतली हाय हाय।
गुल सी प्यारी चल बसी पर हमको दुख देकर गयी।
कैसे अरमाँ लेकरों दुनिया से निकली हाय हाय।
मन बसी आँखों की पुतली हाय हाय।

हमको क्या मालूम था होगा ग़ज़ब का सामना।
हाथ से अपने चली जानमी प्यारी हाय हाय।
चली चली आँखों की पुतली हाय हाय।

इन औरतों ने इस दर्दनाक क़िस्से को सुना और छहुआरी की क़िस्मत पर अफ़सोस करती हुई चलीं मगर ग़म ग़लत करने के वास्ते एक गीत चलती था पस यह गीत गाने लगीं —

पिया मोरे पके का हार रे, सावन घर आते।

गाती हुई अपने-अपने घर पहुँचीं और प्रतिष्ठित घराने की पर्दानशीन औरतें बन बैठीं जैसे कुछ नहीं जानतीं।

२

रामकली जब सैर-सपाटे करती मकान पर पहुँची तो वहाँ एक नया तमाशा देखा। उसका पीहर डोली-कहार लेकर उसे रुखसत करा ले जाने को आया हुआ था। यह देखकर रामकली का तो कलेजा धुक-सा हो गया। लगी दिल में सोचने कि यह निखट्टू पुछाले बेतमीजी की तरह बीच में कहाँ से कूद पड़ा। इसका तो कुछ वहमो-गुमान भी न था। आखिर कुछ पहले से लिखा-पढ़ी तो की होती। बुरा हुआ। कुछ दिन और भी चैन से कटते फिर देखा जाता।

आखिर बेचारी जब घर में गयी तो चुपचाप मन मारकर बैठ गयी। माँ ने जो देखा कि लड़की गुमसुम हो गयी और हालत अचानक कुछ से कुछ हो गयी तो समझी शायद दिन के झाड़े ने यह बुरी गत कर दी है। कुछ देर तक तो रामकली यों ही गालों पर हाथ दिये बैठी रही। आखिरकार बुखार का बहाना करके खटपाटी-खटपाटी लेकर पड़ रही। जब उसे लेटे देर हुई तो उनको गुमान हुआ कि लड़की कुम्हला गयी। पहले तो सोचा कि सोने ही दो, शायद इसी से जी हलका हो जाय। मगर भगवान की दी एक ही बेटी न रहा गया। बिस्तर के पास आकर कहने लगी—बेटा रामकली उठो कुछ परशाद-वरशाद तो खा लो। कहो जी कैसा है?

रामकली—(भारी आवाज में) अम्माँ हमको फिक्र मत करो हमारा माथा भारी है, मारे दर्द के रहा नहीं जाता।

माँ—तुम उठो कुछ थोड़ा-सा खा तो लो। देखो अभी बात की बात में सर का दर्द दूर हुआ जाता है। मैं तो समझती हूँ कि आदत के खिलाफ़ भूखे रहने से सर भारी होगा। यहाँ तुम खाना खाकर जरा बैठी नहीं तबीयत हल्की हुई।

रामकली—क्या कहती हो अम्माँ सर में तो वो दर्द है कि मालूम होता है फट पड़ेगा और हरारत भी हो आयी है। इस वक्त मैं खाना-वाना नहीं खाने की।

माँ—अरे और कुछ नहीं सुना वह आये हैं अच्छू भइया न!

(यह रामकली के शौहर का दुलारा नाम था।)

रामकली—(कुछ शरमाकर) सच!

माँ—हाँ हाँ सच और क्या तुमसे झूठ बोलने आऊँगी!

रामकली—कब आये और क्या करने आये?

माँ—और लो क्या करने आये! अरे हम लोग तो हरदम मुँह पसारे रहते हैं कि किसी तरह इधर भी आ जाया करें। हरदम उन्हीं पर जी लगा रहता है। बुढ़ौती में नारायन इतना सुन लेता एक नाती दे देता जरा उसका भी सुख भोग लेती नहीं तो मन की लालसा मन ही में रह जायगी।

रामकली—(झेंपकर) कब आये?

माँ—अरे अभी-अभी तो जलती दुपहरिया में धावा मारते चले आ रहे हैं। कहते थे कि बहू को अब की लिवा ले जायेंगे। तुम्हारी सास जरा बीमार है।

रामकली—मर भी जाय किसी तरह तो इस आये दिन की धौंता किचकिच से तो छुट्टी मिले! न मालूम आफत का बोरिया बटोरेगी क्या। सैकड़ों ही दफ़ा तो सुन चुकी हूँ कि बीमार है मरा चाहती है, दम टूटा चाहता है, घुटका लगा है, मय-तब हो रही है, मगर जब देखो अच्छी-खासी हट्टी-कट्टी, मोटी-ताजी चाक-चौबन्द, मोदीखाने की चुहियों की तरह संडा बनी बैठी रहती है!

माँ—बस कर छोकरी बस कर, सास की खूब ही इज्जत की! यह भी कलजुग का सुभाव है कि छोकरियाँ अपनी बूढ़ी-बड़ी को जूती बराबर भी नहीं समझतीं उनके मरने से डालती हैं। कोई कसर उठा न रक्खें और सास ससुर को पानी पी-पीकर कोसें। आज अगर कुछ बुरा भला आ पड़े तो यही खूसट बुढ़िया आड़े आयेगी। तेरा न मालूम कैसा सुभाव है कि उस बेचारी

का नाम जबान पर आया और तूने बर्र की तरह घूमकर वार किया। वह तो तेरी खूब खातिर करती है और तू फूटे मुँह से बात भी नहीं पूछती। तेरा बस चलता तो तू कभी का सास का वारा-न्यारा कर चुकी होती।

माँ की नसीहतभरी बातें सुनकर रामकली को कुछ चोट-सी लग गयी और वह और तो कुछ न बोली चुपचाप मुँह फुलाकर लेट रही। माँ का कलेजा मका कम मानने लगा। आखिर को बेचारी खूब रोती हुई आयी। मनाकर उसे चौके पर ले गयी। अजीब खाना सफ़ाई से परसकर महारानी के सामने धर दिया मगर महारानी बिना भेंट मुँह किये क्यों सोती होने लगी थी। रामकली बराय नाम कुछ मुँह जूठा करके फिर अपने बिस्तर पर लेट रही। जब रात के कोई दस बजे होंगे तो लल्लू भैया दबे पाँव रामकली के कमरे में आये और चुपचाप चारपाई के एक कोने पर बैठ गये। रामकली पर कुछ तो दिन भर की थकान यों ही तारी हुई थी उस पर तुर्रा यह हुआ कि महंत जी की शराब ने दिमाग को फिरा दिया था। इस वजह से वह इस वक्त अपने हवास में न थी लाज-शरम छोड़ दीप ढीला नींद में बेहाल पड़ी थी मगर चूँकि नख शिख से दुरुस्त थी बनाव सिंगार भी खूब कर लिया था रंग-रूप भी अच्छा पाया था और सूरत भी सी-सी सी मं एक उसका शौहर बावजूद उसकी तुनुक मिजाजी के उस पर लट्टू था। यों रामकली दो ही चार दिन ससुराल में रही होगी मगर इतने ही दिनों में उसके और लल्लू भैया के दरमियान कई बार मनमुटाव का इत्तफ़ाक हो चुका था। इस वजह से वह बेचारे दिल ही दिल में कटे जा रहे थे। यों तभी मन के लगातार तकाजों से मजबूर होकर वह यहाँ तक आये थे लेकिन इस वक्त दिल धड़क रहा था कि कहीं अभी उसकी आँख खुली और उसने ले-दे शुरू कर दी तो चुप बैठूँगा। बयानबराय तो है ही उसका कौन ठिकाना। कोई आध घंटे तक तो वह इसी सोच विचार में थे मगर इतनी देर में उनका सहमना भी कम हुआ और उन्होंने डरते डरते उसके जिस्म पर हाथ रखा। उस मक्खन जैसे नरम भरे-पूरे जिस्म का हाथ से छूना था कि जिस्म में एक बिजली-सी दौड़ गयी। अब बस हुआ हो गया और क्यों न होता। आखिर इस उम्र की ताब कहाँ से लाता। इन्तजार ही इन्तजार में रात बीती जाती

है। इसकी भी कोई हद है। उन्होंने जो रामकली को इस तरह नींद में मस्त पाया घर के बाल खुले और बिखरे हुए, तो समझा कि यह भी इसकी एक अनोखी अदा और माशूक़ाना अन्दाज है। उन्हें इस बतकल्लुफ़ी से यह भी ज़ाहिर हो गया कि अब देवता सीधे हो गये। बस उन्होंने ख़ूब ही आहिस्ता-आहिस्ता गुनगुनाना शुरू किया। कोई आध घण्टे के लगभग तो उन्होंने ख़ूब ही नाज़बरदारी की कभी गुनगुनाया कभी बोसे लिये कभी आहिस्ता से एक चुटकी भी ले ली। मजबूर होकर पाँव भी दबाये मगर कामना तो बरकिनार, वह मिनकी तक नहीं। तब तो वह भी कुछ झिझकिया-सा गया और ज़रा तेज होकर ज़ोर से झँझोड़ना शुरू किया। मगर वह तो नशे में चैन थी। दुनिया से बेख़बर। लल्लू की यह हिकमत भी अकारथ गयी। लाचार होकर उन्होंने लोटे का पानी लेकर मुँह पर ताबड़ तोड़ कई छींटे दिये। जब दिमाग़ को सर्दी पहुँची तो ख़ुमार भी दूर हुआ और रामकली ने झट से आँखें खोल दीं। इन जादूगर आँखों का क्या पूछना। एक तो वह यों ही नरगिसी आँखोंवाली औरत थी दूसरे ख़ुमार की लाली ने और भी ग़ज़ब ढा दिया था। गोया सोने में सोहागा हो गया। अब तो लल्लू से न रहा गया और वह झट से झुके कि मुँह चूम लूँ मगर अभी उनका मुँह कई इंच के फ़ासले पर ही था कि शराब की बदबू और भभक उनके दिमाग़ तक पहुँच गयी। उन्होंने चौंककर मुँह हटा लिया। कुछ सोचकर उन्होंने फिर बोसा लेना चाहा मगर फिर वही गत हुई। उन्होंने शराब तो कभी काहे को पी थी उसके नाम से भी नफ़रत थी बल्कि मयख़्वारों की सोहबत से कोसों दूर रहते। इस वक़्त जो बदबू दिमाग़ में तैर गयी तो लाचार तबीयत मितलाने लगी और चन्द लमहे में उनको बड़ी ज़ोर से क़ै हो गयी। रामकली की तो यही मत थी कि पीर कुछ भौंरा बरपाइ कहीं से लय। ख़ुद ही बदमस्त हो रही थी उसे यह सकत कहाँ कि ग़ैरों की खोज-ख़बर लेती। बेचारे लल्लू को बड़ी तकलीफ़ उठानी पड़ी। अभी तक लल्लू को इस बात का वहम या गुमान भी न था कि रामकली ने शराब पी ली होगी। लिहाज़ा उसने उसकी लापरवाहियों को उसका अल्हड़पन समझा। ज़रा-सी मक्खी होती है उसके भी पित्ता होता है आख़िर यह बेचारा तो आदमी

ही था कहाँ तक गुस्से को ठंडा करता। इस बेगमकी को देखकर उसके बदन में आग लग गयी। कोई कैसा ही धीरज और विनय का पुतला क्यों न हो मगर बीबी की जानिब से ऐसी रुखाई देखकर गुस्से को नहीं रोक सकता। गुस्से को रोकना तो दरकिनार, उसकी सूरत से उसे नफ़रत हो जायगी। लिहाजा वह उठा और मर्दाने बैठक को चला। मगर कुंडी बाहर से बंद थी। अब करे तो क्या करे न ग़ैरत यह गवारा करती थी कि किसी को इतने वक्त आवाज दे आख़िर घरवाले क्या कहेंगे और न तो तबीयत यही गवारा करती थी कि फिर उसी जगह जाय जहाँ से नाराज़गी निकल कर आया है। मगर करता क्या। इसके सिवा कोई चारा न था। आख़िर मजबूरन फिर आकर उसी चारपाई पर बैठ गया। अबकी उसे ऐसा मालूम हुआ कि जैसे वह किसी मुर्दे के साथ बैठा हुआ है।

पाठको अब यह कैसी अजीब सोचनेवाली जगह है। शौहर कई मील तय करके आया है और बीबी साहिबा को सर-पैर की खबर नहीं। काश उसको को इतना ही मालूम हो जाता कि उसको इस वक्त उसकी परवा भी नहीं है तो वह उसे दूर ही से न सलाम करता चाहे को मुफ्त की झंझट और परेशानी करने जाता।

मगर वह तो सीधा-सादा शरीफ़ आदमी था और यों लेन-देन क़रीब क़रीब बनिज-व्योपार में बड़ा शातिर व चौकस था मगर औरतों के फेर में पड़ने का कम इत्तफ़ाक हुआ था। उसने देखा कि यह कम्बख्त इधर-उधर ताक रही है चारपाई पर लेटी है और मुझको इस कैफ़ियत में देख रही है और मुँह से बोलती तक नहीं। आख़िर इसकी वजह क्या है ज़रूर इसमें कोई न कोई भेद छिपा है। मगर स्वाभिमान यह भी क़बूल नहीं करता था कि कुछ पूछें देखें माजरा क्या है। लाचार होकर चारपाई पर मुँह लपेटकर सो रहा। उसकी वासना बार-बार जगाती थी कि इतनी दूर से आये हो दो बात हँस-बोल तो लो मगर वाह रे बख्त बीबी ने आँख भरकर देखा भी नहीं। रामकली के मुँह से बदबू इस क़दर आ रही थी कि सांस लेना दूभर हो गया था मगर न कहीं जाने की जगह थी न पाँव ही उठते थे। जब तक वहाँ रहा, पड़ा रहा। अपनी क़िस्मत को कोसता रहा। कोस

कहते हैं कि औरत मर्द की शोभा होती है। मर्द अगर फलदार पेड़ है तो औरत लता जो उस हालत में भी मर्द को बचाकर रखती है जब तूफान के झकोरे उसको हर तरफ से झँझोड़कर जड़ से उखाड़कर फेंक देना चाहते हैं। लेकिन इसके साथ ही साथ बीवी का बिलकुल दारोमदार मर्द ही पर है। बिना बीवी के मर्द ऐसा है, जैसे बिना रोशनी का चिराग बिना फल का पेड़, बिना नमक का हलुआ बिना हरियाली का चमन, बिना असर का गीत बिना खुशबू का इत्र बिना फूल-पत्ती का बगीचा बिना धार का हथियार बिना पुस्तक का धर्म। मगर यहाँ तो मामला बिलकुल टेढ़ा नज़र आता है। बीबी जी के कुप्पे की तरह मुँह फुलाये हुए पड़ी हैं, मिसी अम्प टिटकि हुए हैं, न हँसी-मज़ाक, न चुहल न दिल्लगी न चुपचुप बातें न लगावट, न नाज न नीद। ऐसी बेतुकी बीवी पर खुदा की मार और शैतान की फटकार। मैं जानता होता कि यह चुड़ैल ऐसी बला है जिसकी तो काहे को जान-बूझकर अपने ऊपर यह बोझ लादता और मुफ्त का दर्द सर लेता मगर गले में ढोल पड़ा तो बजाना ही पड़ता है। लोगों का यह भी ख़याल है कि मुहब्बत सबसे ज्यादा मियाँ-बीवी के दरमियान होती है, मगर यहाँ तो मामला ही दीगर है। मैं तो हाँ पर हाँ कर रहा हूँ, कमजोरी का रोगी हूँ और बीवी साहब हैं कि पलंग से उतरना क्या बात तक नहीं पूछतीं! कल्लू के दिल में ख्यालों का एक दरिया लहरें मार रहा था और करीब था कि उसका नाजबर्दार दिल रोने लग जाय। चूँकि इस वक्त तक रात ज्यादा बीत चुकी थी इस वजह से रामकली का नशा उतर चला था। आखिर उसने खामोशी दूर की और बोली—यह तुमको सूझी क्या कि यकायक बोरी-पटोरी लेकर घर पर आ डटे। इस बदहाली से तो शायद मालगुजारी वसूल करने सिपाही भी न आता होगा!

कल्लू—और हजार शुक्र है कि तुम्हारे मुँह में ज़बान तो है, मैं तो तुम्हारी ज़बान को रो बैठा था! कहो तबीयत से तो रहीं?

रामकली—बस इसी दिल की गाँठ मिली हुई बातों से तो मेरा जी जलता है। साफ़ देख रहे हो कि बदन मारे बुखार के फुँका जाता है,

सर मारे दर्द के फटा पड़ता है, मगर तुम अपनी तानाज़नी से नहीं चूकते। हाँ कहो तो ख़ैरियत से फ़रमाओ क्या फ़रमाते हो?

कल्लू — तुम्हारे चेहरे पर तो बुख़ार का लेश भी नहीं है। हाँ आँखें अलबत्ता शराबियों की तरह चढ़ी हुई हैं।

रामकली कल्लू की ज़बान से शराबी का लफ़्ज़ सुनकर कुछ कट-सी गयी। चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं सब नशा हिरन हो गया। डरी कि कहीं ऐसा न हो कि ताड़ जाय। या मेरी हरकतों से कुछ खटक जाय तो नाहक की छीछालेदर हो और मुफ़्त की ज़िल्लत हो। उसने फ़ौरन अपनी परेशानी को इत्मीनान के पर्दे में छिपाया और बोली — मैं तुमसे यह पूछती हूँ कि तुमको ऐसी कौन-सी जल्दी पड़ी थी कि अब डोली-कहार घर पर आ मौजूद हुए? आजकल तो यों ही मेरी जान के लाले पड़े हुए हैं। ऐसे में तुम भी सताने को आ धमके!

कल्लू — आख़िर है क्या आप पर ऐसी कौन-सी मुसीबत आ पड़ी है कि जान के लाले पड़े हुए हैं?

रामकली — यही मतलब है कि जाके पैर न फटी बिवाई वह क्या जाने पीर पराई। आँखें कहीं चरने गयी हैं देखते नहीं हो कि घुल के काँटा हो गयी हूँ उठने-बैठने की ताक़त नहीं। यहाँ तो भला माँ-बाप मौजूद हैं नहीं कुछ होता तो ज़रा मीठी मीठी बातें ही करके दिल बहला देते हैं ज़रा जी को ढाढ़स हो जाती है कि है कोई आगे-पीछे दुख-दर्द का साथी। तुम्हारे यहाँ तो वही उठो जूती बैठो लात। वह जो तुम्हारी अम्माजान हैं ईश्वर ऐसे आदमी से सातवें बैरी का भी साथ न कराये उनका नाम ही सुनकर मेरे प्राण सूख जाते हैं। और फिर करेला और सो भी नीम चढ़ा एक तो ईश्वर ने उन्हें यों ही अपने ख़ास हाथों से रचा है दूसरे बीमारी ने उनको और भी चिड़चिड़ा, बदमिज़ाज और गुस्सेवर बना दिया होगा। ना बाबा मैं तुम्हारे साथ हरगिज़ न जाऊँगी। माफ़ करो!

कल्लू बेचारे चुपचाप चिन्तित मुद्रा बनाये बैठे थे। बीवी का चकमा चल गया और उनको कुछ-कुछ यक़ीन हो चला कि यह ज़रूर बीमार है। अब करें तो क्या करें। कभी सोचते थे कि लाओ दिखाते चलो, यहीं पास के

देख लिया जायगा। फिर सोचते थे कि मुफ्त का हुक्कान कौन बढ़ाये एक मटीवा है अब तो उसकी देखभाल और तीमारदारी मुश्किल से हो पाती है अब एक छोड़ दो-दो हो जायेंगी तो भला कैसे निभेगी ? रिश्तेदारों में भी ऐसा कोई नहीं जिसको इस गाढ़े वक्त पर तकलीफ दी जाय। बेचारे इसी हैस-बैस में बड़ी देर तक पड़े हुए थे। आखिरकार उनके खयालात चलते-फिरते मजर आये और उनका पक्का इरादा हो गया कि जो हो सो हो इसको अबकी लिवाते चलना ही ठीक है। आखिरकार जो ओखली कहार का सर्वा पड़ गया था वह अकारथ क्यों जाय। जब उन्होंने पूरी तरह सोचने-विचारने उलट-फेर, ऊँच-नीच समझने के बाद पक्का निश्चय कर लिया तो रामकली से जाकर बोले गो उसकी रुखाई ने उनके दिल को ठेस जरूर पहुँचायी थी मगर यहाँ पर बेमौका और बेमहल समझकर वह उसको जाहिर करना ठीक नहीं समझते थे।

कल्लू—क्यों तुमको मेरे यहाँ चलने में कोई उज्र है ?

रामकली—सरासर। उस बूढ़ी खपट के साथ तो मेरी पटरी एकदम न बैठेगी। दिन रात तू तू मैं मैं चोंचों बड़ी की है है खें खें बर्दाश्त करने के लिए तो मेरे दिमाग में कूवत नहीं। घड़ी भर तो चैन से बैठना नसीब न होगा। दिन रात उन्हीं के तलवे सहलाते बीतेगी। बाज आयी इससे।

कल्लू—भाई, मुआमले की एक बात हमसे सुनो। हममें और तुममें जो तास्लुक है उसका तकाजा यही है कि तुम अम्माँ की खिदमत में हरदम लगी रहो उनकी इज्जत अपनी माँ से भी ज्यादा करो उनकी मसलहतभरी नसीहतों और सिखावन की बातों को सर और आँखों पर चढ़ाओ। ससुराल में चार बात सहकर रहना होता है। तुम्हारी जबान जो टर्रा सदा रहती उस पर तुर्रा यह कि माँ-बाप के लाड़-प्यार ने तुम्हारे मिजाज में एक किस्म का तनतना और घमण्ड पैदा कर दिया है। इस वजह से तुमको उसकी सीधी बात भी टेढ़ी मालूम होती है, नहीं तो जो कुछ वह कहती है तुम्हारे ही भले को कहती है। उसकी जिन्दगी का अब आसरा ही क्या। कब्र में पाँव लटका ही बैठी है आज न मरी कल मरी

कम न मरी परसों मरी। फिर अगर इस चाल-चलाव के बजाय उसको आराम न होगी तो उसको क्या मालूम होगा कि बेटे-बहू से कौन-सा सुख भोगना होता है। समझेगी कि ऐसी अनहोनी औलाद के बदले बाँझ पत्थर अभी होती तो अच्छा होता। अभी तुम्हारे मिज़ाज में कुछ लड़कपन की बू अभी बाक़ी है। तुमको अभी मालूम नहीं कि लड़कों पर माँ-बाप के हक़ कितने ज़्यादा होते हैं। मेरी बात मानो अबकी मेरी ख़ातिर से चली चलो। ज़रा अम्माँ को बहुत से कुछ नसीहत देने का ख़याल रखना। और दूसरा काम ही क्या है। कुछ तुम्हीं अकेली तो नहीं ईश्वर की कृपा से दो-तीन लौंडियाँ भी मौजूद हैं। ऊपर का काम-काज तो सब वही कर लेती हैं। तुम्हारे रहने से अम्माँ को ज़रा ढारस होती रहेगी बस और कोई बात नहीं।

रामकली — यह सब तुम्हारी चिकनी-चुपड़ी बातें ही बातें हैं। इन खाली-सूखी बातों से क्या हासिल? यहाँ तो ऐसी मुलायमियत से कह रहे हो वहाँ पहुँचने पर हर बात में एक न एक ऐब निकाला करोगे क्या क्यों नहीं दी कभी हकीम साहब क्यों नहीं बुलाये गये वह क्यों नहीं किया वह क्यों नहीं किया। यह तो मैं जानती हूँ। तुम्हारे घर का कारख़ाना तो कुछ ऐसा बिगड़ा हुआ है, कि उसमें हाथ डालने को जी नहीं चाहता। लौंडियाँ जितनी हैं इत्तफ़ाक़न से ख़ारिज — बदज़बान मुँहफट, पड़ बात पलटने के सिवा और कुछ जानती ही नहीं।

अल्लू — यह सरासर झूठ इल्ज़ाम है। हमारे यहाँ की लौंडियाँ हरगिज़ ऐसी नहीं हैं। उन पर इल्ज़ाम लगाना चाँद पर थूकना है। (बीवी के मिज़ाज पर ज़ोर ही मुस्कराकर) सब की सब नमकहलाल ईमानदार, बावफ़ा वक़्त-बेवक़्त दो-चार सख़्त-सुस्त भी कह दी तो दम न लें। यही यह बात कि यह क्यों नहीं किया वह क्यों नहीं किया। अगर तुम सब काम मेरी मर्ज़ी के मुताबिक़ करोगी तो मैं ऐसा कहने ही क्यों लगा? और फ़र्ज़ अगर दो-चार बातें ताक़ीदन कह भी दीं तो क्या जिस्म में दाग़ लग गया। तुमको तो वह बातें चाबुक की तरह होनी चाहिए। फिर ऐसी हरकत ही क्यों करें जो बात सुनने की नौबत आये। बेटियाँ बहुएँ कुछ बड़ी-बूढ़ी की

होती नहीं कि उनकी इज़्ज़त और ताज़ीम बुजुर्गों की तरह की जाय, हर वक़्त उनके सामने सर झुकाया जाय। उन्हें तो नातजुर्बेकार और नादान समझकर घर भर के लोग सिखावन की बातें कहते हैं, तो इसमें बुरा मानना क्या।

रामकली—कुछ मैं ऐसी नादान भी नहीं हूँ। यह तो मैं साफ़-साफ़ समझती हूँ कि बहू को लाज़िम है कि सास-ननद का आदर भाव करे, उनके चरन धो-धो पिये, मगर जब वह इस क़ाबिल हों भी। वह तो अक़्ल के पीछे लट्ठ लिये दौड़ रही हैं और मारे तानों के कलेजे को छेद रही हैं, और हम हैं कि उनके क़दमों पर गिरे जाते हैं। आख़िर उनको भी तो यह समझ होनी चाहिए कि यह बेचारी इस क़दर चौतरफ़ा झाड़ सुना करती है, इसे अब ज़्यादा न जलाओ। ऐसी सास जाय चूल्हे में जो हर वक़्त जली-कटी सुनाया करे, ऐसी ननद जाय भाड़ में जो बात-बात पर नाक भी सिकोड़ा करे, ताने मारा करे। मेरा कलेजा तो ऐसा पक गया है कि अब उस घर में क़दम रखने का साहस नहीं होता।

ग़रज़ेकि आधी रात तक उन दोनों में यही हुज्जत और तकरार, बहस और मुबाहिसा होता रहा। कल्लू उसको ऊँच-नीच सुझाते व कर्तव्य और औचित्य के नक़्शे उसके चित्त की पटिया पर अंकित करने की कोशिश कर रहे थे। मगर वह थी कि अपनी हठ की, कर्तव्य कौन चीज़ है। हठधर्मी से बाज़ नहीं आती। सब कुछ हुआ-हवाया मगर नतीजा वही टाँय-टाँय फ़िस्स।

कल्लू—अच्छा जब तुम मेरी मुसीबत में हाथ न बटाओगी, मेरी गुत्थी न सुलझाओगी, मेरे भले-बुरे के नज़दीक न फटकोगी, मेरे घर से कोई वास्ता-सरोकार न रखोगी तो मुझे तुम्हारे होने से फ़ायदा? मेरे नज़दीक तो तुम्हारा होना न होना दोनों बराबर है। जैसे रंडुआ घर रहे वैसे रहे बिदेस। और, अब इस मामले में मैं तुमसे फ़िज़ूल सरमग़ज़न नहीं किया चाहता। तुम चाहे मानो, चाहे न मानो, सबेरे तड़के मैं तुम्हारे बाप से इस बात का क़तई फ़ैसला कर लूँगा। अगर इस मर्तबा उन्होंने उज़्रमाई बतलायी, टालमटोल किया तो बन्दा फिर कभी सूरत दिखाने न आयेगा। तब लाचार होकर गले लगाते फिरेंगे।

मेरा कलेजा भी ठण्डा हो। तुम्हारे बिना मुझे छन भर भी चैन आने का नहीं। कभी भीतर कभी बाहर बौखलायी हुई दौड़ा करूँगी। हमारे सारे अरमान तुम्हारे ही साथ जुड़े हुए हैं। ईश्वर वह दिन लाता कि हमारी आस भी पूरी हो जाती। बेटा रंज मत करो हँसी-खुशी जाओ। कुछ काले कोस तो है नहीं ईश्वर चाहेगा तो हम इसी अठवारे में तुमको बुलवा भेजेंगे। जब तक हमारी जान में जान है तब तक तुमको कब छोड़ेंगे। हाँ जब आँख मूँद मूँदी तब मजबूरी है। सच है, परायी तिरिया में कोई बस नहीं नहीं तो हम तुम्हें लाख जनम तक छोड़ते ही नहीं।

यह कहकर वह बेचारी बिलख बिलखकर रोने लगी। अब तो रामकली ने वह पाखण्ड मचाया वह फरफेर रचे कि खुदा की पनाह। कभी तो बाप के कदमों को पकड़कर आँसुओं से तर कर देती थी कभी माँ के गले मिलकर खूब गला फाड़-फाड़ के बयान करती थी। ममता की मारी माँ भी आठ-आठ आँसू रो रही थी। बाप की आँखों से भी आँसुओं की नदी जारी थी। अड़ोस-पड़ोस की औरतें आँखों की खुजली मिटाने के वास्ते पहुँच गयी थी और ज्यों-ज्यों दिन चढ़ता था औरतों की तादाद ज्यादा होती जाती थी। कोई घर के काम सम्हालती दूध पीते बच्चे को गोद में बैठाली चली आती थी कोई लहरियादार दुपट्टा फड़काती मकान में दाखिल होती थी। बुड्ढी औरतें मय कुनबे भर की औरतों के चली आ रही थीं। गरज कि थोड़ी देर में वह मकान रंगी हुई गुड़ियों से भर गया। कोई अपने बच्चे की तारीफ करती थी कोई अपने जेवरात की तारीफ में सरगर्म थी। गरज कि थोड़ी देर के वास्ते वह मकान अजायबखाना बन गया।

एक बूढ़ी औरत (झूठमूठ आँसू पोंछ के और नाक साफ करके) — चुप हो रहो बहिनी चुप हो रहो। हँसती-खेलती अपने घर को जाओ कि हँसते ही घर बसते हैं। अरे यह मुसीबत निगोड़ी कुछ तुम्हारी ही ऊपर नयी-नयी तो आयी नहीं। हममें न सबको एक दफा यह मुसीबत उठानी पड़ी।

दूसरी औरत — क्या करोगी रो-रो कर बेटा हमने गुरबत में न मालूम

कौन-सा ऐसा पाप किया था कि आज तक उसकी सज़ा भोग रही है। बचपन से तो माँ-बाप की गोद में पाले-पोसे गये। जब ज़रा भला-बुरा अपना-पराया समझने के क़ाबिल हुए तो अपने ही घरवालों ने दुश्मन बनाकर निकाल दिया। क्या करोगी यह रिवाज निगोड़ा तो पुराने ज़माने से चला आता है।

तीसरी औरत — मुहब्बत भी कैसी बुरी चीज़ है। अब बिचारियाँ माँ पत्थर का कलेजा करके सब सहन करेगी। कैसी चाह होती है औलाद की! माँ ने खास-खास उपाय जतन करके तो उनको अपने कलेजे से लगाया उनके पीछे रात को रात और दिन को दिन न समझा उनके आराम में अपना आराम और उनके दुख में अपना दुख समझती रही उनकी तबीयत ज़रा भी गड़बड़ हुई कि अब बेचारी माँ के शरीर में कँपकँपी आ गयी ओझा को बुलाओ सूखा को दिखाओ इनको बुलाओ उनको बुलाओ झड़ाओ, फुँकाओ। जब इतना जतन करके बच्चे को बड़ा कर दिया तो नारायण ने माँ-बेटी को जनम भर के लिए बिछड़ा दिया। अब अगर ऐसा ही ज़बरदस्त नसीबा हो तो आपस में मुलाक़ात हो।

चौथी — (आँसू बहाकर) कैसी सीधी-सच्ची मिलनसार और सबको प्यारी लड़की थी बेचारी। चाहे कैसा ही रंज क्यों न हो लेकिन वहाँ उसका हँसमुख चेहरा देखा कि सब दुख-दर्द भूल जाता। अब इसी घर पर निराशा छा जायगी। यहीं पर हमजोली सखियों-सहेलियों का एक जमघट रहा करता था मगर अब तो शायद कोई भूलकर भी इधर न आयेगा।

पाँचवीं था कि एक नौजवान खूबसूरत औरत थी उसके पास बैठी एक औरत से आहिस्ता आहिस्ता कहने लगी — बहिनी यह सब तो रस्मी रोना है यह भी कोई रोना है। सोचो तो किसी ख़ासी होगी कलेजा हाथों उछलता होगा कि अब कोई दम में मज़े से चैन उड़ाऊँगी। मगर क्या करे बेचारी दिखावे के लिए इतना भी न रोये! मुझको तो इसकी आवाज़ साफ़-साफ़ बनावट की-सी मालूम पड़ती है!

छठी — नारायण सातवें बैरी को भी औलाद के बिछड़न का दुख न दे।

बाप — खैर, ज़ेवर ही ले अगर कोई लड़का ले गया तो उसका रोना गया। ज़िन्दगी बाक़ी है तो कैसे ज़ेवर फिर बन रहेंगे। कुछ उन्हीं से खातमा तो हो नहीं गया। मैं तो समझा कोई आफ़त नाज़िल हुई कि यकायक घर क्या मातम का घर हो गया।

माँ — तुम्हारी अक़्ल तो चाट गयी दीमक। आज ही तो उसकी बिदाई की साइत ठहरी और आप फ़रमाते हैं कि ज़िन्दगी रही तो फिर बन रहेंगे। यह तो बनते-बनाते रहेंगे मगर जो खटराग इस वक़्त फैला हुआ है, उसे तो सुलझाओ। जो मसला इस वक़्त दरपेश है उसे तो हल करो।

बाप — अब इस वक़्त मैं खड़े-खड़े क्या हो सकता है? इकबारगी मेरा किया तो कुछ नहीं हो सकता। ख़ासकर घर तो अपने ही घर तो आ रही है, किसी बेगाने के घर तो जा नहीं रही है। हम बहुत जल्द इसका इन्तज़ाम कर देंगे।

माँ — इसी से तो कहती हूँ कि बुढ़ौती में तुम्हारी अक़्ल दीमक चाट गयी। अरे इतनी बड़ी तो हुई, कुछ नहीं तो हज़ारों ही बहुएँ, लड़कियाँ भीतर-बाहर आते-जाते देखी होंगी। भला कोई भी ऐसी कुम्मुस दीख पड़ी। बदन पर मामूली भी तो गहने नहीं तिनका-तिनका तक झाड़ ले गया दाढ़ीजार। ईश्वर करे आज ही उसकी मैयत निकले। जैसे उसने मेरी बच्ची को जलाया है, वैसे ही देवी माता उसको जलाये।

(फ़ाइल में १ सितंबर १९ ४ का अंक न होने से उस अंक में प्रकाशित किस्त न दी जा सकी।)

४

दुलारी — क्या? कहो ख़ैरियत तो है?

रामकली — आज मैं ज़रा त्रिवेश्वरनाथ के मन्दिर तक जाती हूँ तुम भी मेरे साथ चली चलो।

त्रिवेश्वरनाथ का नाम सुनते ही रामदुलारी के चेहरे की रंगत कुछ की कुछ हो गयी। कहाँ तो वह इस बेतकल्लुफ़ी से बुलबुल की तरह चहक रही थी कहाँ इस नाम ने उसको बिल्कुल सन्नाटे में डाल दिया। उसकी नज़रें नीचे की तरफ़ झुक गयीं और उस पर शर्म के मारे घड़ों पानी पड़ गया। वह झेंप के मारे सर नीचा किये चुपचाप खड़ी हो गयी।

रामकली — क्यों बहन चलती हो न? चलो सवेरे-सवेरे लौट आयें।

दुलारी — बहन मुझको माफ़ रक्खो। मैं मन्दिर इस वक़्त न जाऊँगी स्नान-पूजा से फ़ारिग़ हो चुकी हूँ।

रामकली — बस अब समझी न तू मज़दूरों की तरह नख़रे बघारने चल उठ ईश्वर जाने अभी लौट आयेंगे।

दुलारी — तुम तो वहाँ जाती हो नहीं की हो रहती हो। वहाँ लगोगी इधर उधर की बातें करने और मुझे देर होगी।

रामकली — वाह रे देरवाली एक तू ही तो अनोखी लड़की है! सारा ज़माना जाता है तो नहीं देर होती इसको देर हो जायगी साफ़ साफ़ क्यों नहीं कह देती कि हम नहीं जायेंगे।

दुलारी — बहन तुम तो नाहक़ नाराज़ होती हो। दादा जी थोड़ी देर में आते होंगे। अम्माँ की तबियत ज़रा ढीली है नहीं तो चलने में कौन उज़र था जब चाहती लौटती।

ईश्वर जाने आज तुमने यह सिंगार किया है कि आँखों को देखने से भी नहीं भरता।

रामकली — कल तो मैं एक मुसीबत में फँस गयी थी। मगर यह तो कहो खैरियत हो गयी नहीं तो अब तक अपनी ससुराल में होती।

बाबा जी — हाँ? यह कैसे?

रामकली — कल यहाँ से जाकर क्या देखती हूँ कि वह मय डोली खटोली रुखसत कराने के वास्ते आये हुए हैं। बस कुछ न पूछो। मेरी रूह ही फ़ना हो गयी। हाथ-पैर सनसनाने लगे और इस ख़याल से कि अब तुम्हें देखने को आँखें तरस जायेंगी दिल की कुछ अजब कैफ़ियत हो गयी। अम्माँ भी रुखसत कर देने पर उधार खाये बैठी थीं। कितनी आरज़ू मिन्नत की कि अम्माँ थोड़े ही दिन और रहने दो मगर अम्माँ ने एक भी न मानी। आख़िर लाचार होकर मैंने यह चाल चली कि सब के सब भौचक गये। एक सिरे से सबकी अक्ल दंग हो गयी।

बाबा जी — सच कहो कौन-सा जादू फूँका? कैसी चाल थी भई, कि घर भर के छक्के छुड़ा दिये?

रामकली — मैंने देखा कि इन सबों को इस वक्त जल्द समाया हुआ है। इस वक्त मेरी एक भी न चलेगी। बस मैंने यह हिकमत की कि तमाम ज़ेवर और कपड़े एक पुराने मटके में रख आयी। जब ज़रूरत के वक्त खोज होने लगी तो एक का भी पता नहीं। अब तो सब के सब घबराये। घर की अंगुल-अंगुल ज़मीन छान डाली मगर कहीं हो तब तो न पता लगे। अम्माँ बेचारी तो छाती पीट रही थीं। चौतरफ़ा तलाश-तलाशा मची हुई थी और मैं दिल में उनकी बेवकूफ़ी पर हँस रही थी। आख़िर जब बहुत हाथ-पैर पटककर हार गयीं और कामयाबी न हुई तो रो-पीटकर बैठ गयीं। यह कलमा तो अम्माँ की घुट्टी में पड़ा है। वह भला मुझको इस तरह नंगी-बुच्ची रुखसत करतीं? जब कुछ न हो सका कोई सूरत न निकली तो लाचार रुखसती मुल्तवी की गयी।

माता — वाह भाभी वाह! क्या काम किया तुमने कि जी चाहता है मुँह चूम लूँ।

स्वामी — यहाँ पर तो हम भी तुम्हारा लोहा मान गये। वह ढोंग रचा है कि बेअख्तियार तारीफ़ करने को जी चाहता है। मगर हम कहते हैं कि तुमको ऐसी बेढब कैसे सूझ गयी। देखने में तो ऐसी भोली मालूम होती हो मगर तुम्हारे पेट में बड़े-बड़े गुन भरे हैं। भाई, सच कहता हूँ कि अगर मैं लड़की होता तो मुझे हरगिज़ ऐसी हिकमत न सुझायी पड़ती। अस्ल काम ही न करती तो करता क्या। मगर यह तो बताओ क्या किसी ने उस मटके में नहीं ढूँढा?

रामकली — वहाँ किसी के फ़रिश्ते तक को भी ख़बर नहीं थी कि उस मटके में पोटली पड़ी है। अपनी-अपनी ढाई चावल की सब अलग अलग खिचड़ी पकाते थे मगर वहाँ तक किसी की अक्ल न दौड़ती थी।

ग़रज़ कि रामकली की इस हिकमत की लोगों ने खूब तारीफ़ की। महंत जी ने जो देखा कि यह लड़की मुझ पर बावली हो रही है और मेरे पीछे घर-बार तज देने को तैयार है तो उनके जी में यह धुन समायी कि इसे किसी तरह चकमा देकर इसके तमाम जेवरों पर हाथ साफ करो। उसके बाद इसे यहाँ से धुतकार बताओ। इन हज़रत को चकमा देने के फ़न में खूब कमाल हासिल था। बल्कि यों कहना चाहिए कि इसमें कोई उनका मुक़ाबला न कर सकता था। आपने कितनी ही नातजुर्बेकार लड़कियों का इस घाट उतार दिया था। वह पहले चिकनी-चुपड़ी नमक मिर्च लगी हुई बातों से लड़कियों को अपना भक्त बना लेता था और फिर जाने माने नुस्ख़ों से धीरे धीरे उनके नौजवान दिल पर क़ब्ज़ा जमा लेता था। जब उसे मालूम होता था कि मुहब्बत का जादू उन पर अच्छी तरह चल गया, शोख़-चश्मी और चीला-चिकेरी का क़ातिल ज़हर उनके नाज़ुक जिस्म में बख़ूबी फैल गया और वह अब उससे हरगिज़ उबर नहीं सकती तो फ़ौरन दाँव घात लगाकर उनका माल-मता छीन-छान लेता था। मगर इस फ़रेब के बावजूद लड़कियाँ उस पर ज़रा भी शक न करती थीं क्योंकि वह मीठी छुरी बनकर गहरा ज़ख़्म लगाता था और कभी-कभी उनके साथ

इस तरह सलूक करता था कि उनके आँसू पुँछते थे और उन्हें शिकवे शिकायत का कोई मौका न मिलने देता था। यही तरकीब उसने इस नयी भावना के साथ करनी चाही। उसके यहाँ का ढंग सारी खुदाई से निराला था। शायरी की दुनिया में शमशाद के पेड़ जैसी लम्बी-छरहरी जब मुखिर्ती शिकारी मानी गयी हैं और आधा हलाल करके छोड़ दिये गये आशिक उनके शिकार। उनकी जुल्फें वह जाल हैं जो उड़ती चिड़िया को हवा से उतार लेती हैं और आशिकों के दिल के पंछी को मुसीबत का कैदी बनाकर और दुख व गम में मुब्तिला करके दर-ब-दर जंगलों और रेगिस्तानों में आवारों और पागलों की तरह फिराती हैं। इन्हीं सिलसिलेवार जुल्फों के पेंच में पड़कर बेचारे लुटे हुए तबाह आशिकों के लिए दुनिया की नेमतों से मजा उठाना हराम हो जाता है। उनकी कमानीदार भवें वो असफ़हानी तलवारें हैं जिनमें आशिकों को तड़पा-तड़पाकर कत्ल करने का माद्दा आम से आम मौजूद है। उनकी पलकों की नोक वह सुई की नोक है, जो आशिकों के दिल में घुसकर ऐसा दर्द पैदा करती है कि बेचारों की जिन्दगी दूभर हो जाती है। मुख्तसर यह कि उनका हर अंग मसलहतन् इसी गरज से बनाया गया है कि दूसरों को अपना शैदाई बनाकर आखिरकार उनको दगा दे उनका घर-बार छुड़ाकर उनको इधर से उधर मारा-मारा फिरवाये। मगर यहाँ पर मामला बिलकुल उल्टा था। यहाँ पर शिकारी का सार्टिफिकेट बजाय नाजुकबदन हसीनों के महंत जी जैसे बलतड़ लूर्पट आदमी को मिला था। सिलसिलेदार जुल्फों के बजाय उसके पास धोखे-फ़रेब का सबसे बड़ा जाल था जिससे वह बजाय आशिकों के माशूकों का शिकार करता था। बजाय कमानीदार भवों के यहाँ पर कैंची की तरह चलनेवाली जबान थी जिससे वह खूब बातें बनाया करता था। बजाय पलक की नोक के यहाँ पर बेधड़क नोक-झोंक और बेतकल्लुफ हँसी-मजाक था जो उठती जवानी की लड़कियों की जान की बला होकर आखिरकार उनको बदनाम करता था। किस्सा कोताह यहाँ का ढंग ही निराला था। त्रिलोकीनाथ शिकारियों का भी शिकारी था।

पहले जब रामकली कमरे में दाखिल हुई, उस वक्त महंत जी अपने

बालों को सजाने में व्यस्त थे और बहुत खुश नज़र पड़ते थे। मगर एकाएक उनका चेहरा कुम्हला गया पेशानी पर बल पड़ गये जो उनकी अन्दरूनी परेशानी का पता दे रहे थे। मुँह की रंगत कुछ उतर-सी गयी जिससे उनकी चिन्ता टपकती थी और वह उस वक़्त किसी उधेड़-बुन में फँसे हुए थे।

रामकली — क्यों भई, यह सियापा कैसा छाया हुआ है? क्या आज निर्जला व्रत है?

महंत जी — नहीं तो प्यारी आज तो तबीयत सुस्त है।

रामकली — आख़िर मैं भी तो सुनूँ कि वह निगोड़ी तबीयत कैसी है जो अब भी सुस्त है।

महंत जी — क्या बतलाऊँ जानी अजब मामला है, न कहते बन न न कहते बने एक सख़्त आफ़त में फँसे जाते हैं मगर कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ता। अजब झंझट में जान पड़ी हुई है।

संगी-साथी तो पहले ही से चले गए थे। ज्यों ही इन बुज़ुर्ग ने अपनी हैरानी और परेशानी का ज़िक्र छेड़ा त्यों ही एक साहब अच्छी-ख़ासी छोटी दराधी सूरत बनाये हुए आये। उनको देखते ही मिकोफ़ीनाथ बेइख़्तियार उछल पड़े। निहायत गर्मजोशी से आव भगत किया अगवानी की इज़्ज़त और इकरामगी से ख़ातिर की। रस्मी परिचय के बाद वे एक ख़ास जगह पर बैठे। अब रामकली पर तो मारे शर्म के घड़ों पानी पड़ गया। न वहाँ से उठ सकती थी न कोई ऐसा ओट ही था जहाँ छिप सकती। बेचारी बड़े झमेले में फँसी। महंत जी ने उसकी अन्दरूनी हालत को ताड़ लिया और ज़रा इत्मीनान देनेवाले लहजे में मुस्कराकर बोले — घबराओ नहीं यह तो हमारे लँगोटिये यार शेख़ ईदू जी हैं। इनसे कौन-सा पर्दा। यह तो हमारे सच्चे हमदर्द और राज़दार हैं। मेरे पेट की बात तक तो इनसे छिपी नहीं। इतना कहकर वह फिर शेख़ जी की तरफ़ मुख़ातिब हुए और एक असर करनेवाले और मतलब भरे अंदाज़ से उनकी तरफ़ देखा। शेख़ जी कुछ देर तो बावलियों की तरह इधर-उधर तकते रहे इसके बाद आपने लम्बे चौड़े मैदान में अपनी ज़बान के घोड़े को इस तरह छोड़ा — बाबा जी आप तो यहाँ बैठे हुए परियों के

जमघट का मज़ा लिया करते हैं, तमाम वक़्त राग रंग ऐशो-आराम में सर्फ़ करते हैं, आपने इलाक़े की तरफ़ से कुछ ऐसा मन खींच लिया है, ऐसा कान में तेल डाले बैठे हैं कि जैसे आपको इलाक़े से कोई वास्ता ही सरोकार नहीं भला इस भुलक्कड़पने से इलाक़ा कितने दिनों तक चलेगा? आपकी इस बेख़बरी से तो हम लोगों के दिल में भी यही ख़्वाहिश होती है कि सब छोड़-छाड़कर बैठ रहें। मगर नमक के हक़ इतने ज़्यादा हैं कि क्या कहूँ कुछ कहते-सुनते नहीं बनता।

महंत जी — शेख़ जी तुम तो इस वक़्त मौलवी बन गये। अरे भई, यह सब तकल्लुफ़ बालाये ताक़ रक्खो और जो कुछ कहना हो, कहो।

शेख़ — शायद आपने नहीं सुना है —

बुलबुला मुज़्दये बहार बियार
ख़बरे बद बबूमे शूम गुज़ार

(ऐ बुलबुल बहार की ख़ुशख़बरी ला। बुरी ख़बर मनहूस उल्लू के लिए छोड़ दे।)

महंत — यह तो आपने ख़ूब फ़रमाया। मेरे घर में आग लगी हुई है तमाम माल-मता जलकर ख़ाक हो रहा है और मुझको ज़रा भी ख़बर नहीं! तो क्या इख़्लासियत और दोस्ती का तक़ाज़ा यही है कि ख़बर को मेरे कान तक पहुँचाने में इतनी देर की जाय कि मेरे मकान में एक छत्ता भी बाक़ी न रहे? वाह, अच्छा दोस्ती का हक़ अदा किया!

शेख़ — अच्छा फिर कलेजे को मज़बूत कर रखिये। यह तो आपने सुना ही है कि रम्मन मिसरानी ने आपके नाम दो हज़ार रुपये की डिगरी करवायी थी। उस मुक़दमे में हम लोगों को जितनी तकलीफ़ें उठानी पड़ी थीं वह हरगिज़ न भूलेंगे। कैसी-कैसी मुसीबतें झेलनी पड़ीं कि अल्लाह की पनाह! एक दम भी चैन से बैठना नसीब न होता था। उसी दुश्मन ने अब डिगरी जारी करने की पैरवी की है। एक हफ़्ते के अन्दर ही अन्दर एक ढाई हज़ार का किसी न किसी तरह ज़रूर बन्दोबस्त हो जाना चाहिए, नहीं तो सारा बना-बनाया खेल बिगड़ जायगा।

स्वामी — भई, तुमने तो यह भयानक खबर सुनायी कि ढाई हजार को कौन कहे यहाँ तो ढाई सौ का भी कोई ठिकाना नहीं। बड़ा बुरा वक्त आ पड़ा है। अब इस वक्त चारों तरफ अँधेरा नजर आता है, कोई हामी और मददगार नहीं दिखायी पड़ता।

महंत — कुछ रुपया इलाके से क्यों नहीं वसूल कर लेते भाई?

पेश — इलाका तो ऐसा कंगाल हो रहा है कि इस वक्त एक पैसे का भी निकास नहीं।

महंत — तो मुझसे क्या कहते हो भाई, क्या मैं खुद रुपया हो जाऊँ! नहीं कोई बन्दोबस्त हो सकता तो रहने ही दो इलाका ही न नीलाम होता हो जाने दो। अब मैं इस फ़िक्र में कहाँ तक जान दूँ।

पेश — तुम्हारी आँखों में तो सरसों फूली है, जब देखो इलाके के पीछे पड़े रहते हो। इलाका न होगा मियाँ तो कमण्डल लेकर दरवाजे-दरवाजे घूमते फिरोगे।

महंत — जब रुपये का बन्दोबस्त हमारी ताकत के बाहर है तो इसके सिवाय और क्या चारा है?

पेश — हाँ इसमें भी कुछ शक है, मगर जिस दिन दस हजार की जायदाद एक हजार पर नीलाम हो जायगी तो आँखें खुल जायेंगी। बस तब यह सब ऐशो-आराम भूल जाइयेगा। माशा अल्लाह आजकल आपकी किफ़ायतशारी भी तो हद तक बढ़ी हुई है कि खुदा की पनाह, खासे कंजूस हो गये हो। कसम खुदा की मैंने कभी किसी अमीर-कबीर के दरबार में ऐसा खर्चा नहीं देखा। मगर चन्दे और यही नक्शा रहा तो खुदा ही हाफ़िज़ है। अभी इस किस्त की मालगुज़ारी अदा नहीं हुई है और फिर चाहे क्यों न, रुपया तो आपके मारे बचता ही नहीं। आज अगर किसी इलाके का मुनासिब इन्तज़ाम होता तो एक पल में दस हजार का बन्दोबस्त हो जाना कोई बड़ी बात न थी। मगर हो तो कहाँ से, जितने नौकर चाकर हैं सबको अपनी-अपनी पड़ी है। जिनके कब्ज़े में जो चीज़ है वह अपनी ढिठाई से उसको अपने काम में ला रहा है। आप हैं कि अपनी खरगोश की नींद से चौंकते ही नहीं।

महंत जी — भाई, अमीरों और रईसों का तो फिर भी मौका मिल

थामना। मगर भगवान के लिए इस वक्त छुटकारे की कोई तरकीब निकालो। किसी तरह इस बला से छुटकारा मिल जाय तो जान में जान पड़े।

शेख — अगर तदबीर छुटकारा पाने की है तो यही है कि नियत तारीख पर ढाई हजार रुपये नकद के चालू सिक्के उसके सामने बतौर तावान गिन दिये जायँ। इसके सिवाय तो और कोई तदबीर समझ में नहीं आती।

ब्रह्मचारी — वाह शेख जी, मसख़री से हरगिज न चूकियेगा।

शेख जी का रूखा और व्यंगात्मक उत्तर सुनकर त्रिलोकीनाथ बगलें झाँकने लगे। इन साहब ने भी वह रटा रखा अदब और तहज़ीब का यह दफ़्तर खोला कि अगर कोई कैसा ही गुरुघण्टाल क्यों न होता चेहरा पढ़ने-वालों का कोई वली-पैग़म्बर ही क्यों न होता मगर वह भी बातों में आ जाता धोखा खा जाता भला रामकली किस गिनती में थी। उसके दिल में यह खयाल पक्का हो गया कि यह मुसलमान त्रिलोकीनाथ का भला चाहनेवाला है। अब इस वक्त जो वह नज़र उठाकर देखती थी तो सब की सूरत से फटकार बरसती थी। स्वामी जी बड़े ही दिल्लगीबाज़ और आराम पसंद आदमी थे। इस वक्त घुटनों में सर दिये बैठे थे चेहरे से मायूसी झलकती थी। शेख जी जिनके चेहरे से ज़ाहिर होता था कि परले सिरे के घूस-घूसवाले और आला दर्जे के मुत्तहिमकार हैं ऐयारबन्दी में ताक़, मसाहब में ताक़ बाकी अफ़ाक़ माही फ़िराक़ इस्तहाये सबों में बेमिसाल चकमाक़ सिफ़ले मर्द में हुशाक़, मजमये अख़लाक़ व मम्बये अख़लाक़ हैं और त्रिलोकीनाथ के अहबाब की नाक हैं इस वक्त आँखें नीची किये नाक पर हाथ धरे, एक अजीब बेबसी के अन्दाज़ से बैठे हुए थे।

इन सबों की यह हुलिया कुछ उन मातमी घरों के शोक मनानेवालों की सी थी जहाँ कोई होनहार जवान उठती जवानी में इस दुनियाए फ़ानी से कूच कर जाता है या उन मुसीबत के मारे हुए टूटे हुए दिलवाले व्योपारियों की-सी थी जिनका जहाज़ क़ीमती चीज़ों से भरा हुआ किसी गैर मुल्क से चला आ रहा था मगर रास्ते में तेज़ और नामुआफ़िक़ हवा के थपेड़े उसे दरिया में डुबो दें या उन मासूम क़ैदियों की-सी थी जिनके मुक़दमे की सुनवाई पूरी हो चुकी है और मुन्सिफ़ कागज़ हाथ में लेकर अभी-अभी फ़ैसला

सुनाना चाहता है या उन नामुराद उभरे हुए, दिलवाले नीम बिस्मिल आशिकों की-सी भी जिन्होंने बड़ी मुद्दत के बाद इस वक्त मौका पाकर पिया-मिलन की दरख्वास्त की है मगर आशा और भय से मिली हुई नजर उनकी तरफ फेरते हैं और उनके चेहरे पर मुस्कराहट के चिह्न न पाकर कुछ ऐसे निराश हो जाते हैं कि बिलबिलाते-से ठगे-से रह जाते हैं।

रामकली ने जो उन सबों को यों मुहर्रमी सूरत बनाये हुए बैठे देखा तो उसके दिल में तरस पैदा हुआ। उसने सोचा कि अभी कल तक मैंने इसी त्रिलोकीनाथ के यहाँ खूब-खूब मजे उड़ाये हैं अब जो उस पर इस घड़ी मुसीबत आ पड़ी है तो इन्सानियत का यही तकाजा है कि मैं भी उसके दुख-दर्द में शरीक होऊँ। आखिर दोस्ती इसका नाम तो नहीं कि जब तक दोस्त का इकबाल ऊँचा रहा तब तक तो उस पर जान तक फ़िदा कर देने को मुस्तैद थे लेकिन जहाँ बेचारे पर कोई मुसीबत पड़ी वहीं गर्दन छुड़ाकर अलग हो गये। मेरे पास इस वक्त कुछ नहीं तो सोने-चाँदी के मिलाकर कोई डेढ़-दो हजार के जेवर होंगे सौ-पचास रुपया नकद भी मौजूद होगा। अगर इनके होते हुए इस बेचारे के हाथ इस वक्त न बटाऊँ तो मुझसे बढ़कर बेहया-बेशरम और एहसान-फ़रामोश कोई न निकलेगा। इस वक्त मुझे भी लाजिम है कि अपनी जथा-जुगत इसके सामने लाकर रख दूँ। इस वक्त अगर इसकी जरूरत मेरी जात से रफ़ा हो गयी तो फिर अपनी चाँदी है। यही त्रिलोकीनाथ मेरे एहसान को याद करके मेरा घर भर देगा। यही सब सोच-विचार करके वह मौके का इन्तजार करने लगी कि जरा यह सब अपनी-अपनी राह लगें तो मैं अपना जिक्र छेड़ूँ। यारों ने उसके मनोभाव का अन्दाजा कर लिया और फ़ौरन एक-एक करके खिसकने लगे। जब एकान्त हो गया तो रामकली ने महंत जी से कहा — क्यों जी इस वक्त तुम्हें कितना रुपया मिले तो तुम्हारा गला छूट जाये?

महंत जी ने धीमी आवाज से जवाब दिया — क्या कहूँ जानी कोई पाँच सौ रुपया तो तहवील में है बाकी अगर दो हजार कहीं और हो तो हिसाब बेबाक होता है। यह कहकर उसने चेहरे को ऐसा गम्भीर और संजीदा बना लिया कि जैसे वह अपने दिल के जोश खाते हुए भावों को रोक

रहा है और बावजूद ऐसी भारी मुसीबत आ पड़ने के धीरज को हाथ से नहीं जाने देता।

रामकली का 'अगर मैं कोशिश-पैरवी करके दिला दूँ तो?' यह जुमला सुनकर त्रिलोकीनाथ के चेहरे पर यकायक खुशी की लाली दौड़ गयी आँखें चमक उठीं गोया मालूम होता था कि बेचारे डूबते हुए को तिनके का सहारा दे दिया। सूखे धान में पानी पड़ गया। मगर इस असाधारण खुशी को (जो सोलह आने बनावटी थी) छिपाकर उसने उदासी से कहा — तुम कहाँ से दिला दोगी भला? अव्वल तो तुम खुद अपनी मालिक नहीं दोयम इतनी बड़ी रकम कोई महाजन बिला मुनासिब कार्रवाई के देने ही क्यों लगा? दमड़ी की हाँड़ी तो लोग खूब ठोंक-बजाकर लेते हैं, उसे तो तोड़े का तोड़ा गिनना पड़ेगा।

रामकली — तो आखिर इसमें हर्ज ही क्या है? अक्सर ताल्लुकेदार महाजनों से कर्ज लिया करते हैं। उनको तो तीसों दिन रुपये-पैसे का काम लगा रहता है। अगर महाजन न हों तो जमींदारों का तमाम कारबार खाक में मिल जाय। तो फिर तुमको इसमें क्या पसोपेश है?

महंत — (ठण्डी साँस भरकर) आह काश मुझको भी यही आजादी हासिल होती। मैं तो कायदों की मजबूत जंजीरों में जकड़ा हुआ हूँ। अगर कहीं महाराजा साहब को यह सुन-गुन मिल गयी कि यहाँ कर्ज लेने की नौबत आ पहुँची तो गजब ही हो जायगा।

रामकली — और अगर सिर्फ बात के एतबार पर मिल जाय तो?

अब तो हजरत ने ऐसा चेहरा बना लिया कि जैसे कोई अप्रत्याशित संपदा हाथ लग गयी।

महंत — इससे बढ़कर और क्या हो सकता है। जिन्दगी भर तुम्हारा बिनदामों गुलाम बना रहूँगा। जब तक इस तन में जान रहेगी तुम्हारा गुन गाया करूँगा।

रामकली — भाई सुनो बात यह है कि महाजन-महाजन मेरे लखा किये तो होने से रहा मगर मेरे पास जेवर इतने हैं कि अगर उनको रेहन दूँ तो दो हजार से कम किसी तरह न मिलें।

रामकली की ज़बान से इस बात का निकलना था कि महंत जी सन्नाटे में आ गये, सकता-सा हो गया। ऐसा मालूम होता था कि कोई बुरी सुनावनी आयी थी जिसके सुनने से उनका दिल टुकड़े-टुकड़े हो गया।

महंत जी — अफ़सोस रामकली, तुम इतने दिनों से यहाँ आ रही हो मगर तुमने मुझको अच्छी तरह न पहचाना! तुमने मुझको ऐसा बेहया समझ रक्खा है? चाहे इलाक़ा कौड़ियों के मोल बिक जाय, मैं फँस जाऊँ, मगर मेरी ग़ैरत इसको हरगिज़ न क़बूल करेगी कि ऐसी ज़लील और ख़ुदग़रज़ हिकमत काम में लाऊँ। तुम्हारे ज़ेवर और मैं उनको बेचूँ? राम राम यह तो मुझसे जीते-जी हो ही नहीं सकता।

रामकली — बेशक तुम ऐसी ज़लील हिकमत को काम में नहीं ला सकते क्योंकि मैं तुम्हारी नज़रों में इस क़दर ज़लील हूँ कि तुम मेरे ज़ेवरों को हाथ लगाना भी अपनी शान के ख़िलाफ़ समझते हो! इस ग़ैरत की मैं भी तारीफ़ करूँगी कि फाँसी पड़ी हो मगर

महंत — (बात काटकर) तुमने अभी हमारा मतलब नहीं समझा।

रामकली — जी, मैं ख़ूब समझे बैठी हूँ। भला तुम्हीं अपने दिल से सोचो कि इससे तुम्हारी इज़्ज़त में कौन-सा बट्टा लग जायगा। क्या मैं तुम्हारा भला चाहनेवाली नहीं हूँ? आज अगर तुम्हारी होती तो क्या तुम उसके ज़ेवर को काम में न लाते। मैं कहती हूँ ज़रूर लाते। फिर मुझको मेरे ज़ेवरों को काम में लाने में कौन-सी बात बाधक है?

महंत — प्यारी, तुम तो ऐसी तरह की बात कहती हो कि सीधे कलेजे में उतर जाती है। मैं और तुम्हारी मदद को ज़लील समझूँ! मगर मुझे बार-बार यह ख़याल होता है कि यह ज़ेवर तुम्हारे शरीर की शोभा है, इनसे तुमको ख़ास मुहब्बत होगी और चूँकि मैं तुमको जान से भी ज़्यादा प्यार करता हूँ मैं नहीं चाहता

रामकली — (बात काटकर) फिर वही राग। न मालूम क्या तुमको ख़ब्त लगा गया है। अरे भाई, इस वक़्त तो शिष्टाचार को ताक पर रख दो। जिस तरह बने अपना गला छुड़ा लो। फिर जब इत्मीनान से बैठना तो मुझको मना कर लेना।

महंत जी — मेरी गैरत तो किसी तरह इसे कबूल नहीं करती कि ऐसे शर्मनाक जरिये से अपना गला छुड़ाऊँ मगर कुछ तो तुम्हारा हठ और कुछ तुम्हारे नाराज हो जाने का डर मुझे मजबूर करता है। तुम तो ठहरी नाजुक-मिजाज कामिनी बात-बात पर बिगड़ निकलती हो। कहीं कल को यह न कहने लगो कि तुमने मेरे जेवरों से नफरत की और उन्हें नापाक समझकर कबूल करने से इनकार किया। क्या कयामत में जान पड़ी है!

यह कहकर त्रिलोकीनाथ खामोश हो गया। रह-रहकर कभी-कभी रामकली की तरफ तिरछी नजरों से देखते जाते थे और नजरों ही नजरों में उसका शुक्रिया भी अदा करते थे। रामकली को यह पूरी तौर पर मालूम हो गया कि यह कितना सुसंस्कृत सीधा-सच्चा और ऊँचे हौसले का आदमी है कि बावजूद इसके कि ऐसी गाढ़ी मुसीबत आ पड़ी है, सच्चाई के रास्ते से इधर-उधर नहीं हो रहा है। थोड़ी देर के बाद वह शाम के वक्त जेवरों के साथ आने का वादा करके घर को चली। रास्ते भर खुश-खुश चली आ रही थी। जब घर पहुँची तो निहायत बेकरारी के साथ सूरज के डूबने का इन्तजार करती रही। इधर सूरज डूबा उधर उसने पोटली निकाल बगल में दबायी और सबकी नजरों से बचकर मन्दिर की राह ली।

५

सरस्वती महारानी महंत जी की माशूकाए बेमिसाल हुरे तिमसाल बल्कि सामिये हुर दरजमाल जो ऐसी उखड़ी-उखड़ी घर पहुँची तो समाजियों ने घबराकर कहा — क्यों जी यह इस तरह बदहवास और घबरायी हुई क्यों नजर पड़ती हो? हाँफ रही हो, चेहरा पसीने-पसीने हो रहा है यह माजरा क्या है?

सरस्वती — क्या कहूँ उस निगोड़े स्वामी ने हत्थे पर टोक दिया नहीं तो आज पाला मार लिया था। बरसों की मेहनत का इनाम आज जरूर मिल गया होता मगर अफ़सोस।

समाजी — क्यों उसने क्या किया?

सरस्वती — अजी उसी ने तो सब कुछ किया। मैं बातों में लगाकर मिलौनी को खूब ढर्रे पर लायी थी और क़रीब था कि आपस में बातें पक्की हो जायें मगर उसने ऐसा-वैसा लगाकर तमाम नक्शा बिगाड़ दिया। बल्लाह खूब दाँव पर चढ़ाया था अब ऐसा मौक़ा शायद ही आये।

समाजी — मगर मुट्ठी तो कुछ न कुछ जरूर ही गर्म हुई होगी। बचारे मियाँ चौरासी को अफ़ीम की पड़ी है, खाली डिबिया लिये हुए रो रहे हैं मैं अब तक कुछ नहीं तो चरस के बीसियों ही दम लगा चुका होता मगर आज एक दम की भी क़सम खाता हूँ। अजब तबीयत उचाट हो रही है।

सरस्वती — अजी तुम लोगों की तो हमेशा से ही आदत है कि ऐसा करते हो। तुमको चरस की सूझ रही है चौरासी अफ़ीम अफ़ीम चिल्ला रहे हैं भला किसी को यह भी खबर है कि बावर्चीख़ाने में आग जली या नहीं? मेरा तो मारे भूख के बुरा हाल है। मन्दिर ही में अंतड़ियाँ राम नाम अपने

लगी थी। क्या कहूँ किन-किन मुश्किलों से इस भूख निगोड़ी को मैंने रोका है। मगर भाई, अब मेरे रोके तो नहीं रुकती कुछ रक्खा हो तो लाओ ज़रा जान में जान पड़े।

जुमेराती — रक्खा क्या है। सुबह जौ की रोटी और मसूर की दाल पकी थी वह शैराती भगेलू भकोस ले गये न जाने पेट है कि बंबक हमें तो आँख में लगाने तक को भी नहीं मिली तब से अभी तक तड़प रहे हैं। हाँ दोपहर को इमाम के वास्ता चने भुनवाकर लाये थे मगर ऊँट के मुँह में जीरा भला कहीं उससे भूख जाती है।

सरस्वती — और जो मैंने अपने लिए बेसनी रोटियाँ पकवाने के लिए बेसन और तेल मँगवाया था वह क्या हुआ?

जुमेराती — हुआ क्या क्या मैं पी गया! इन्हीं मियाँ शैराती को गुस्ल करने की सूझ गयी बेसन तो उन्होंने लोप किया भगेलू के बाल कई दिन से सूख पड़े थे उन्होंने तमाम तेल सर में डाल लिया। बेसनी नहीं तो अभी तक तेल चू रहा है।

सरस्वती — (झल्लाकर) तुम लोग परले सिरे के नमकहराम हो।

जुमेराती — नमकहराम होंगे तो शैराती और भगेलू मैंने क्या किया जो नमकहराम बनूँ। हाँ इस वक़्त के वास्ते जो थोड़ा-सा गोश्त लाया हुआ था वह मैंने दबाकर अपने बुलबुल को खिला दिया। जो बचा है वह बेसन में सानकर दुबारा खिलाने के वास्ते रख छोड़ा है।

सरस्वती — या अल्लाह गोश्त भी भकोस गये बेसन भी सफ़ाचट कर गये तेल भी पेट में उँडेल लिया न मालूम यह पेट है निगोड़ा कि अल्लाह मियाँ का दोज़ख़ अफर के सब भरते भी नहीं!

जुमेराती — बीबी चाहे मुझको हज़ारों ही गालियाँ दे लो, जूतियों से पीट लो मगर ख़बरदार, मेरे बुलबुल की शान में एक बात भी ख़िलाफ़ न निकले नहीं तो अल्लाह जानता है मुझसे बुरा कोई नहीं है। दुआ दुआ करके तो यह बेचारा जिया है और उस पर अभी से गालियों की भरमार शुरू हो गयी। न मालूम क्यों बेचारा सबकी नज़रों में काँटे की तरह खटकता है। शैराती उसके ख़ून के प्यासे भगेलू उसकी जान के गाहक और तुम तो

जैसे उसे कोसने पर उताक हो गयी हो। मगर आप रखना चमार के कोसे ढल नहीं मरता।

सैदानी — मैं बस जुमेराती चौंच सम्हालो वह मुँह दूँगा कि छठी का दूध याद आ जायगा। मैं क्या नहीं तो! पहर भर से अनाप-सनाप जो कुछ मुँह में आता है बकता जाता है। खून का घूँट पी-पीकर रह गया हूँ नहीं तो क्या आज तुम भी याद करती कि किससे पाला पड़ा था। क्यों बे रोटियाँ मैंने खा लीं तू तो हज़्म कर गया और उसका इलज़ाम मुझ पर, खुद तो काम करता है और मुफ्त बुरा दूसरों पर रखता है! और यह तो देखो इस बेहया को शरम नहीं आती कि खुद तो नमकहलाल बनता है और सबको नमकहराम बनाता है। नमकहराम तू ही होगा बल्कि तेरा बाप नमकहराम!

सरस्वती — अरे मारो क्यों नाहक आपस में लड़े-मरे जाते हो चाहे किसी ने रोटियाँ खा लीं अब उसके पेट से तो बाहर निकलती नहीं अब उसमें नाहक का टंटा-बखेड़ा है। रहा यह कि अब इस वक्त रोटा बोलने का कोई बन्दोबस्त होगा कि नहीं या इस वक्त भी फ़ाके ही की ठहरेगी?

जुमेराती — क्या बतलाऊँ, इस मामले में तो मेरी भी अक्ल चक्कर खा रही है। भूख की तकलीफ़ तो बर्दाश्त होती मगर नहीं आती। आखिर होगा क्या? घर में आटा-दाल नाम को नहीं बनिया जो है वह मरदूद उसका न मालूम कितना रुपया सर पर चढ़ा है। उसके तक़ाज़ों के मारे तो और भी नाक में दम है। अब देखो मौत की तरह सर पर मौजूद और इस्ताफ़ तो यह है कि बावासिकारी की भी कोई हद है, कोई साल भर से टालमटोल आज कल हो रहा है। वह तो कहो डरा रखता है नहीं तो अब तक मय का नालिश दाग चुका होता। रुपये-पैसे का हाल ऐसा है कि कुछ न कहना ही बेहतर है, कौड़ी कफ़न को मौजूद नहीं खुदा न करे आज अगर मौत आ जाय तो कफ़न को कौन दे, मिट्टी भी न मिले!

सरस्वती — मगर मैं तो अब भूख बर्दाश्त नहीं कर सकती। मालूम होता है कि पेट में कोई ऐंठ रहा है। या अल्लाह कहीं-न-कहीं बन्दोबस्त करें।

जुमेराती — मैंने तो एक चाल सोची है, मगर वहीं सीधी पड़ गयी तो फिर दो-चार रोज़ के लिए निश्चिन्त हो जायेंगे।

सरस्वती — क्या है ज़रा मैं भी तो सुनूँ।

जुमेराती — यह जो तुम्हारे गले में कंठा है नहीं यह कलीज का बना हुआ है। उसमें और असली में इतना कम फ़र्क है कि कोई कैसा ही परखने वाला क्यों न हो हरगिज़ पहचान नहीं हो सकती। सोना है आजकल मईया इतने सोने की कीमत कम से कम डेढ़ सौ रुपये होगी। अगर घटते घटाते सौ रुपये को भी बिका तो खयाल करो कैसा चैन होगा। महीने भर तक तो हम ही हम होंगे।

सरस्वती — जी सला बहुत दुरुस्त! अब आपने मेरा कंठा ताक लिया! खाने में बड़े हाजिम हो मगर कमाने को कौड़ी नहीं। जानते भी हो कि यह किसका तोहफ़ा है। मगर अब इस वक्त तो मजबूरी है, ले जाओ इसी को मुनासिब कीमत पर बेच आओ। मगर देखो ज़रा मामला बना हुआ रहे।

जुमेराती — बहुत खूब।

अब जुमेराती बीराती, मंगेलू और झिंगुरी इन चारों आदमियों ने बहुत खुशी-खुशी कंठा हाथ में लिया अपने-अपने साज-सामान से लैस हुए, सर पर टोपी टेढ़ी रक्खी और फिर क्यों न रखते कमाने की रफ़्तार ही टेढ़ी है। जिस्म की तरह सिमटा हुआ अंगरखा पहना पाँवों में तम्बा सुथरंग, तरह तरह की जूती पहनी हाथ में एक-एक डंडा लेकर उस कंठे को सूझा कर देने के वास्ते रवाना हुए। रास्ते में बीराती को खयाल आया कि यारो, इस वक्त अमीराना साज-सामान से तो हम लोग लैस ज़रूर हैं, मगर एक कसर रह गयी है, वह यह है कि पान हिकमत-निज़ाम तमतए साहिबे तमोलों दोतुहफ़ए दरवेशां इस वक्त मुँह में नहीं है। जो कोई देखता होगा ज़रूर कहता होगा कि यह लोग कैसे फ़ीके रईस हैं कि मुँह में पान तक नहीं। भई, पहले इस बात का बन्दोबस्त कर लो तो आगे कदम रक्खो वर्ना बट्टा आता है। ख़्वाजा मंज़ूर, मगर अपनी डेढ़ी कौन कराये।

जुमेराती — मैं भी इस बात की ताईद करता हूँ। अब आप देखो कि पान का कितना आम रिवाज हो गया है। जो आदमी दिन भर में दो पन्ने कमाता है वह भी एक पैसा तमोली की नज़र करता है। बदन पर देखो, तो कुर्ता तक साबुत नहीं मगर मुँह में बीड़ा मौजूद और जो इ ख़ाक़ से देखो

तो उस बीड़े ही की बदौलत उनका शुमार भी रईसों में होता है। हम लोग तो अल्लाह के फ़ज़्ल से अमीराना ठाट-बाट रखते हैं मगर उस्ताद इस वक़्त पान के न होने से मज़ा किरकिरा हो गया। तुमसे किसी तमोली से जान-पहचान तो नहीं?

खैराती — अरे यार मेरे, क्या बतलाऊँ, वह एक बनी-ठनी तमोली बच्चा था नहीं तो उसमें और मुझमें खूब घुटती थी मैं उसे ठेका बजाना सिखाया करता था और वह मुझे पान खिलाया करता था। उस्ताद उस वक़्त ईमानिब को यह धुन था कि क्या कहूँ, अब देखो मुँह लाल अभी एक बीड़ा मुँह में लिये हुए हैं मगर दूसरा तैयार। जब से वह बेचारा शहर छोड़ गया है, मुझे पान खाना मयस्सर ही नहीं हुआ। यह भी कोई खाना है कि दूसरे-तीसरे दस-पाँच बीड़े खा लिये। पान खाना तो इसे कहते हैं कि हर वक़्त मुँह भरा हुआ हो। उस्ताद, देखो जेब किसलिए बनाया गया है? आखिर इसीलिए न कि उसमें रुपया-पैसा रक्खा जाय? जिस वक़्त जेब खाली रहता है कितनी तकलीफ़ होती है। इसी तरह मुँह भी पान खाने की ग़रज़ से बनाया गया है। जिस वक़्त मुँह में पान नहीं तो मुँह की वही हैसियत है, जो खाली जेब की।

जुमेराती — लो यारो, अब बाज़ार भी क़रीब आ गया, मारे शर्म के तो मेरा क़दम अब आगे नहीं बढ़ता। तुम लोग आगे-आगे चलो, पीछे-पीछे मैं भी चलता हूँ।

भगेलू — यारो तुमको पान ही की फ़िकिर पड़ी है और मैं और ही मुसीबत में फँसा हूँ।

खैराती — वह क्या?

भगेलू — मेरे पाजामे के इज़ारबन्द में कुंजियों का गुच्छा नहीं है, इस कम्बख़्त ख़याल को क्या करूँ। अब मुझसे आगे नहीं बढ़ा जाता। आओ घर लौट चलें। मैं कुंजियों का गुच्छा ले लूँगा तुम लोग पान खा लेना बस फिर आयेंगे।

खैराती — मगर पानदान में तो पान इसी तरह ग़ायब है जैसे गधे के सर से सींग।

गणेश — वल्लाह अभी दो-तीन बीड़े होंगे। तुम लोगों को तो काफी है। राह में मैं न खाऊँगा।

गरज कि बहुत सवाल-जवाब के बाद यह बात तय पायी कि डेरे को लौटें। लिहाजा यह लोग कदम बढ़ाते हुए मकान में दाखिल हुए। यहाँ सरस्वती ने मारे भूख के परेशान होकर गुमेरती की गुस्गुस की खुराक चट कर ली। तबीयत को जरा मिठास भी तो उसने पानदान खोला और खुशकिस्मती से एक सड़ा हुआ टुकड़ा पाकर उस पर संतोष किया। जब यह लोग खटपट करते हुए दाखिल हुए तो उसने समझा कि कामयाब हो गये। बस उसने यह भी न पूछा कि कहाँ किया किसने क्या किया पहला सवाल यही था कि बाजार से कुछ खाना-दाना भी लेते आये हो?

गुमेरती — क्या खुद ही खाना हो जाऊँ? अभी बाजार तक जाने की तो नौबत ही नहीं आयी।

सरस्वती — अरे खुदा का गजब अभी तुम सब बाजार ही नहीं गये! यहीं बैठे-बैठे आसमान और जमीन एक कर रहे हो!

गुमेरती — अब हम लोग कुछ गरीब-मुफलिस भूखे-नंगे तो हैं नहीं कि यों ही उठकर-उठकर घूमा करें। जिन बनारसी को अब तक सिर्फ नाम सुने उन्हें क्यों छोड़ें। बिना नाम जाने हुए आज तक कभी बाजार में निकलने का संयोग नहीं हुआ था। अगर आज दो-चार यार-दोस्त देखते तो आखिर वह उँगली उठाते उस वक्त नाहक झुकना पड़ता। रोजे और मातम का दिन भी नहीं ठहरा कि उसी का बहाना करके टालते। आखिर करते तो क्या करते।

सरस्वती — खुदा की पनाह इस बनारसी पर लानत। यहाँ भूख ने काम तमाम कर रखा है और तुम लोग बनारसी पर मर रहे हो! अरे जल्दी जाओ भी खुदा के लिए, देर मत करो कहीं ऐसा न करना कि तिरियाक अज इराक आवुर्दा शवद मारे गजीदा मुर्दा शवद। बस कुछ भी चाट लाओ मिस्री की चाट लाओ।

गुमेरती ने जाकर पानदान खोला तो क्या देखते हैं कि वहाँ पान का निशान तक नहीं। अब तो सब गणेश पर खूब झल्लाये और अगर वह कुनियों

का गुच्छा लेकर पहले ही से रफूचक्कर न हो गया होता तो बेचारे की खोपड़ी पिलपिली हो जाती। खूब ही मार-पीट की ठहरती मगर वह एक काइयाँ भला वह कब रुकनेवाला था।

चुमेराती — कहाँ गया वह मर्दक मगेलू? देखो न निकल भागा बेहया कहीं का। देखना तो बैराती किधर को भागा है मर्दक, जरा लपक के धर तो लो बचा को, तो इस बेवक्त की रागिनी का खूब मजा चखा दूँ।

बैराती — अरे वह बाजार में होगा इस वक्त बेहूदे को अपने काम से काम था कुल्हियाँ लेकर सटक दिया।

चुमेराती — अच्छा बचा कहीं तो मिलेंगे जहाँ मिलेंगे वहीं ठीक बनाऊँगा।

बैराती — और जो कहीं सरे-बाजार मुठभेड़ हो गयी तो क्या करोगे?

चुमेराती — वहीं पर बचा को दो-चार पटखनियाँ दूँगा भुरकुस न निकाल दिया हो तो नाम नहीं!

बैराती — मगर उस्ताद लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे? यही न कि ये लोग रईस होकर रईसों का नाम बदनाम करते हैं और बाजारी बदमाशों की तरह बाजारों में लड़ते-फिरते हैं।

चुमेराती — यार तुम भी निरे बम्पूक ही निकले पहले मैं उस हरामजादे की भी मरकर मरम्मत कर चुकता तो बाद को देखा जाता। मगर अब तो तुमने याद दिला दी भला कौन अपनी इज्जत के पीछे पड़ेगा।

गरज कि यह तीनों वापस हुए। जब बाजार के करीब पहुँचे तो क्या देखते हैं कि मगेलू मुँह में पान ठूँसे बड़े गर्व से उनकी तरफ देख रहा है। अब इन सबों को जितना गुस्सा आया होगा उसकी कल्पना करना कठिन है। जरा इस हजरत की कारस्तानियों को मुलाहिजा फरमायें। अपने साथियों को झाँसा-पट्टी देकर डेरे पर लिवा ले गया वहाँ से खुद तो कामयाब होकर लौटा और यह सब के सब मायूस होकर एक-एक पान को रोते रहे मगर उसने मजे से बीड़े मुँह में भर लिये। चुमेराती तो दाँत किटकिटाकर रह गया। बैराती की आँखों में खून उतर आया। झिंगुरी (जो निहायत संजीदा आदमी था) की त्योरी पर भी बल पड़ गये और अगर इन तीनों को इज्जत

का खयाल न होता तो मियाँ मसेमू की खैरियत न थी। जरूर खोपड़ी रँगी जाती। ऐसी बेभाव की पड़ती कि होश पटर हो जाते। मगर खैरियत हो गयी। अगर कुछ हुआ तो इतना हुआ कि इन सबों ने गुस्से से भरी हुई प्रश्न की आँखों से उसकी तरफ़ देखना शुरू किया। मगर वह एक छँटा गुर्गा था। बात का प्रसिबाज खूब तो सबों के आगे-आगे सरदारों की तरह बीड़े चबाता मूँछों को ताव देता चला और यह सब दिल ही दिल में बकते सुनते दुश्मन को बुरा भला कहते उसके पीछे-पीछे इस तरह पर चले कि जैसे इस वक्त उसको सरदारी का कोई खास हक़ हासिल है जिसके सबब से यह सब बेचारे बिना कान हिलाये चले जाते हैं, चूँ तक नहीं करते। जब बाजार में पहुँच गये तो सबसे पहले यह राय क़रार पायी कि लल्लू साहु की दुकान पर चलो। देखो वह क्या कहता है। अगर राजी हो गया तो क्या कहना वर्ना दूसरा दरवाजा देखेंगे।

साहु जी मसनद लगाये बैठे हुए थे। माथे पर चन्दन का टीका विराज रहा था। गले में एक माला पड़ी हुई थी। हाथ की छिंगुली में कुछ नहीं तो एक दर्जन अलग-अलग क़िस्मों की अँगूठियाँ सुशोभित थीं। पैर के अँगूठे में चाँदी के छल्ले पड़े हुए थे और श्रीमान के शरीर का क्या पूछना खासे डूह के डूह थे। कोई दूर से देखे तो उसे यही गुमान हो कि हाथी का बच्चा आ रहा है। सामने पीतल की एक बड़ी-सी दवात तरकबे (लम्बाई-चौड़ाई सब बराबर) का क़लम टीन की छोटी-सी डिब्बी में बालू जो स्याहीसोख्त का काम देती थी यह सब तरतीबवार सलीक़े से अपनी-अपनी मुनासिब जगहों पर रखे हुए थे। बग़ल में मुनीम जी सीधासमाम थे और हाथ में एक तमस्सुक लिये पढ़ रहे थे। दो-चार दस्तावेजें रेहननामे वग़ैरह इधर-उधर फैले हुए थे। साहु जी इबारत को ग़ौर से सुनते जाते थे और बीच-बीच में जिरह भी निकाल देते थे। जब यह लोग दुकान पर जा खड़े हुए तो उसने उनकी तरफ़ आँख उठाकर देखा और पूछा — क्या चाहिए?

इधर तो पहले ही से यह राय तय पा चुकी थी कि मसेमू इस जमात का वकील क़रार दिया जाय चूँकि वह रईसी और अमीरी की तमाम जरूरी तकल्लुफ़ की चीजों से लैस था। इस वक्त सरदारी उसी को फबती भी थी।

दिखाया उसने बेगरज लहजे में जवाब दिया — हमारे पास एक कंठा बिकाऊ है, जरूरत हो तो ले लीजिए।

शाह — कैसा माल है जरा हाथ में लेकर देखूँ तो।

उसने उस जेवर को हाथ में लेकर गौर से देखा और बोला — ना बाबा ऐसा माल हमारे यहाँ नहीं लिया जाता और दरवाजा देखिए।

जब यहाँ से नाकाम वापस हुए और जिस मोती की तलाश थी वह हाथ न लगा तो सब चकराये कि अब कौन-सी हिकमत काम में लायी जाय। अपनी-अपनी राय हर आदमी देने लगा। माशाअल्लाह मगेलू एक ही चालबाज तिकड़मी आदमी था — सुनो यारो यों तो यह बिकने-बिकाने का नहीं हम लोग अगर अपना पुराना तरीका अख्तियार करें तो मुमकिन है कोई आँख का अंधा गाँठ का पूरा फँस जाये।

सबों ने उसकी सूझ-बूझ की खूब ही दाद दी और योजनानुसार मिस्टर मगेलू दूसरी दुकान पर गये। पहले वकील साहब अकेले दुकान में दाखिल हुए। वहाँ इस वक्त शाह जी कुछ जलपिपास करने गये हुए थे और मुनीम जी जो एक नौजवान और नातजुर्बेकार आदमी थे बैठे हुए थे। उनकी बगल में एक और साहब विराज रहे थे। आहा हमने इनको पहचान लिया यह तो वही हमारे विश्वेश्वरनाथ के मन्दिर के स्वामी जी हैं। स्वामी जी ने अपनी लच्छेदार बातों से उसे शीशे में उतार लिया था।

मुनीम — क्यों बाबा जी आप तो फरमाते हैं कि वशीकरण बहुत आसान है भला हमको भी तो कोई छोटा-मोटा लटका बताइये।

स्वामी — सुनो भाई, वशीकरण सीखना बहुत ही सुगम है। कोई कठिनाई नहीं मगर हम लोगों को किसी अनधिकारिया से अद्भुत व चमत्कार-कारक कार्यों की अभी कोई बातचीत करना बहुत वर्जित है। लिखा है कि अपने पिता से भी ऐसी बात न कहो। परन्तु तुम्हारी निरन्तर चिन्ता व सेवा से मेरा मन बहुत सन्तुष्ट हो गया है। मैं बहुत वेग से तुमको एक जगाया हुआ मंत्र बताऊँगा ईश्वर चाहेगा तो तुम्हारे तमाम मनोरथ सिद्ध हो जायेंगे।

मुनीम — बाबा जी कहीं ऐसा हुआ तो जीते-जी कदम न छोड़ूँगा।

स्वामी — अरे मिलनसार, यह तो पिया कि होगा और कौन खेत में होगा।

अलक़िस्सा इतनी बातें करने के बाद मुनीम जी ने मियाँ की तरफ़ देखकर पूछा — क्यों साहब यह माल कितने में आयेगा?

मगेलू — जितने का तौल से ठहर जाय कुछ अटकलपच्चू थोड़े ही बेचेंगे।

मुनीम — (तौलकर) यह इस वक़्त नौ रुपये का ठहरता है। क्यों स्वामी जी है न?

स्वामी — सत्य है तो सब कुछ है। यही अपने साथ जायगा बच्चा। मेरी समझ में तो पन्द्रह रुपये का माल होता है।

यह लोग अभी आपस में मोल-तोल कर ही रहे थे कि मियाँ जुमेराती हाँफते हुए आये और फ़रमाने लगे — वाह रे मियाँ जमालुद्दीन (मगेलू) तुम भी कुछ अजीब कैंड़े के आदमी हो। कल्लू शाह कितना पुकार के हार गया और तुम शान के मारे न गये। सौदा इस बेरुख़ी से नहीं चुकता।

मगेलू — कल्लू शाह में कौन-सा चाँद लग गया है कि ख़ामख़्वाह वहीं जाऊँ। यह तो दिलपटे का सौदा है न वहाँ दूसरी जगह सही। कुछ वह मुफ़्त तो रुपया देंगे नहीं जो माल ठहरेगा उसी की क़ीमत हर जगह मिलेगी। वह समझते हैं कि एक दफ़ा झाँसा-पट्टी देकर घी का माल दस में मार लिया वैसे ही हर दफ़ा कर लूँगा। मगर बच्चा अब इस चकमे में हरगिज़ नहीं आयेगा।

जुमेराती — अरे यार, यह तो मुसीबत सब कुछ करवा रही है नहीं तो क्या ऐसी-वैसी मामूली चीज़ें बेचने क़ाबिल थीं। ज़माने के इन्क़लाब ने हमें इस हाल को पहुँचा दिया कि अब गली-गली लेकर बेचते फिरते हैं। और, इस पर भी सब्र करना हम लोगों का फ़र्ज़ है। हाँ यह तो बतलाओ कुछ दाम-काम हुआ या नहीं या गप्पों से यों ही वाहवाही लड़े हो?

मगेलू — कुछ तो गया है मुनीम जी नौ रुपये का आँकते हैं।

इस नौ रुपये का नाम सुनकर जुमेराती ने ऐसा चेहरा बनाया कि जैसे उसे बड़ी ज़ोर की हँसी आ रही है मगर वह बड़ी-बड़ी कोशिश से उसको रोक रहा है।

जुमेराती — सच कहो अजी नौ रुपये! नहीं दिल्लगी करते हो!

मगेसू — इसमें दिल्लगी क्या है, खरीदार तो सामने ही बैठा है, तुम्हीं पूछ लो न?

जुमेराती — और तो मालूम हो गया। इसी से मैं कहता हूँ कि कल्लू बड़ा गुनी आदमी है। खोटे-खरे माल का खूब परखना आता है और ऐसा भाँपकर दाम लगाता है कि कीमत से कुछ यों ही थोड़ी-सी कमी होती है। अगर पचास का माल बेचने जाओ तो उसकी दूकान पर चालीस से कम किसी तरह न मिलेगा। और फिर वह अपना महाजन ठहरा वक्त बेवक्त सौ-पचास रुपये के लिए नहीं नहीं करता। उसने इस कंठे को देखकर ही कह दिया था कि साठ से ज्यादा मिले तो और जगह देना नहीं तो मेरी दुकान पर आना। भला कहाँ साठ और कहाँ नौ! जमीन और आसमान का फर्क है। आओ लौट चलो।

यह लोग अभी बातों ही में लगे थे कि मिर्जा खैराती अकड़ते-अकड़ते आ मौजूद हुए।

खैराती — अस्सलाह मिर्जा जमालुद्दीन अभी तुम यहीं खड़े हो? क्यों क्या हुआ इस बारे में?

मगेसू — क्या बतायें मेहरबान यह अजीब झमेले में जान पड़ी है। कल्लूमल इसका दाम साठ रुपया आँकता है और यह मुनीम जी नौ रुपया! मेरी अक्लमन्दी तो देखो कि मैं उसकी दुकान को दुत्कार बताकर यहाँ आया मगर यहाँ तो वही मसल है, ऊँची दुकान फीका पकवान। मुनीम जी को खोटे-खरे की तमीज नहीं अब गैरत नहीं गवारा करती कि जिस दुकान पर ऐंठी-बैंड़ी सुनाकर आये हैं फिर मुँह लेकर जायें।

स्वामी जी ने इन लोगों की बातचीत गौर से सुनी और समझ गये कि यह सब नकली माल को चालाकी से असली कर दिखाना चाहते हैं। उन्होंने ऐसी-ऐसी हजारों चालें चली थीं। उनको मालूम हो गया कि यह बेल मुड़े चढ़ने की नहीं। मुमकिन है कि इसकी कीमत कुछ ज्यादा लग जाय मगर ऐसा अन्धा कौन होगा जिसको खोटे-खरे की पहचान न होगी। उन्होंने जुमेराती को अलग बुलाकर कहा — मियाँ और मनाओ मैं चकमा देकर पन्द्रह रुपये दिलवाये देता हूँ। आधे मेरे होंगे और आधे

तुम्हारे। और जो तुम यह चाहो कि इसको असली करके बेचो तो भाई दूसरा दरवाज़ा देखो। चाल वहीं तक चलो जहाँ तक गिरफ्त के क़ाबिल न हो। अब यह ज़ेवर तो ख़ासा पीतल का बना हुआ है, मुलम्मा तक नहीं भला किसकी आँख में धूल डालोगे और किसका रुपया पड़ा हुआ है जो यों पानी में डालेगा। वहमी बातें छोड़ो आओ हाथ पर हाथ मारो पन्द्रह रुपये बादशाही दिलाये देता हूँ।

ख़ैर, मामला तय पा गया। स्वामी जी ने बातों ही बातों में उसकी क़ीमत पन्द्रह रुपया जमा की। सौदा चुक गया। यह सब तो अपनी-अपनी राह लगे स्वामी ने मुनीम को बहुत-सा सब्ज़बाग़ दिखाया दिया और दूसरे दिन नूर के तड़के ज़रूरी सामान के साथ आने का वादा करके चलते हुए। रास्ते में मियाँ लोगों से आधा हिस्सा पटवा लिया और मूँछों को ताव देते हुए चलते फिरते नज़र आये। जुमेराती वगैरह इस ज़ेवर को बेचकर मारे खुशी के फूले न समाते थे। बाँछें खिली जाती थीं। समझते थे कि बस जीत लिया।

जुमेराती — भई वाह क्या ख़ूब नौ आने का माल पन्द्रह रुपये भर!

भगेलू — क्यों उस्ताद न कहोगे यह बन्दे की कारस्तानी है वर्ना उसको तो कोई कौड़ियों के मोल भी न पूछता।

नौराती — बेशक उस्ताद तुमने वह काम किया है, कि रुस्तम से भी न होगा। मगर वह पुजारी न होता तो तुम लोगों के तमाम चकमे ख़ाक में मिल जाते। उसने उस मुनीम पर न मालूम कौन-सा जादू फूँक दिया कि आनन-फ़ानन उसकी अक़्ल सब हुई हो गयी और इस चातिरपने को देखो कि दम के दम में साढ़े सात रुपये जमा किये।

जुमेराती — यह सब तो होता ही रहेगा अब यह तो सोचो कि कैसे क्या सौदे ख़रीदने हैं।

नौराती — यारो मैं तो डेढ़ तोला अफ़ीम जाकर लूँगा और चार आने की रेवड़ी।

जुमेराती — और मैं तो अपने वास्ते चाँडू और अपने मुन्नुन के वास्ते पोस्त और बेसन जाकर लूँगा।

मगेसू—तो घाटे में मैं ही रहा। किया-धरा मेरा और माल मारें आप लोग।

जुमेराती—नहीं नहीं जी उस्ताद भला यह कब मुमकिन है। तुम भी अपनी फ़रमाइश करो।

मगेसू—अच्छा तो मेरे लिए दो बोतलें शराब की और सेर-आध सेर तम्बाकू और सफ़ेद पके हुए पान ख़रीद लेना।

झिंगुरी—सब लोग तो जुदी-जुदी फ़रमाइशें कर चुके अब इस ग़रीब की भी कोई सुनता है?

जुमेराती—हाँ हाँ भाई, तुम क्यों फ़िसड्डी रहे जाते हो तुम भी फ़रमाइश करो।

झिंगुरी—उस्ताद मेरे लिए इस वक्त सेर भर पूरियाँ और सेर भर मिठाइयाँ काफ़ी होंगी। और कुछ नहीं चाहता।

ग़रज़ सबने अलहदा-अलहदा फ़रमाइश की। साढ़े सात रुपया कुछ क़ारूँ का ख़ज़ाना तो है नहीं कि चाहे जितना उड़ाते जायें ज्यों का त्यों बना रहे। जब अपनी-अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ चीज़ें ख़रीद चुके और हिसाब लगाया तो मीज़ान की चूल ठीक न बैठी। कोई आध घन्टे के बाद हिसाब पूरा हुआ तो कुल ६ पैसे बच रहे। अब तो हर शख़्स के चेहरे का रंग फ़क़ हो गया। खिसियाने होकर एक-दूसरे का मुँह तकने लगे।

जुमेराती—भाई, यह तो बड़ा बेढब हुआ। हम लोगों ने तो अपनी अपनी फ़िक्र कर ली मगर उस बेचारी के वास्ते कुछ भी न छोड़ा। अब यह डेढ़ आने पैसे बच रहे हैं थोड़ा-सा सत्तू और गुड़ ले लो इस वक्त गुज़र-बसर हो जायगी सुबह को अल्लाह मालिक है, कहीं न कहीं ठिकाना लगा ही रहेगा।

ہم خرما و ہم ثواب

ایک دلچسپ ناول

مصنفہ

[illegible]

[illegible]

مطبع منشی نولکشور لکھنؤ میں چھپا

[illegible]

हमखुर्मा व हमसवाब

पहला बाब

सच्ची कुर्बानी

शाम का वक्त है। गुरूब होनेवाले आफ़्ताब की सुनहरी किरनें रंगीन शीशों की आड़ से एक अंग्रेज़ी वज़ा पर सजे हुए कमरे में झाँक रही हैं जिससे तमाम कमरा मुनव्वर हो रहा है। अंग्रेज़ी वज़ा की ख़ूबसूरत तसवीरें जो दीवारों से लटक रही हैं, इस वक़्त रंगीन लिबास पहनकर और भी ख़ूबसूरत मालूम होती हैं। ऐन वस्त कमरा में एक ख़ूबसूरत मेज़ है जिसके इधर-उधर नर्म मख़मली गद्दों की रंगीन कुर्सियाँ बिछी हुई हैं। इनमें से एक पर एक नौजवान सर नीचा किये हुए बैठा कुछ सोच रहा है। निहायत वजीह-ओ-शकील आदमी है जिस पर अंग्रेज़ी तराश के कपड़ों ने ग़ज़ब का हुस्न पैदा कर दिया है। उसके सामने मेज़ पर एक काग़ज़ है जिस पर वो बार-बार निगाह डालता है। उसके बुशरे से ज़ाहिर हो रहा है कि इस वक़्त उसके ख़यालात उसे बेचैन कर रहे हैं। यकायक वो उठा और कमरे से बाहर निकलकर बरामदे में टहलने लगा जिसमें ख़ूबसूरत फूलों और पत्तियों के गमले सजाकर धरे हुए थे। बरामदे से फिर कमरे में आया काग़ज़ का टुकड़ा उठा लिया और एक बदहवासी के आलम में बँगले के अहाते में टहलने लगा। शाम का वक्त था। माली फूलों की क्यारियों में पानी दे रहा था। एक तरफ़ साईस घोड़े को टहला रहा था। ठंडी-ठंडी और सुहानी हवा चल रही थी। आसमान पर शफ़क़ फूली हुई थी मगर वो अपने ख़यालात में ऐसा ग़र्क़ था कि उसको इन दिलचस्पियों की मुतलक़ ख़बर न थी। हाँ उसकी गर्दन ख़ुद-ब-ख़ुद हिलती थी और हाथ कुछ इशारे कर रहे थे गोया वो किसी से बातें कर रहा है।

इसी असना में एक बाइसिकिल फाटक के अन्दर दाखिल हुई और एक नौजवान कोट-पतलून पहने चश्मा लगाये सिगार पीता बूटे चर-मर करता उधर चला और बोला—गुड ईवनिंग मिस्टर अमृत राय।

अमृतराय ने चौंककर सर उठाया और बोले—ओह आप हैं मिस्टर दाननाथ! आइए, तशरीफ़ लाइए। आप आज जलसे में नज़र न आये?

दाननाथ—कैसा जलसा! मुझे तो इसकी खबर भी नहीं।

अमृत —(हैरत से) ऐं! आपको खबर ही नहीं? आज आनरेबुल राजा कमलानन्द साहब ने बड़े मार्के की तक़रीर की। मुखालिफ़ीन के दाँत खट्टे कर दिये।

दान —वल्लाह मुझे ज़रा भी खबर न थी वर्ना मैं ज़रूर जलसे में शरीक होता। मैं तो लाला साहब की तक़रीरों के सुनने का मुश्ताक़ हूँ। मेरी बदक़िस्मती थी कि ऐसा नादिर मौक़ा हाथ से निकल गया। मज़मून क्या था?

अमृतराय—मज़मून सिवाय इसलाहे मुआशरत के और क्या होता। लाला साहब ने अपनी ज़िन्दगी इसी काम पर वक़्फ़ कर दी है। आज ऐसा पुरजोश वाइज़े क़ौम और बाअसर शख़्स इस सूबे में नहीं। ये और बात है कि लोगों को उनके उसूलों से इख्तलाफ़ हो मगर उनकी तक़रीरों में ऐसा जादू होता है कि लोग खुद-ब-खुद खिंचते चले आते हैं। मुझे लाला साहब की तक़रीरों के सुनने का बारहा इत्तफ़ाक़ हासिल हुआ है मगर आज की स्पीच में कुछ और ही बात थी। इस शख़्स की ज़बान में जादू है, जादू। अलफ़ाज़ वही होते हैं जिनको हम रोज़मर्रा की गुफ़्तगू में इस्तैमाल करते हैं ख़यालात वही होते हैं जिन पर हम लोग अकसर बैठकर अक्सर बहस किया करते हैं। मगर तर्ज़े बयान में कुछ इस ग़ज़ब का असर है, कि दिलों को खींच लेता है।

दाननाथ को ऐसी नादिर तक़रीर के न सुनने का सख़्त अफ़सोस हुआ। बोले—यार, मैं बड़ा बदक़िस्मत हूँ। अफ़सोस अब ऐसा मौक़ा हाथ न आयेगा। क्या अब कोई स्पीच न होगी?

अमृतराय — उम्मीद तो नहीं क्योंकि लाला साहब आज ही लखनऊ तशरीफ़ ले जा रहे हैं।

दाननाथ — कमाल अफ़सोस हुआ। अगर आपने उस तक़रीर का कोई ख़ुलासा किया हो तो मुझे दे दीजिए, ज़रा देखकर तस्कीन कर लूँ।

अमृतराय ने वही काग़ज़ का टुकड़ा जिसको बार-बार पढ़ रहे थे दाननाथ के हाथों में दे दिया और बोले — उनकी तक़रीर में जो हिस्से मुझे निहायत अच्छे मालूम हुए उनको नक़ल कर लिया। ऐसी रवानी में लिखा है कि शायद बजुज़ मेरे और कोई पढ़ भी न सके। देखिए हमारे रहनुमा व मुक़्तदायाने क़ौम की ग़फ़लत व बेपरवाई को क्या बयान किया है —

'हज़रात! सब ख़राबियों की जड़ हमारी लापरवाई है। हमारी हालत बिल्कुल नीमजान मरीज़ की-सी है जो दवा को हाथ में लेकर देखता है मगर मुँह तक नहीं ले जाता। हाँ साहबो हम आँखें रखते हैं मगर अन्धे हैं, हम कान रखते हैं मगर बहरे हैं, हम ज़बान रखते हैं मगर गूँगे हैं। अब वो ज़माना नहीं है कि हमको अपनी मुआशरत के नक़ाइस नज़र न आते हों। हम तमाम अच्छी बातों को जानते हैं और मानते हैं मगर जिस तरह मसाइले इलहामी पर ईमान रखकर भी हम गुमराह होते हैं, ख़ुदा के वजूद के क़ायल होकर भी मुन्किर बनते हैं उसी तरह इसलाहे तमद्दुन के मसाइल से इत्तफ़ाक़ रखते हैं मगर उन पर अमल नहीं करते।

अमृतराय ने बड़े पुरजोश लहजे में यह इबारत पढ़ी। जब वो ख़ामोश हुए तो दाननाथ ने कहा — बेशक ख़ूब फ़रमाया है बिल्कुल हमारे हस्बे हाल।

अमृतराय — बजाबजन मुझको सख़्त अफ़सोस है कि मैंने सारी तक़रीर क्यों न नक़ल कर ली। उर्दू ज़बान पर ऐसे ही वक़्त ग़ुस्सा आता है। काश अंग्रेज़ी तक़रीर होती तो सुबह होते ही तमाम रोज़ाना अख़बारों में शाया हो जाती। नहीं तो शायद कहीं ख़ुलासा रिपोर्ट छपे तो छपे। (एक लमहे की ख़ामोशी के बाद) कैसे गर्म अल्फ़ाज़ में तहरीक की है कि

जब से कालेज से आया हूँ यही ख़याले बराबर कान में गूँज रहे हैं। माई डियर दाननाथ आप मेरे ख़यालात से वाक़िफ़ हैं। आज की स्पीच ने उन ख़यालात को असली सूरत अख़्तियार करने की जुरअत दी है। मैं अपने को क़ौम पर क़ुर्बान कर दूँगा। अब तक मेरे ख़यालात मुझ ही तक थे अब वह ज़ाहिर होंगे। अब तक मेरे हाथ सुस्त थे मगर मैंने उनसे काम लेने का इरादे मुसम्मम किया है। मैं बहुत बाअख़्तियार शख़्स नहीं हूँ मेरी जायदाद भी कसीर नहीं मगर मैं अपने को और अपनी सारी जायदाद को क़ौम पर क़ुर्बान कर दूँगा। (आप ही आप) हाँ मैं तो पक्का निसार कर दूँगा। (जोश से) ऐ थककर बैठी हुई क़ौम! ले तेरी हालत पर रोने-वालों में एक और इज़ाफ़ा हुआ। आया इससे तुझे कुछ फ़ायदा होगा या नहीं इसका फ़ैसला वक़्त करेगा।

यह कहकर अमृतराय ज़मीन की तरफ़ देखने लगे। दाननाथ, जो उनके बचपन के साथी थे उनके मिज़ाज से ख़ूब वाक़िफ़ थे कि जब उनको किसी बात की धुन सवार हो जाती है, तो उसको बिना पूरा किये नहीं छोड़ते। चुनांचे उन्होंने ऊँच-नीच सुझाना शुरू किया — मेहरबाने मन यह ख़याल तो कीजिए कि आप कैसा ख़तरनाक काम अपने ज़िम्मे ले रहे हैं। आपको अभी नहीं मालूम कि जो रास्ता साफ़ नज़र आ रहा है वह काँटों से भरा हुआ है।

अमृतराय — अब तो हर चे बादा बाद। मैं ख़ूब जानता हूँ कि मुझे बड़ी-बड़ी दिक़्क़तों का सामना करना होगा। मगर नहीं मालूम कुछ अर्से से मेरे दिल में कहाँ से क़ूवत आ गयी है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैं बड़े से बड़ा काम कर सकता हूँ। और उसको अंजाम तक पहुँचाकर सुर्ख़-रूई हासिल कर सकता हूँ।

दाननाथ — जी हाँ छोटी जोशों का हमेशा यही हाल होता है। अब ज़रा ख़यालात से हटकर वाक़यात पर आइए। आप जानते हैं कि ये शहर जिहालत और तअस्सुबपरस्ती का मरकज़ है। नये ख़यालात यहाँ हरगिज़ नश्वनुमा नहीं पा सकते। अलावा अज़ीं आप बिल्कुल तनहा हैं। जो ज़िम्मेदारियाँ आप अपने सर लेते हैं उनका जहाँ तक मेरा ख़याल है

आपके दुश्मन ज़्यादा हो जायेंगे और शायद अहबाब भी किनाराकशी करें। आप अकेले क्या बना लेंगे।

अमृतराय ने दोस्त की बातों को सुनकर सर उठाया और बड़ी संजीदगी से बोले — दाननाथ ये तुमको क्या हो गया है? मर्दे ख़ुदा तुम कहते हो अकेले क्या बना लोगे! अकेले आदमियों ने सल्तनतें फ़तह की हैं, क़ौमों की बुनियादें डाली हैं। अकेले आदमियों ने तारीख़ के सफ़्हे पलट दिये हैं। गौतम बुद्ध क्या था। महज़ एक बादियागर्द फ़क़ीर जिसका सारे ज़माने में कोई यारो-मददगार न था। मगर उसकी ज़िन्दगी ही में आधा हिन्दोस्तान उसका मुरीद हो चुका था। आपको कितनी मिसालें दूँ। क़ौमों के नाम तन्हा आदमियों से रौशन हैं। आप जानते हैं कि अफ़लातून एक बड़ा आदमी था मगर आपमें कितने ऐसे हैं जो जानते हों कि वह किस मुल्क का बाशिन्दा है।

दाननाथ ज़ीफ़हम आदमी थे समझ गये कि इस वक़्त जोश ग़ालिब है, नशेब-ओ-फ़राज़ सुझाना फ़िज़ूल है। पस उन्होंने फ़हमाइश का नया ढंग अख़्तियार किया बोले — अच्छा मैंने मान लिया कि अकेले लोगों ने बड़े-बड़े काम किये हैं और आप भी क़ौम की भलाई कुछ न कुछ कर लेंगे मगर इसका तो ख़याल कीजिए कि आप उन लोगों को कितना बड़ा सदमा पहुँचायेंगे जिनको आपसे कोई ताल्लुक़ है। प्रेमा से बहुत जल्द आपकी शादी होनेवाली है। आप जानते हैं कि उसके वालदैन परले सिरे के कट्टर हिन्दू हैं। जब उनको आपके अंग्रेज़ी वज़ा-ओ-क़ता पर एतराज़ है तो फ़रमाइए जब आप क़ौमी इसलाह पर कमर बाँधेंगे तो उनका क्या हाल होगा। ग़ालिबन आपको प्रेमा से हाथ धोना पड़ेगा।

यह तीर कारी लगा। दो-तीन मिनट तक अमृतराय ज़मीन की तरफ़ ताकते रहे। बाद इसके उन्होंने सर उठाया — आँखें सुर्ख़ थीं आँसू नमूदार थे मगर क़ौमी फ़लाह ने नफ़्स पर क़ाबू पा लिया था। बोले — 'हज़रत क़ौम की भलाई करना आसान नहीं। गो मैंने इन दिक़्क़तों का ख़याल पहले नहीं किया था ताहम मेरा दिल इस वक़्त ऐसा मज़बूत है कि क़ौम के लिए हर एक मुसीबत सहने को तैयार हूँ। प्रेमा से बेशक मुझको

आशिक़ाना मुहब्बत थी। मैं उसका शैदाई था और अगर कोई वो ज़माना आता कि मुझको उसके जौहर जगने का मौक़ा हासिल होता तो मैं साबित करता कि मुहब्बत इसको कहते हैं। मगर अब प्रेमा की सूरत मेरी निगाहों से ग़ायब होती जाती है। यह देखिए वह फ़ोटो है जिसकी मैं अब तक परस्तिश किया करता था। आज इससे भी किनाराकश होता हूँ यह कहते-कहते उन्होंने तसवीर जेब से निकाल ली और उसके पुर्ज़े-पुर्ज़े कर डाले प्रेमा को जब मालूम होगा कि अमृतराय अब क़ौम का आशिक़ हो गया और क़ौम का ख़िदमत, उसके दिल में अब किसी नाज़नीन की जगह बाक़ी नहीं रही तो वो मेरी इस हरकत को मुआफ़ कर देगी।

दाननाथ — अमृतराय मुझको सख़्त अफ़सोस है कि तुमने उस नाज़नीन की तसवीर की यह गत की जिसको तुम ख़ूब जानते हो कि तुम्हारी दिलदादा है। प्रेमा ने अहद कर लिया है कि बजुज़ तुम्हारे किसी और से शादी न करेगी। और अगर तुम्हारा हाफ़िज़ा काम देता हो तो सोचो तुमने भी इस क़िस्म का कोई वादा किया था या नहीं। क्या तुमको नहीं मालूम कि अब शादी का ज़माना बहुत क़रीब आ गया है। इस वक़्त तुम्हारी ये हरकत उस मासूम लड़की की क्या हालत कर देगी।

इन बातों को सुनकर अमृतराय वाक़ई कुछ पशेमान हो गये। ही बराबर यही कहते रहे कि प्रेमा इस ख़ता को ज़रूर मुआफ़ कर देगी। इन्हीं बातों में आफ़ताब ग़ुरूब हो गया। दाननाथ ने अपनी बाइसिकिल सम्हाली और चलते वक़्त बोले — मिस्टर राय ख़ूब सोच लो अभी से बेहतर है इन परागंदा ख़यालात को छोड़ो। आओ आज तुमको दरिया की सैर करा लावें। मैंने एक बजरा ले रखा है। चाँदनी रात में बहुत लुत्फ़ आयेगा।

अमृतराय — इस वक़्त आप मुझे मुआफ़ कीजिए। कल मैं आपसे फिर मिलूँगा। इस गुफ़्तगू के बाद दाननाथ तो अपने मकान की तरफ़ राही हुए और अमृतराय उसी अँधेरे में बेहिस-ओ-हरकत खड़े रहे। जो *नहीं मालूम क्या सोच रहे थे। जब अँधेरा ज़्यादा हुआ तो दफ़्अतन् वह* ज़मीन पर बैठ गये और उस तसवीर के परीशान पुर्ज़े इकट्ठा कर लिये

उनको अपने सीने से लगा लिया और कुछ सोचते हुए अपने कमरे में चले गये।

बाबू अमृतराय शहर के मुअज्जिज रईसों में समझे जाते थे। आबाई पेशा वकालत था। खुद भी वकालत पास कर चुके थे और गो अभी वकालत चोटों पर न थी मगर खानदानी इफ्तिखार ऐसा जमा था कि शहर के बड़े से बड़े रईस भी उनके सामने सरे नियाज़ ख़म करते थे। बचपन ही से अंग्रेज़ी कालिजों में तालीम पायी और अंग्रेज़ी तहज़ीब और तर्ज़ मुआशरत के दिलदादा थे। जब तक वालिद बुजुर्गवार ज़िन्दा थे पासे अदब से अंग्रेज़ियत से मुहतरिज़ रहते थे। मगर उनके इन्तक़ाल के बाद खुल खेले। सर्फ़ कसीर से ऐन दरिया के किनारे पर एक नफ़ीस बँगला तामीर कराया था और उसमें रहते थे। इमारत के सब सामान मौजूद थे। किसी चीज़ की कमी न थी। बचपने ही से इल्म के दिलदादा थे और मिज़ाज भी कुछ इस क़िस्म का वाक़े हुआ था कि जिस चीज़ की धुन सवार हो जाती बस उसी के हो रहते थे। जिस ज़माने में बँगले की धुन सवार थी आबाई मकानात कौड़ियों के मोल फ़रोख़्त कर दिये थे। इलाक़े पर भी हाथ साफ़ करने का इरादा था मगर किस्मत अच्छी थी बाप का जमा किया हुआ कुछ रुपया बैंक में निकल आया।

मिस्टर अमृतराय को किताबों से उलफ़त थी। मुमकिन न था कि कोई नयी तसनीफ़ शाया हो और उनके कुतुबख़ाने में न पायी जाये। अलावा इसके फ़नूने लतीफ़ा से भी बेबहरा न थे। राग से तबीयत को ख़ास रग़बत थी। यह वकालत पास कर चुके थे मगर अब तक शादी नहीं हुई थी। उन्होंने ठान लिया था कि तावक़्ते कि वकालत चोटों पर न हो जाय शादी न करेंगे। इसी शहर के रईसे आज़म लाला बदरीप्रसाद साहब उनको कई बरस से अपनी इकलौती लड़की प्रेमा के वास्ते चुने बैठे थे। इसी ख़याल से कि अमृतराय को इस शादी के करने में कोई उज़्र न हो प्रेमा की तालीम पर बहुत लिहाज़ रखा गया था। मुंशी साहब की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ प्रेमा की तसवीर भी अमृतराय के पास भिजवा दी गयी थी और वक़्तन फ़वक़्तन दोनों में ख़तो-किताबत भी हुआ करती थी क्योंकि प्रेमा अंग्रेज़ी तालीम पाने

से जरा आज़ादमिज़ाज हो गयी थी। बाबू दाननाथ बचपने ही से अमृतराय के साथ पढ़ा करते थे और दोनों में सच्ची मुहब्बत हो गयी थी। कोई ऐसी बात न थी जो एक दूसरे के लिए उठा रखें। दाननाथ अर्से से प्रेमा की दिल में परस्तिश करते थे। मगर चूँकि उनको मालूम था कि बातचीत अमृतराय से हो गयी है और दोनों एक दूसरे को प्यार करते हैं इसलिए खुद कभी अपने ख़यालात को ज़ाहिर नहीं किया था। उस माशूक़ के फ़िराक़ में जिससे मिलने की मरकर भी उम्मीद न हो उसने अपने हरमीनाल की घड़ियाँ तल्ख कर रखी थीं। सैकड़ों ही बार उसकी नफ़्सानियत ने उभारा था कि तू कोई चाल चलकर मुंशी बदरीप्रसाद को अमृतराय से बदज़न कर दे मगर हर बार उसने इस नफ़्सानियत को दबाने में कामयाबी हासिल की थी। वह आला दर्जे का बाइख़लाक़ आदमी था। वह मर जाना पसन्द करता बजाय इसके कि अमृतराय की निस्बत कोई ग़लतबयानी करके अपना मतलब निकाले। यह भी न था कि वह अमृतराय से सच्ची हमदर्दी व हमसाजी का बर्ताव न करता हो। नहीं बरअक्स इसके वो हर मौक़े पर अमृतराय को तसफ़्फ़ी व दिलासा दिया करता था। अक्सर उसी की मार्फ़त दोनों शैदाइयों में तोहफ़े-तहाइफ़ भेजे गये थे। ख़तो-किताबत उसी की मार्फ़त हुआ करती है। वह मौक़े पूछे थे कि अगर दाननाथ चाहता तो बहुत जल्द चाहनेवालों में निफ़ाक़ पैदा कर देता। मगर ये उसकी फ़ितरत से बईद था।

आज भी जब अमृतराय ने अपने इरादे ज़ाहिर किये तो दाननाथ ने बिला कम-ओ-कास्त सब दिक्क़तें बयान कर दीं। उसका दिल कैसा उछलता था जब वो ये ख़याल करता कि अब अमृतराय मेरे लिए जगह ख़ाली कर रहा है। मगर ये उसकी शराफ़त थी कि उसने अमृतराय को उनके इरादे से बाज़ रखना चाहा था। उसने कहा था कि अगर तुम रिफ़ार्मरों के ज़ुमरे में शामिल होगे तो प्रेमा रो-रोकर जान दे देगी मगर अमृतराय ने एक न सुनी। उनका इरादा मुस्तहकम था जिसको कोई तरमीम किया नहीं सकती थी। दाननाथ उनके मिज़ाज और धुन से खूब वाक़िफ़ थे। समझ गये कि अब ये उड़ते हैं और लड़कर रहेंगे। मुलाने अब उनको

कोई वजह न मालूम हुई कि मैं असल वाक़या बयान करके क्यों न प्यारी प्रेमा के शौहर बनने की कोशिश करूँ। यहाँ से रवाना होते ही वो अपने घर पर आये और कोट-पतलून उतार सीधे-सादे कपड़े पहन लाला बदरीप्रसाद साहब के दौलतख़ाने की तरफ़ रवाना हुए। इस वक्त उनके दिल की जो कैफ़ियत हो रही थी उसका बयान करना मुश्किल है। कभी तो ख़याल आता कि कहीं मेरी यह हरकत ख़ुदग़रज़ी का बाइस न हो बाज़ लोग मुझको हासिद व बदख़्वाह समझने लगें। फिर ख़याल आता कहीं अमृतराय अपना इरादा पलट दें और क्या ताज्जुब है कि ऐसा हो जाये तो फिर मेरे लिए डूब मरने की जा होगी मगर इन ख़यालात के मुक़ाबिले में जब प्रेमा की प्यारी-प्यारी सूरत नज़रों के सामने आ गयी तो ये तमाम औहाम रफ़ा हो गये और दम-के-दम में वह लाला बदरीप्रसाद के मकान पर बैठे बातें करते दिखायी दिये।

दूसरा बाब

हसद बुरी बला है

लाला बदरीप्रसाद साहब अमृतराय के वालिद मरहूम के दोस्तों में थे और ख़ानदानी इज़्ज़त, तमव्वुल और एतबार के लिहाज़ से अगर उन पर फ़ौक़ियत न रखते थे तो हेठे भी न थे। उन्होंने अपने दोस्त मरहूम की ज़िन्दगी ही में अमृतराय को अपनी बेटी के लिए मुन्तख़ब कर लिया था और अगर वो दो बरस भी ज़िन्दा रहते तो बेटे का सेहरा देख लेते। मगर ज़िन्दगी ने वफ़ा न की चल बसे। हाँ दमे मर्ग उनकी आख़िरी नसीहत ये थी कि बेटा मैंने तुम्हारे वास्ते बीवी तजवीज़ की है उससे ज़रूर शादी करना। अमृतराय ने भी इसका पक्का वादा किया था मगर इस वाक़्ये को आज पाँच बरस बीत चुके थे। इस असना में उन्होंने वकालत भी पास कर ली थी और अच्छे ख़ासे अंग्रेज़ बन बैठे थे। इसी तबदीले वज़ें मुआशरत ने पब्लिक की नज़रों में उनका विक़ार कम कर दिया था। बर अक्स इसके लाला बदरीप्रसाद पक्के हिन्दू थे साल भर बारहों मास उनके यहाँ भागवत की कथा हुआ करती थी कोई दिन ऐसा न जाता कि भंडारे में सौ-पचास साधुओं का जेवनार न बनता हो। इन फ़य्याज़ियों ने उनको सारे शहर में हरदिल-अज़ीज़ बना दिया था। हर रोज़ अलस्सबाह वो पैदल गंगा जी के स्नान को जाया करते और रास्ते में जितने आदमी उनकी बुज़ुर्गाना सूरत देखते सरे नियाज़ ख़म करते और आपस में कानाफूसी करते वक़्त दुआ करते कि यह ग़रीबों का दस्तगीर हमेशा यूँ ही सरसब्ज़ रहे।

यों मुंशी बदरीप्रसाद अमृतराय की अंग्रेज़ियत को नफ़रत व हिक़ारत

की निगाहों से देखते थे और कई बार उनको समझाकर हार भी चुके थे मगर चूँकि उनको अपनी जान से अज़ीज़ बेटी प्रेमा के लिए मुन्तख़ब कर चुके थे इसलिए मजबूर थे क्योंकि उनको उस शहर में ऐसा होनहार, खूबरू जवान और अहले-सर्वत दामाद नहीं मिल सकता था और दूसरे शहर में वो अपनी लड़की की शादी किया नहीं चाहते थे। इसी ख़याल से कि लड़की अमृतराय की मर्ज़ी के मुआफ़िक़ हो उसको अंग्रेज़ी व फ़ारसी और हिन्दी की थोड़ी-थोड़ी तालीम दी गयी थी और उन दस्तकारी कमालात पर फ़ितरती मलियाहत गोया सोने में सुहागा थे। सारे शहर की बहोतेरियाँ और मुस्तूरात मुत्तफ़िक़ुल ख़याल थीं कि ऐसी हसीन व खूबरू लड़की आज तक देखने में नहीं आयी। और जब कभी वो सिंगार करके किसी तक़रीब में जाती थी तो हसीन औरतें बावजूद हसद के उसके पैरों तले आँखें बिछाती थीं। दुल्हा-दुल्हन दोनों एक-दूसरे के आशिक़े ज़ार थे। इधर एक साल से दोनों में ख़तो-किताबत भी होने लगी थी। वो मुंशी बदरीप्रसाद साहब इस मिज़ाज के सख़्त मुख़ालिफ़ थे मगर अपने बड़े बेटे की सिफ़ारिश से मजबूर रहते थे नीमजान होने के बाइस इन चाहने वालों के ख़यालात का कुछ अन्दाज़ा कर सकता था।

इस शादी का चर्चा अर्से से सारे शहर में था। जब चार मर्देमानस इकट्ठा बैठते तो बातचीत होने लगती कि क्या लाला साहब अपनी बेटी की शादी उस ईसाई से करेंगे? क्या दूसरा घर नहीं है? मगर जब उनके बराबरवाले बरातों को भिजते तो मायूस हो जाते। जब शादी के दिन बहुत क़रीब आ गये थे। लाला साहब ने अमृतराय को मजबूर किया था कि अब मैं कुछ दम का और मेहमान हूँ मेरे जीते-जी तुम इस जवाहर को अपने क़ब्ज़े में कर लो। अमृतराय ने भी मुस्तैदी ज़ाहिर की थी मगर ये शर्त लगा लिया था कि मैं बेमानी रस्मियात में से एक भी न अदा करूँगा। लाला साहब ने तुरन्त व करहन् इस बात को भी मंज़ूर कर लिया था। तैयारियाँ हो रही थीं। यकायक आज लाला साहब को मोतबर ख़बर मिली कि अमृतराय ईसाई हो गया है और किसी मेम से शादी किया चाहता है।

जैसे किसी हरे भरे दरख्त पर बिजली गिर पड़ी यही हाल लाला साहब का हुआ। पीरानासाली की वजह से लाला मुजमहिल हो रहे थे ये खबर मिली तो उनके दिल पर ऐसी चोट लगी कि सदमे को बर्दाश्त न कर सके और पछाड़ खाकर गिर पड़े। उनका बेहोश होना था कि सारा भीतर-बाहर एक हो गया। तमाम नौकर-चाकर, खेश ओ-अकारिब इधर उधर से आकर इकट्ठे हो गये। क्या हुआ ? क्या हुआ ? अब हर शख्स कहता फिरता है कि अमृतराय ईसाई हो गये हैं उसी सदमे से लाला साहब की ये हालत हो गयी है। बाहर से दम के दम में अन्दर खबर हो गयी। लाला बदरीप्रसाद की बीवी बेचारी बरसों से बीमार थीं और उन्हीं का इसरार था कि बेटी की शादी जहाँ तक जल्द हो जाय अच्छा है। गो पुराने खयालात की औरत थीं और शादी-ब्याह के तमाम मरासिम और बेटी की हया व शर्म के पुराने खयालात उनके दिल में भरे हुए थे मगर जब से उन्होंने अमृतराय को एक बार सहन में देखा किया था उसी वक्त से उनको ये धुन सवार थी कि मेरी बेटी की शादी हो तो उन्हीं से हो। बेचारी बैठी हुई अपनी प्यारी बेटी से बातें कर रही थीं कि दफ्अतन् बाहर से यह खबर पहुँची। सुनते ही तो माँ के तो होश उड़ गये। वो बेचारी अमृतराय को अपना दामाद समझने लगी थीं। और कुछ तो न हो सका अपनी बेटी को गले लगाकर बार-बार रोने लगी और प्रेमा भी बावजूद हजार कोशिश के जब्त न कर सकी। हाय उसके बरसों के अरमान दफ्अतन् खाक में मिल गये! उसको रोने की ताब न थी। एक हौलदिल-सा हो गया। अपनी माँ को छोड़ वो दौड़ी हुई अपने कमरे में आयी चारपाई पर गिर पड़ी और उसके मुँह से सिर्फ़ इतना निकला —— नारायण कैसे जिऊँगी! यह कहते-कहते उसके भी होश जाते रहे। तमाम घर की लौंडियाँ इकट्ठी हो गयीं। पता लगा जाने क्या। अमृतराय की फ़र्ज़ी हिमाक़त पर भीतर-बाहर अफ़सोस किया जा रहा था। प्रेमा के भाई साहब को इस बात का दफ्अतन् यक़ीन न हुआ मगर चूँकि ये बात बाबू दाननाथ की ज़बानी सुनी थी और दाननाथ की बातों को हमेशा से सच मानते आये थे शक का कोई मौक़ा न

रह गया। हाँ इतना अलबत्ता हुआ कि जरा से वाक़ये ने हजारों जबानों पर जारी होकर और ही सूरत अख्तियार कर ली थी। दाननाथ ने सिर्फ़ इतना कहा था कि बाबू अमृतराय की नियत कुछ डाँवाडोल मालूम होती है। वो रिफ़ार्म की तरफ़ झुके हुए हैं। इसी एक सादी-सी बात को लाला बदरीप्रसाद ने ईसाइयत समझ लिया था और घर भर में इसी पर कोहराम मचा हुआ था।

जब इस हादसे की खबर मुहल्ले में पहुँची तो हमदर्दी के लिहाज से बहुत-सी औरतें इकट्ठी हो गयी मगर किसी से कोई इलाज न बन पड़ा। दफ़अतन् एक नौजवान औरत आती हुई दिखायी दी। उसको देखते ही सारी औरतों ने गुल मचाया — लो पूर्णा आ गयी। अब बच्ची बहुत जल्द होश में आयी जाती है।

पूर्णा एक ब्राह्मणी थी। बरस बीस एक का सिन था। उसकी शादी बसन्तकुमार से हुई थी जो किसी अंग्रेज़ी दफ़्तर में क्लर्क थे। दोनों मियाँ बीबी पड़ोस ही में रहते थे और दस बजे दिन को जब पण्डित जी दफ़्तर चले जाते तो पूर्णा तनहाई से घबराकर प्रेमा के पास चली आती और दोनों में रब्तो-निसात की बातें शाम तक हुआ करतीं। चुनांचे दोनों सखियों में हद दर्जे की मुहब्बत हो गयी थी। पूर्णा भी एक ग़रीब घराने की लड़की थी और शादी भी एक मामूली जगह में हुई थी मगर क़ुदरतन् निहायत सलीक़ामन्द खुश-अख़लाक़ संजीदा-मिज़ाज और हरदिलअज़ीज़ औरत थी। उसने आते ही तमाम औरतों से कहा — हट जाओ अभी दम के दम में उनको होश आया जाता है। सबको हटाकर उसने फ़ौरन प्रेमा को अतरियात सुँघाये केवड़े और गुलाब का छींटा मुँह पर दिया आहिस्ता-आहिस्ता उसके तलवे सहलाये। सारी खिड़कियाँ खुलवा दीं। जब दिमाग़ पर सर्दी पहुँची तो प्रेमा ने आँखें खोल दीं और इशारे से कहा — तुम लोग हट जाओ मैं अच्छी हूँ।

औरतों के जान में जान आयी। सब अमृतराय को कोसती और प्रेमा के सोहाग बढ़ने की दुआ करती अपने-अपने घर को सिधारीं। सिर्फ़ पूर्णा रह गयी। दोनों सहेलियों में बातें होने लगीं।

पूर्णा—प्यारी प्रेमा आँखें खोलो ये क्या गत बना रक्खी है?

प्रेमा ने निहायत गिरी हुई आवाज में जवाब दिया—हाय सखी मेरे तो सब अरमान खाक में मिल गये।

पूर्णा—प्यारी ऐसी बातें न करो तुम जरा उठ तो बैठो। मैं। अब बताओ तुमको ये खबर कैसे मिली।

प्रेमा—कुछ न पूछो सखी मैं बड़ी बदकिस्मत हूँ (रोकर) हाय दिल भर आता है मैं कैसे जिऊँगी।

पूर्णा—प्यारी जरा दिल को ढारस दो। मैं अभी सब पता लगाये देती हूँ। बाबू अमृतराय के निस्बत जो कुछ कहा गया है वो सब झूठ है किसी बदख्वाह ने यह पाखण्ड फैलाया है।

प्रेमा—सखी तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर! ईश्वर करे, तुम्हारी बातें सब सच हों मगर हाय कोई मुझको उस जालिम से एक दम के लिए मिला दे। हाँ सखी एक दम के लिए उस कठकलेजे को पा जाऊँ तो। मेरी जिन्दगी सुफल हो जाय फिर मुझे मरने का अफ़सोस न रहे।

पूर्णा—प्यारी ये क्या बहकी-बहकी बातें करती हो। बाबू अमृतराय ने हरगिज ऐसा न किया होगा। मुमकिन नहीं कि वो तुम्हारी मुहब्बत न करें। मैं उनको खूब जानती हूँ। मैंने अपने घर के लोगों को बार-बार कहते हुए सुना है कि अमृतराय को अगर दुनिया में किसी से मुहब्बत है तो प्रेमा से।

प्रेमा—प्यारी अब इन बातों पर विश्वास नहीं आता। मैं कैसे जानूँ कि उनको मुझसे मुहब्बत है। आज चार बरस हो गये हाय मुझे तो एक-एक दिन काटना दूभर हो जाता है और वहाँ कुछ खबर ही नहीं होती। अगर मैं खुदमुख्तार होती तो अब तक हमारा रथ यथा होता। वर्ना उनको देखो कि सालों से टालते चले जाते हैं। प्यारी पूर्णा मुझे बाज वक्त उनके इस टालमटोल पर ऐसा गुस्सा आता है कि तुमसे क्या कहूँ मगर अफ़सोस दिल कम्बख्त बेहया है।

यहाँ अभी यही बातें हो रही थीं कि बाबू कमलाप्रसाद (प्रेमा के भाई) कमरे में दाखिल हुए। उनको देखते ही पूर्णा ने भी घूँघट निकाल

भी और प्रेमा ने भी झट आँखों से आँसू पोंछ लिये। कमलाप्रसाद ने आते ही कहा — प्रेमा तुम भी कैसी नादान हो। ऐसी बातों पर तुमको यकायक यक़ीन क्योंकर आ गया?

इतना सुनना था कि प्रेमा का चेहरा बश्शाश हो गया। आँखें ख़ुशी से चमकने लगीं और पूर्णा ने भी आहिस्ता से उसकी एक उँगली दबायी। अब दोनों मुन्तज़िर हो गयीं कि ताज़ी ख़बर क्या मिलेगी।

कमलाप्रसाद — बात सिर्फ़ इतनी थी कि अभी कोई दो घण्टे हुए, बाबू दाननाथ तशरीफ़ लाये थे। मुझसे और उनसे बातें हो रही थीं। असनाए तक़रीर में शादी-ब्याह का ज़िक्र छिड़ गया तो उन्होंने कहा कि मुझे तो बाबू अमृतराय के इरादे इस साल भी मुस्तक़िल नहीं मालूम होते हैं। वो शायद रिफ़ार्म पार्टी में दाख़िल होनेवाले हैं। बस इतनी-सी बात का लोगों ने बतंगड़ बना लिया। लाला जी उधर बेहोश होकर गिर पड़े। अब जब तक उनको समझाऊँ समझाऊँ कि सारे घर में ईसाई हो गये ईसाई हो गये का गुल मच गया। ईसाई होना क्या कोई दिल्लगी है? और फिर उनको ज़रूरत ही क्या है ईसाई होने की? पूजा-पाठ तो करते ही नहीं शराब व कबाब से उनको कतई नफ़रत नहीं है तो कुछ यूँ ही-सी रग़बत है। बँगले में रहते ही हैं बावर्ची का पकाया खाते ही हैं छूत-विचार मानते ही नहीं तो अब उनको क्या कुत्ते ने काटा है कि ख़ामख़ाह ईसाई होकर नक्कू बनें। ऐसी बेसिरपैर की बातों पर यक़ीन न करना चाहिए। लो, अब रंज-ओ-कुलफ़त को धो डालो। हँसी ख़ुशी बातचीत करो। मुझे तुम्हारे इस रोने-धोने से सख़्त अफ़सोस हुआ। ये कहकर बाबू कमलाप्रसाद बाहर चले गये और पूर्णा ने हँसकर कहा — कहा कुछ? कहती थी कि ये सब लोगों ने पाखंड फैलाया है लो अब मुँह मीठा कराओ। प्रेमा ने फ़र्त मसर्रत से पूर्णा को सीने से लगाकर ख़ूब दबाया उसके रुख़सारों के बोसे लिये और बोली — मुँह मीठा हुआ या और लोगी!

पूर्णा — इन मिठाइयों से बाबू अमृतराय का मुँह मीठा होगा।

मगर सखी इस मनहूस खबर ने तुमको थोड़ी देर तक परेशान किया तो क्या तुम्हारी कलई खुल गयी। सारे मुहल्ले में तुम्हारे बेहोश हो जाने की खबरें उड़ रही हैं और नहीं मालूम उसमें क्या-क्या काट-छाँट की गयी है। क्यूँ, अब तो न बोलोगी सुन ली। अब आज ही मैं अमृतराय को सब बातें लिख भेजती हूँ। देखो कैसा मजा आता है।

प्रेमा — (शर्माकर) अच्छा रहने दीजिए ये सब दिल्लगी। ईश्वर जाने अगर तुमने आज की कोई बात कही तो फिर तुमसे कभी न बोलूँगी।

पूर्णा — बला से न बोलोगी कुछ मैं तुम्हारी आशिक़ तो नहीं बस इतना ही लिख दूँगी कि प्रेमा

प्रेमा — (बात काटकर) अच्छा लिखियेगा तो देखूँगी। पण्डित जी से कहकर वह दुर्गत कराऊँगी कि सारी शरारत भूल जाओगी। पण्डित जी ने तुमको शोख बना रक्खा है वर्ना तुम मेरी बहन होती तो खूब ठीक बनाती।

अभी दोनों सखियाँ जी भरकर खुश न होने पायी थीं कि आसमान ने फिर बेवफ़ाई की। बाबू कमलाप्रसाद की बीबी अपनी ननद से बुरा वास्ते को जला करती हैं। अपने सास-ससुर हुआ कि पीहर से भी नाराज रहतीं कि प्रेमा में ऐसे कौन से लाल लगे हैं कि सारा कुनबा उस पर फ़िदा होने को तैयार है। मुझमें और उनमें फ़र्क ही क्या है? यही न कि वह बहुत गोरी हैं और मैं उतनी गोरी नहीं हूँ। शक्ल-ओ-सूरत मेरी उनसे खराब नहीं। हाँ मैं पढ़ी लिखी नहीं हूँ क्या मुझे नौकरी-चाकरी करना है। और न मुझमें कस्बियों के-से कपड़े पहनने की आदत है। ऐसी बेग़ैरत लड़की अभी शादी नहीं हुई मगर आपस में चिट्ठी-पत्तर होता है तस्वीरें आती हैं तोहफ़े आते हैं, हरजाइयों में भी ऐसी बेशर्मी न होगी और ऐसी ही कुलवन्ती को सारा कुनबा प्यार करता है। सब अंधे हो गये हैं।

इन्हीं असबाब से वो ग़रीब प्रेमा से जला करती थीं। बोलती थीं तो तंज़न्। मगर प्रेमा अपनी खुशमिज़ाजी से उनकी बातों को ध्यान में नहीं लाती थी। हत्तुलवसा उनको खुश रखने की कोशिश करती थी।

आज जब उसने सुना कि अमृतराय ईसाई हो गये हैं तो जामे में फूली न समायी। बाबू कमलाप्रसाद ज्यूँ ही घर में आये उसने उनसे सच्ची हमदर्दी जाहिर की। बाबू साहब बेचारे बीवी पर शैदा थे। रोज ताने सुनते थे मगर सब बर्दाश्त करते थे। बीवी की जबान से हमदर्दाना बातचीत सुनी तो फूल गये। तमाम वाक़या जो कुछ जानिब से सुना था बेकम-ओ-कास्त बयान कर दिया। उस बेचारे को मालूम न था कि मैं इस वक़्त बड़ी ग़लती कर रहा हूँ। चुनांचे वह अपनी बहन की तशफ़्फ़ी करके बाहर आये तो सबसे पहला काम जो उन्होंने किया वो ये था कि बाबू अमृतराय से मुलाक़ात करके उनका ईसिया लें। वो तो उधर रवाना हुए इधर उनकी बीवी साहबा ज़रा-ज़रा मुस्कराती हुई प्रेमा के कमरे में आयीं और मुस्कराकर बोलीं — क्यों प्रेमा आज तो बस्त फूट गयी।

प्रेमा ने यह सुनकर शर्माकर सर झुका लिया मगर पूर्णा बोली — सारा भाँडा फूट गया। ऐसी भी कि क्या कोई लड़की मर्दों पर रिझते!

प्रेमा ने लजाते हुए जवाब दिया — जाओ तुम लोगों की बला से! मुझसे मत उलझो।

भावज — (ज़रा संजीदगी से) नहीं-नहीं दिल्लगी की बात नहीं है। मर्दुए हमेशा से कठकलेजे होते हैं उनके दिल में मुहब्बत होती ही नहीं। उनका ज़रा-सा सर धमके तो हम बेचारियाँ खाना-पीना त्याग देती हैं। अगर हम मर ही क्यूँ न जायें उनको ज़रा भी परवाह नहीं होती। सच है मर्द का कलेजा काठ का।

पूर्णा ने जवाब दिया — भाभी तुम बहुत ठीक कहती हो। मर्द सचमुच कठकलेजे होते हैं। मेरे ही यहाँ देखो महीने में कम से कम दस बारह दिन उस मुए साहब के साथ दौरे पर रहते हैं मैं तो अकेले सुनसान घर में पड़े-पड़े दुआ करती हूँ वहाँ कुछ ख़बर ही नहीं होती। पूछती हूँ तो कहते हैं रोना-गाना औरतों का काम ही है। हम रोयें-गायें तो दुनिया का काम कैसे चले।

भाभी — और क्या। गोया दुनिया अकेले मर्दों ही के थामे तो

भमी है। मेरा बस चले तो इन मर्दों की तरफ़ आँख उठाकर भी न देखूँ। अब आज ही देखो, बाबू अमृतराय की निस्बत ज़रा-सी बात फैल गयी तो रानी ने अपनी क्या गत बना डाली। (मुस्कराकर) इनकी मुहब्बत का तो ये हाल है और वहाँ चार बरस से शादी के लिए हीला-हवाला करते चले आते हैं। रानी खफ़ा न होना तुम्हारे खत पर खत जाते हैं, मगर सुनती हूँ वहाँ से शायद ही किसी खत का जवाब आता है। ऐसे आदमी से कोई क्या मुहब्बत करे। मेरा तो उनसे जी जलता है। क्या किसी को अपनी लड़की भारी पड़ी है कि कुएँ में फेंक दे। बला से कोई बड़ा मालदार है बड़ा खूबसूरत है, बड़ा इल्मवाला है जब हमसे मुहब्बत ही न करे तो क्या हम उसके धन-दौलत को लेकर चाटें। दुनिया में एक से एक लाल पड़े हैं और प्रेमा जैसी दुलहन के वास्ते दूल्हों का काल! प्रेमा को भाभी की यह बातें निहायत नागवार गुज़रीं। मगर पासे अदब से कुछ न बोल सकी। हाँ पूर्णा ने जवाब दिया—नहीं भाभी तुम बाबू अमृतराय पर बड़ा जुल्म कर रही हो। मुझे खूब मालूम है कि उनको प्रेमा से सच्ची मुहब्बत है। उनमें और दूसरे मर्दों में बड़ा फ़र्क है।

भाभी—पूर्णा अब मुँह न खुलवाओ! मुहब्बत नहीं सब करते हैं! माना कि बड़े अंग्रेजीदाँ हैं, कमसिनी में शादी करना पसन्द नहीं करते। मगर अब तो दोनों में से कोई कमसिन नहीं है। अब क्या बूढ़े होकर ब्याह करेंगे। असल बात ये है कि शादी करने की नियत ही नहीं है। टालमटोल से काम निकालना चाहते हैं। यही ब्याह के लच्छन हैं कि प्रेमा ने जो तसवीर भेजी थी वो कल पुर्जे-पुर्जे करके पैरों तले कुचल डाली। मैं तो ऐसे आदमी का मुँह न देखूँ।

प्रेमा ने अपनी भावज के मुस्कराकर बात करते ही समझ लिया था कि खैरियत नहीं है। जब यह मुस्कराती है तो जरूर कोई न कोई आग लगाती है। वो उनकी गुफ्तगू का अंदाज़ देखकर सहमी जाती थी कि नारायण खैर कीजो। भाभी की बात तीर की तरह सीने में चुभ गयी। हक्का-बक्का होकर उसकी तरफ़ ताकने लगी। मगर पूर्णा को बिलकुल यक़ीन न आया बोली—ये क्या कहती हो भाभी! भइया अभी आय

थे उन्होंने इसका कुछ भी ज़िक्र-मज़कूर नहीं किया। पहली बात की तरह ये भी झूठी होगी। मुझे तो यक़ीन नहीं आता कि उन्होंने अपनी प्रेमा की तस्वीर के साथ ऐसा सलूक किया होगा।

भाभी—तुम्हें यक़ीन ही न आये तो इसका क्या इलाज। ये बात तुम्हारे भइया ख़ुद मुझसे कह रहे थे। और भी एक रस्म अदा करने के लिए वो बाबू अमृतराय के यहाँ गये हुए हैं। अगर तुमको अब भी यक़ीन न आये तो अपनी तसवीर माँग भेजो देखो क्या जवाब देते हैं। अगर ये ख़बर झूठी होगी तो वो ज़रूर तसवीर भेज देंगे या कम-अज़-कम इतना तो कहेंगे कि ये बात झूठी है।

पूर्णा ख़ामोश हो गयी और प्रेमा के मुँह से आहिस्ता से एक आह निकली और उसकी आँखों से आँसुओं की लड़ियाँ बहने लगीं। भाभी साहबा के चेहरे पर ननद की यह हालत देखकर शगुफ़्तगी नमूदार हुई। वो वहाँ से उठीं और पूर्णा से कहकर 'ज़रा तुम यहीं रहना मैं अभी आयी' अपने कमरे में चली आयीं। आइने में अपना चेहरा देखा—लोग कहते हैं प्रेमा ख़ूबसूरत है। देखूँ एक हफ़्ते में वो ख़ूबसूरती कहाँ जाती है। जब यह जन्म भरे कोई दूसरा तौर तेज रक्खूँ।

तीसरा बाब

नाकामी

बाबू अमृतराय रात भर करवटें बदलते रहे। ज्यूं ज्यूं वह अपने नये इरादों और नये हौसलों पर गौर करते त्यूं त्यूं उनका दिल और मजबूत होता जाता। रौशन पहलुओं पर गौर करने के बाद जब उन्होंने तारीक पहलुओं को सोचना शुरू किया तो तबीयत जरा हिचकी। प्रेमा से ताल्लुक टूट जाने का अंदेशा हुआ मगर जब उन्होंने सोचा कि मैं अपनी क़ौम के लिए अपने अरमानों का खून नहीं कर सकता तो ये अंदेशा भी रफ़ा हो गया। रात तो किसी तरह काटी सुबह होते ही हाजरी खा कपड़े पहन और बाइसिकिल पर सवार हो अपने दोस्तों की तरफ़ रुख किया। पहले पहल मिस्टर हजारीलाल बी ए एल एल बी के यहाँ दाखिल हुए। वकील साहब निहायत आला ख़यालात के आदमी थे और रिफ़ार्म की कोशिशों से बड़ी हमदर्दी रखते थे। उन्होंने जब अमृतराय के इरादे और उन पर कारबन्द होने की तजवीजें सुनीं तो बड़े खुश हुए और फ़रमाया — आप मेरी जानिब से मुतमइन रहिए और मुझे अपना सच्चा हमदर्द समझिए। मुझे निहायत मसर्रत हुई कि हमारे शहर में आप जैसे क़ाबिल शख्स ने इस बारे गरां को अपने जिम्मे लिया। आप जो खिदमत मेरे सपुर्द करें मुझे उसके बजा लाने में मुतलक पसोपेश न होगा बल्कि मैं उसको बाइसे फ़ख्र समझूंगा। अमृतराय वकील साहब की बातों पर लट्टू हो गये तहे दिल से उनका शुक्रिया अदा किया और खुश होकर कहा कि अच्छा शुगुन हुआ। इस शहर में एक इसलाही अंजुमन क़ायम करने की ख्वाहिश जाहिर की। वकील साहब ने इसको

पर्संद किया और मुबारिकबाद का सच्चा जोश फ़रमाया और बाबू अमृतराय कूच-कूच बाबू दाननाथ के दौलतख़ाने पर आ धमके। दाननाथ जैसा हम पहले कह चुके [redacted] अमृतराय के सच्चे दोस्तों में थे। उनको देखते ही बड़ी गर्मजोशी से मुसाफ़ा किया और पूछा — क्यों जनाब क्या इरादे हैं?

अमृतराय ने संजीदगी से जवाब दिया — इरादे मैं आप पर सब ज़ाहिर कर चुका हूँ। और आप जानते हैं कि मैं कुछमुत्तफ़िक़ीम आदमी नहीं हूँ। इस वक़्त मैं आपकी ख़िदमत में ये पूछने आया हूँ कि इस कारे ख़ैर में आप मेरी कुछ मदद कर सकते हैं या नहीं।

दाननाथ की उम्मीदवारियों के लिए ज़रूरी था कि वो इस तहरीक में शरीक न हों वर्ना लाला बदरीप्रसाद फ़ौरन उनसे बदगुमान हो जायेंगे क्योंकि उनके पास न वो आज़ादाना अज़मत थी न वो जादू-ओ-तमब्बुल जिस पर अमृतराय को फ़ख़्र था। इसलिए उसने सोचकर जवाब दिया — अमृतराय तुम जानते हो कि तुम्हारे हर काम से मुझको हमदर्दी है मगर बात ये है कि अभी मेरा शरीक होना मेरे लिए सख़्त मुज़िर होगा। मैं रुपये और पैसे से मदद करने के लिए तैयार हूँ मगर पोशीदा तौर पर। अभी इस तहरीक में एलानिया शरीक होकर नुक़सान उठाना मुनासिब नहीं समझता बिलख़ुसूस इस वजह से कि मेरी शिरकत से इस अंजुमन को ज़रा भी तक़वियत पहुँचने की उम्मीद नहीं है।

बाबू अमृतराय ने उनकी सलाह पसन्द की और उनसे इमदाद का वादा लेकर अपनी कामयाबियों पर ख़ुश होते हुए मिस्टर आर० बी० वर्मा के दौलतख़ाने पर पहुँचे। साहिबे मौसूफ़ बिरहमन थे और अपने स्वभाव आला और अज़मत के एतबार से बाहर के मुआशिरीन में समझे जाते थे। उनके मज़हबी और इस्लाही ख़यालात से अभी तक अमृतराय को ज़रा भी वाक़फ़ियत न थी मगर जब उन्होंने इस अंजुमन की तजवीज़ पेश की तो पंडितजी उछल पड़े और फ़रमाया — मिस्टर अमृतराय, मुझे तुम्हारे ख़यालात से निहायत मसर्रत हुई। मैं ख़ुद इसी तरह की एक तजवीज़ बहुत जल्द पेश करनेवाला था आपने मुझे फ़ुर्सत

दे दी और मुझे कामिल उम्मीद है कि आप इस कारे अज़ीम को मेरी निस्बत में बेहतर तरीक़े पर अंजाम देंगे। मुझे इस अंजुमन का मेम्बर तसव्वुर कीजिए।

बाबू अमृतराय को पंडितजी के यहाँ ऐसी शानदार कामयाबी की उम्मीद न थी। उन्होंने सोचा था कि पंडितजी अगर उसूलन इत्तफ़ाक़ न करेंगे तो अहलेमुल्कपरस्ती वग़ैरह का ज़रूर ज़िक्र करेंगे मगर पंडितजी की गर्म हमदर्दी व दिलचस्पी ने उनका हौसला और भी बढ़ाया। अमृतराय यहाँ से निकले तो वह अपनी ही नज़रों में दो इंच ऊँचे मालूम होते थे। यहाँ से सीधे कामयाबी के जोश में ऐंठते हुए एन. बी. अगरवाला साहब की ख़िदमत में हाज़िर हुए। मिस्टर अगरवाला अलावा अच्छी अंग्रेज़ी इस्तेदाद रखने के बजाय संस्कृत के भी फ़ाज़िल आलिम थे और ख़ास-ओ-आम में उनकी बड़ी इज़्ज़त थी। उन्होंने भी अमृतराय की तजवीज़ से सच्ची दिलसोज़ी ज़ाहिर की। अलग़रज़ शाम होते-होते अमृतराय सारे शहर के सरबरआवुर्दा व नयी रोशनीवाले अस्हाब से मुलाक़ात कर आये और कोई ऐसा न था जिसने उनके अमराज़ से दिलचस्पी न ज़ताई हो या मदद देने का वादा न किया हो।

तीन बजे के वक़्त मिस्टर अमृतराय के बँगले पर एक ऐसे जल्से के इनएक़ाद की तैयारियाँ होने लगीं जो अंजुमन को बाक़ायदा तौर पर मुरत्तिब करे। उसके इन्तज़ाम के लिए दस्तूर उल-अमल तैयार करे और उसके अग़राज़ को मकासिद पब्लिक के रूबरू पेश करे। कामयाबी के जोश में ख़ूब तैयारियाँ हुईं फ़र्श-फ़ुरूश बनाये गये झाड़-फ़ानूस मेजें व कुर्सियाँ सजाकर धरी गयीं। हाज़िरीन के ख़ुर्द-ओ-नोश का भी इंतज़ाम किया गया और इन तरद्दुदात से फ़ुर्सत पाकर अमृतराय उनके मुंतज़िर हो बैठे। दो बज गये तीन बज गये मगर कोई साहब तशरीफ़ न लाये। चार बजे मगर किसी की सवारी नहीं आयी हाँ इंजीनियर साहब के पास से एक नौकर यह सन्देसा लेकर आया — इस वक़्त मैं हाज़िरी से क़ासिर हूँ। अब तो अमृतराय का इन्तिज़ार बढ़ने लगा। ज्यूँ-ज्यूँ देर होती थी उनका दिल बैठा जाता था कि कहीं कोई साहब न

आये तो मेरी सख्त तज़हीक होगी और चारों तरफ़ नादिम होना पड़ेगा। आखिर इन्तज़ार करते-करते पाँच बज गये और अभी तक कोई साहब नज़र न आये। तब तो अमृतराय को यह कामिल यक़ीन हो गया कि हज़रात ने मुझे धोखा दिया। मुंशी गुलज़ारी लाल से उनको बड़ी उम्मीद थी। सुभाने अपना आदमी उनके पास दौड़ाया। एक लम्हे के बाद मालूम हुआ कि वह नहीं हैं, पोलो खेलने तशरीफ़ ले गये। इस वक़्त तक छै बजे और जब इस वक़्त तक भी कोई साहब न आये तो अमृतराय निहायत दिलशिकस्ता हो गये। कुछ गुस्सा कुछ नाकामी कुछ अपनी तौहीन और कुछ हमदर्दों की सर्दमेहरी ने उनको ऐसा परेशान किया कि धम से चारपाई पर लेट रहे और लगे सोचने — कहीं मुझको नादिम तो न होना पड़ेगा। अफ़सोस मुझे इन हज़रात से ऐसी उम्मीदें न थीं। अगर न आना था तो मुझसे साफ़-साफ़ कह दिया होता। अब कल तमाम शहर में ये बात मशहूर हो जायगी कि अमृतराय तमाम रईसों के घर दौड़ते फिरे मगर कोई उनके दरवाज़े पर बात पूछने को भी न गया। मैं जल्से की तदबीरें न करता मुफ़्त की नदामत तो न उठाना पड़ती। बेचारे इन्हीं तफ़क्कुरात में डूबे जाते थे। अभी नौजवान आदमी थे और जो बात के धनी और धुन के पूरे थे मगर अभी तक ज़माने की सर्दमेहरी और मुआफ़िक़ीन की नाहमवारी का तजुर्बा न हुआ था और यह तजुर्बेकारी वो घुन जाने जिसने पुरजोश दिलों को सर्द कर देती है उनके इरादों को भी डगमगाने लगी। मगर ये मुश्किलों के ख़यालात महज़ एक दम के लिए आ गये थे। जब ज़रा जल्से की नाकामी का अफ़सोस कम हुआ तो इरादों ने और भी मुस्तक़िल सूरत पकड़ी। अपने दिल को समझाया — अमृतराय तू इन ज़रा-ज़रा-सी बातों से मायूस या दिलशिकस्ता मत हो। जब तूने सलीब उठायी तो नहीं मालूम तुझको क्या-क्या कुर्बानियाँ करना पड़ेंगी। अगर तेरी हिम्मत नहीं थी तो क़ौमी काम तुमसे हो चुके। दिल को मज़बूत कर और कमरे-हिम्मत को चुस्त बाँध।

यह मुसम्मम इरादा करके अमृतराय अपने कमरे से निकले सिगार

लिया और बाग की रविशों में टहलने लगे। चाँदनी छिटकी हुई थी हवा के धीरे-धीरे झोंके आ रहे थे सब्ज़े की मखमली फ़र्श पर बैठ गये और अपने इरादों के पूरा होने की तरकीबें सोचने लगे। मगर वक्त ऐसा सुहाना था और मंज़र ऐसा तमन्नाखेज़ कि बेअख्तियार ख्याल प्रेमा की तरफ़ जा पहुँचा। अपनी जेब से तसवीर के पुर्ज़े निकाल लिये और चाँदनी रात में उसे बड़ी देर तक गौर से देखते रहे। हाय-हाय ओ नाकाम अमृतराय तू क्योंकर सब्र करेगा। हाँ जिसके फ़िराक़ में तूने ये चार बरस रो रोकर काटे हैं उसी के फ़िराक़ में सारी ज़िन्दगी क्योंकर काटेगा। हाय हाय वह ग़रीब जब तेरे इरादों का हाल सुनेगी तो क्या कहेगी। उसको तुमसे मुहब्बत है। कम्बख्त वह तुम पर जान देती है, देखता नहीं कि उसके ख़ुतूत जोशे मुहब्बत से कैसे भरे होते हैं। तब क्या वह तुझे बेवफ़ा ज़ालिम मक्कार न बनायेगी। क्या तू चाहता है कि अमृतराय अब से भी भला बने अभी कुछ नहीं बिगड़ा। इन सब फ़िज़ूल ख़यालात को छोड़ो अपने अरमानों को ख़ाक में न मिलाओ। दुनिया में तुम्हारे जैसे बहुत से पुरजोश नौजवान मौजूद हैं और तुम्हारा होना न होना दोनों बराबर है। लाला बदरीप्रसाद मुँह खोले बैठे हैं, शादी कर लो, प्यारी प्रेमा के साथ ज़िन्दगी के मज़े लूटो। (बेकरार होकर) मैं भी कैसा नादान हूँ। इस तसवीर ने क्या बिगाड़ा था जो नाहक़ इसको फाड़ डाला। ईश्वर करे अभी प्रेमा यह बात न जानती हो। बाबू साहब के दिल में यही ख़यालात आ रहे थे कि ख़िदमतगार ने हाथों में एक ख़त दिया। घबराकर पूछा — किसका ख़त है ? नौकर ने जवाब दिया — लाला बदरीप्रसाद का आदमी लाया है।

अमृतराय ने काँपते हुए हाथों से ख़त लिया तो यह तहरीर थी —

बमुलाहिज़ाए जनाब मुंशी अमृतराय साहब दाम नवाज़िशहू —

हमको मोतबर ज़रिये से ख़बर मिली है कि अब आप सनातन धर्म से मुन्हरिफ़ होकर उस ईसाई जमात में दाख़िल हो गए हैं जिसको बस्ती से इसलाहे तमद्दुन से मंसूब करते हैं। हमको हमेशा से यक़ीन है कि हमारा

तर्ज़े मुआशरत ग़ैर मुल्कों के अहकाम पर मबनी है और उसमें रद्दोबदल वग़ैरह-ओ-तबदीली करनेवाले असहाब हमसे कोई ताल्लुक़ पैदा नहीं कर सकते।

बदरीप्रसाद

इस मुख़्तसर ख़त को अमृतराय ने दो बार पढ़ा और उनके दिल से अब एक बात पूरी हो गयी। नफ़्सानियत कहती थी कि ऐसी नाज़नीन को हाथ से न जाने दो अभी कुछ नहीं बिगड़ा है। और जोशे क़ौमी कहता था कि जो इरादा किया है उस पर क़ायम रहो। ज़िन्दगी बदरोज़ा है। उसको दूसरों पर क़ुरबान कर देने से बेहतर कोई तरीक़ा उसको गुज़ारने का नहीं है। कभी एक फ़रीक़ ग़ालिब आता था कभी दूसरा फ़रीक़। लड़ाई का फ़ैसला भी तो दुरुस्त लिखने पर था। आख़िर बहुत रद्दो कद के बाद अमृतराय ने बक्स से काग़ज़ निकाला और उस पर जवाब यों लिखा हुब्बे क़ौमी ने नफ़्स पर ग़लबा पा लिया था—

जिसका वो ख़ाका जनाब मुंशी बदरीप्रसाद साहब

दाम इक़बालहू

इश्तहारनामे से ज़ाहिर होकर मुम्ताज़ किया। मुझको सख़्त अफ़सोस है कि आपने उस तज्वीज़ को जो मुद्दत से सोची हुई थी यकायक मुल्तवी कर दिया। मगर चूँकि मुझको मालूम है कि हमारा तर्ज़े मुआशरत अहकामे ग़ैर से मुतनाक़िज़ है और जिसको ग़लती से सनातन धर्म कहते हैं वो पुराने और बोसीदा ज़माने के लोगों की जमात है जो मज़हब के पर्दे में ज़ाती अग़राज़ ढूँढ़ते हैं। इसलिए हमको मजबूरन उससे किनाराकश होना पड़ा। अगर इस हैसियत में आप मुझको फ़र्ज़न्दी में क़ुबूल फ़रमायें तो और वर्ना मुझे अपनी बदक़िस्मती पर अफ़सोस भी न होगा।

नियाज़मन्द
अमृतराय

बेचैन होती तो पूर्णा से वह ख़ुतूत पढ़वाकर सुनती और रोती। हाय उसने अपने दिल पर ये ज़ुल्म किये मगर ख़ुद्दारी भी ऐसी निबाही कि जो उसी का हिस्सा था। उसने इस आख़िरी ख़त के बाद अमृतराय को एक ख़त भी न लिखा। घर के लोग उसके इलाज में रुपया ठीकरियों की तरह उड़ा रहे थे मगर कुछ फ़ायदा न होता था। उसकी शादी की बातचीत भी कई जगह से हो रही थी। मुंशी बदरीप्रसाद साहब के जी में बार-बार ये बात आती कि प्रेमा को अमृतराय से ब्याह दें मगर ख़ुशामदी हमसाया के ख़याल से इरादा पलट देते थे। प्रेमा के साथ-साथ बेचारी पूर्णा भी मरीज़ा बनी हुई थी।

आख़िर होली का दिन आया। शहर में चारों तरफ़ अबीर और होली की आवाज़ें आने लगीं। चौतरफ़ा अबीर और गुलाल उड़ने लगे। आज का दिन बेचारी प्रेमा के लिए सख़्त आज़माइश का था। क्योंकि सवेरे ही से क़राबतमन्दों के यहाँ से ज़नानी सवारियाँ आना शुरू हुईं और उसको दुल्हन की तरह पुरतकल्लुफ़ कपड़े पहन कर मेहमानों की ख़ातिर करनी और उनके साथ होली खेलनी पड़ी। मगर हाय उसके चेहरे से आज वो हसरत बरस रही थी जो इससे पहले कभी नज़र न आयी थी। रह-रहकर उसके कलेजे में कसक पैदा होती रह-रहकर उठें इज़तिराब से दिल में दर्द उठता मगर बेचारी जिस ज़बान से उफ़ किये सब कुछ सह रही थी। रोज़ अकेले में रोया करती थी जिससे कुछ तसकीन हो जाया करती थी। आज मारे शर्म के रोये क्योंकर। सबसे बड़ी दिक़्क़त ये थी कि रोज़ ब रोज़ पूर्णा बैठकर तसफ़्फ़ीआमेज़ बातें करके उसका दिल बहलाया करती। आज वो भी अपने घर त्योहार मना रही थी।

पूर्णा का मकान पड़ोस में वाक़े था। उसके शौहर बसन्तकुमार एक निहायत हलीम-उल-मिज़ाज मगर शौक़ीन व मुहब्बतपिज़ीर तबीयत के नौजवान थे। हर बात में उसी की बात पर अमल करते। उन्होंने उसको थोड़ा-सा पढ़ाया भी था। अभी शादी हुए दो बरस भी न बीतन पाये थे और ज्यूँ-ज्यूँ दिन गुज़रते थे दोनों की मुहब्बत और ताज़ा होती जाती थी। पूर्णा भी अपने शौहर की आशिक़े ज़ार थी। अपनी भोली भोली बातों

और अपनी किफ़ायतशआराना अदाओं से उनका ग़म ग़लत किया करती। जब कभी वो दौरे पर चले जाते तो वो रात भर ज़मीन पर पड़ी करवटें बदलती और रोती। पंडितजी तीस रुपये से ज़्यादा मुशाहिरेदार न थे मगर पूर्णा इस पर क़ाने थी और अपने को निहायत ख़ुशक़िस्मत औरत ख़याल करती थी। पंडितजी तहमीने घर के लिए बेहतरीन कोशिशें करते सिर्फ़ इसलिए कि पूर्णा को अच्छे से अच्छे कपड़े पहनायें और अच्छे-अच्छे गहनों से आरास्ता करें। पूर्णा हरीस न थी। जब पंडितजी उसको कोई तोहफ़ा देते तो जामे में फूली न समाती मगर कभी उसने अपनी ख़्वाहिशों को पंडितजी से ज़ाहिर नहीं किया था।

हक़ तो ये है कि उनकी मुहब्बत के मुक़ाबिले में पहनने-ओढ़ने का शौक़ कुछ यों ही-सा रह गया था। होली का दिन आ गया। आज के दिन का क्या पूछना। जिसने साल भर चीथड़ों ही पर बसर किया हो वो भी आज क़र्ज़ दाम ढूँढ़कर लाता है और ख़ुशियाँ मनाता है। आज लोग लँगोटी में फाग खेलते हैं। आज के दिन रंज करना गुनाह है। पंडित बसन्तकुमार की शादी के बाद यह दूसरी होली थी। पहली होली में बेचारे तिहीदस्ती की वजह से बीवी की कुछ ख़ातिर न कर सके थे। मगर इस होली के लिए उन्होंने अपनी हैसियत के मुताबिक़ बड़ी-बड़ी तैयारियाँ की थीं। सौ डेढ़ सौ रुपये जो तनख़्वाह के अलावा पसीना बहा-बहाकर जमा किये थे उनसे अपनी प्यारी पूर्णा के लिए एक ख़ूबसूरत कंगन बनवाया था। निहायत नफ़ीस और ख़ुशरंग साड़ियाँ मोल लाये थे। इसके अलावा घर दोस्तों की दावत भी की थी और उनके वास्ते कई क़िस्म के मुरब्बे अचार लौज़ियात वग़ैरह मुहैया किए थे। पूर्णा आज मारे ख़ुशी के जामे में फूली न समाती थी। उसकी नज़रों में आज अपने से ज़्यादा ख़ूबसूरत दुनिया में कोई औरत न थी। वो बार-बार शौहर की तरफ़ प्यार भरी निगाहों से देखती और पंडितजी भी उसके सिंगार और फ़ैशन पर आज ऐसे फ़िदा हो रहे थे कि बार बार घर में आते और उसको गले से लगाते।

कोई दस बजे होंगे कि पंडितजी घर में आये और पूर्णा को पुकारकर मुस्कराते हुए बोले—प्यारी आज तो जी चाहता है तुमको आँखों में छिपा लूँ।

पूर्णा ने आहिस्ता से एक ठोका देकर और प्यार की निगाहों से देखकर कहा — यह देखो मैं तो पहले ही से बैठी हूँ।

इस अदा पर पंडितजी बेखुदरफ़्ता हो गये झट बीबी को गले से लगाकर प्यार किया। जरा और देर हुई तो पूर्णा ने कहा — अब बस करो चाहते हो जरा बैठ जाओ तो तुमको उबटन मल दूँ। देर हो जायगी तो खाने में देर सबेर होने से सरदर्द हो जायगा।

पंडितजी ने कहा — नहीं-नहीं रहने दो मैं उबटन न मलवाऊँगा। लाओ धोती दो नहा आऊँ।

पूर्णा — वाह उबटन न मलवायेंगे! आज की रीत ही यह है। आकर बैठ जाओ।

पंडित — नहीं तुमको खामखाह तकलीफ़ होगी और इस वक्त गर्मी है जी नहीं चाहता।

पूर्णा ने लपककर शौहर का हाथ पकड़ लिया और चारपाई पर बैठकर उबटन मलने लगी।

पंडित — मगर भई, जरा जल्दी करना। आज मैं गंगाजी नहाने जाया चाहता हूँ।

पूर्णा — अब दोपहर को गंगाजी कहाँ जाओगे। महरी पानी लायेगी यहीं पर नहा लो।

पंडित — नहीं प्यारी आज गंगा में बड़ा लुत्फ़ आयेगा।

पूर्णा — अच्छा तो जरा जल्दी लौट आना यह नहीं कि इधर-उधर तैरने लगो। नहाते वक्त तुम बहुत दूर तक तैर जाया करते हो।

थोड़ी देर में पंडितजी उबटन मलवा चुके और एक रेशमी धोती साबुन तौलिया और एक कमंडल हाथ में लेकर नहाने चले। यह बिसठमूम घाट से जरा अलग नहाया करते थे। पहुँचते ही नहाने लगे मगर आज ऐसी धीमी-धीमी हवा चल रही थी पानी ऐसा साफ़ और शफ़्फ़ाफ़ था उसमें हलकोरें ऐसे भले मालूम होते थे और दिल ऐसी उमंगों पर था कि बेअख्तियार जी तैरने पर ललचाया। यह बहुत अच्छे तैराकों में थे लगे तैरने। और गुलाबाज़ियाँ करने। इत्तफ़ाक़न उनको बीच धारे में दो सुर्ख चीजें बहती नज़र

आयी। गौर से देखा तो कँवल के फूल थे। दूर से ऐसे खुशनुमा मालूम होते थे कि बसन्तकुमार का जी उन पर लहराया। सोचा अगर ये मिल जाँय तो प्यारी पूर्णा के कानों के लिए झुमका बनाऊँ। लहीम व शहीम आदमी थे हजारों बार घंटों मुतवातिर तैर चुके थे। उनको यकीन कामिल था कि फूल ला सकता हूँ। दूर से फूल साकिन मालूम होते थे चुनांचे उनकी तरफ रुख किया मगर ज्यूँ-ज्यूँ वो तैरते थे फूल भी बहते जाते थे। बीच में कोई रेत ऐसा न था जिस पर बैठकर दम लेते। इसी जोश में उनको ये ख्याल गुजरा कि अगर आधा फूलों तक पहुँचते-पहुँचते थक हो गये तो डूबना क्याकर। पूरे जोर से तैरना शुरू किया। कभी हाथों से कभी पैरों से जोर मारते-मारते बड़ी मुश्किलों से वहाँ तक पहुँचे मगर उस वक्त तक हाथ पाँव दोनों थक गये थे। हुआ कि फूलों के लेने के लिए जो हाथ लपकाना चाहा तो वो काबू में न थे। जब तक हाथ फैलायें कि फूल एक दो कदम और बढ़ गये और फिर उनके पीछे चले। आखिर उस वक्त फूल हाथ लगे जब कि हाथों में तैरने की ताकत मुतलक न बाकी रही थी। हाय फूल दाँतों से दबाये बीच धारे से उन्होंने किनारे की तरफ देखा तो ऐसा मालूम हुआ गोया हजारों कोस की मंजिल है। उनका हौसला पस्त हो गया। हाथों में जरा भी सकत न थी। मालूम होता था कि वह जिस्म में है ही नहीं। हाय इस वक्त बसन्तकुमार के चेहरे पर जो हसरत व बेकसी छायी हुई थी उसको बयान करने ही से छाती फटती है। उनको मालूम हुआ कि मैं डूबा जा रहा हूँ। उस वक्त प्यारी पूर्णा का ख्याल आया कि वो मेरा इन्तजार कर रही होगी। उसकी प्यारी मोहनी सूरत नजरों के सामने खड़ी हो गयी। उन्होंने चाहा कि चिल्लाऊँ मगर बावजूद कोशिश के जबान से आवाज न निकली। आँखों से आँसू जारी हो गये और अफ़सोस एक मिनट में गंगामाता ने उनको हमेशा के लिए गोद में ले लिया।

इधर का हाल सुनिए। पंडितजी के चले जाने के बाद पूर्णा ने बड़े तकल्लुफ से पानें परसीं। एक बर्तन में गुलाल घोली उसमें दो चार कतरे सुगन्धपान के टपकाये। पंडितजी के लिए संदूक से नये कुर्ते निकाले टोपी बड़ी खूबी से चुनी। आज पेशानी पर जाफ़रान और चन्दन मलना मुबारक

समझा जाता है। चुनांचे उसने अपने नाजुक-नाजुक हाथों से चन्दन रगड़ा पान लगाये मेवे सलीके से कतर-कतर तश्तरी में रखे। रात ही को प्रेमा के घर से खुशबूदार कलियाँ लेती आयी थी उनको तर कपड़े से ढाँककर रख दिया था इस वक्त खूब खिल गयी थीं उनको तागे में गूँथकर खूबसूरत हार तैयार किया। अपने शौहर का इन्तजार करने लगी। उसके अंदाज के मुताबिक इस वक्त तक पंडितजी को नहाकर आ जाना चाहिए था। मगर नहीं अभी कुछ देर नहीं हुई, आते ही होंगे एक दस मिनट और रास्ता देख लूँ। अब इन्तिजार हुआ। क्या करने लगे। धूप सख्त हो रही है। जल्दी वक्त नहाया बेनहाया एक हो जायगा। क्या जाने यार-दोस्तों से बातें करने लग गये हों। नहीं-नहीं मैं उनको खूब जानती हूँ दरिया नहाने जाते हैं तो तैरने की सूझती है। आज भी तैर रहे होंगे। ये सोचकर उसने कामिल आध घंटे तक शौहर का और इन्तजार किया मगर जब वे अब भी न आये तब तो उसको जरा बेचैनी मालूम होने लगी। महरी से कहा — बिल्लो जरा दौड़ो तो जाओ देखो क्या करने लगे।

महरी बड़ी नेकबख्त बीबी थी। हर महीने में बिला माँगे तनख्वाह पाती थी और शायद ही कोई दिन ऐसा जाता था कि पूर्णा उसके साथ कुछ सलूक न करती हो। पस वो इन दोनों को बहुत अजीज रखती थी फ़ौरन लपकी हुई गंगाजी की तरफ चली। वहाँ जाकर क्या देखती है कि किनारे पर दो तीन मल्लाह जमा हैं। पण्डितजी की धोती-तौलिया वगैरह किनारे धरी है। ये देखते ही उसके पैर मन-मन भर के हो गये। दिल धड़-धड़ करने लगा। या नारायण यह क्या गजब हो गया! बदहवासी के आलम में नजदीक पहुँची तो एक मल्लाह ने कहा — काहे बिल्लो तुम्हार पंडित नहाये आया रहेन?

बिल्लो ने कुछ जवाब न दिया। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। सर पीटने लगी। मल्लाहों ने उसको समझाया कि अब रोये पीटे ना होत है। उनका चीज बस्त लेव और घर का जाव। बेचारे बड़े भल मनई रहेन।

बेचारी बिल्लो ने पंडितजी की चीजें लीं और रोती-पीटती घर को

तरफ़ चली। ज्यूँ-ज्यूँ वो मकान के क़रीब आती थी त्यूँ-त्यूँ उसके क़दम पीछे को हटे जाते थे। हाय नारायन पूर्णा को कैसे ये ख़बर सुनाऊँगी। उसकी क्या गत होगी। बिचारिया सब तैयारी किये शौहर का इन्तज़ार कर रही है ये ख़बर सुनकर बेचारी की छाती फट जायगी।

इन्हीं ख़यालात में ग़र्क़ बिल्लो रोती घर में दाख़िल हुई। तमाम चीज़ें ज़मीन पर पटक दीं और छाती पर दुहत्तड़ मार हाय-हाय करने लगी। ग़रीब पूर्णा आज ऐसी ख़ुश थी कि उसका दिल आज उमंगों और अरमानों से ऐसा भरा हुआ था कि यकायक इस दहशतनाक वाक़ाह की ख़बर ने पहुँचकर उसको मजबूर कर दिया। वह न रोयी न चिल्लायी न बेहोश होकर गिरी जहाँ खड़ी थी वहीं दो तीन मिनट तक बेहिस-ओ-हरकत खड़ी रही। यकायक उसके हवास बरजा हुए और उसको अपनी हालत का अन्दाज़ा करने की क़ाबलियत हुई और तब उसने एक चीख़ मारी और पछाड़ खाकर गिरने ही को थी कि बिल्लो ने उसको गोद में सँभाल लिया और उसको चारपाई पर लिटाकर पंखा झलने लगी। दस पंद्रह मिनट में पास पड़ोस की दसहा औरतें अन्दर जमा हो गयीं। बाहर भी बहुत से मर्द इकट्ठा हो गये। तजवीज़ हुई कि लाश उठवाया जावे। बाबू कमलाप्रसाद भी तशरीफ़ लाये थे। फ़ौरन पुलिस को इत्तिला करके मदद मँगवायी। प्रेमा को ज्यूँ ही इस हादसए जाँफ़र्सा की ख़बर मिली पैर तले से मिट्टी निकल गयी। फ़ौरन चादर ओढ़ ली और बदहवास ज़ीने से उतरी और गिरती-पड़ती पूर्णा के मकान की तरफ़ चली। हर चंद माँ ने रोका मगर उसने न माना। जिस वक़्त प्रेमा पहुँची है पूर्णा के हवास बजा हो गये थे और वो निहायत दिल हिला देनेवाली आवाज़ में रो रही थी। घर में सैकड़ों औरतें जमा थीं मगर कोई ऐसी न थी जिसकी आँखों से आँसू न बह रहे हों। उस ग़रीब पूर्णा की हालत वाक़ई क़ाबिले तरस थी। अभी एक घंटे पहले वो अपने को दुनिया की सबसे ख़ुशक़िस्मत औरतों में समझती थी मगर हाय अब उसका-सा बदनसीब कोई न होगा। बेचारी समझाने से ज़रा ख़ामोश हो जाती मगर ज्यूँही कोई बात याद आ जाती त्यूँही फिर दिल उमँड़ आता और आँसू की झड़ी लग जाती। हाय क्या

एक-दो बात बग्ग की थी। उसने दो बरस तक अपने प्यारे शौहर की मुहब्बत का मज़ा लूटा था। उसकी एक-एक बात उसको याद आती जाती थी। आज उसने चलते-चलाते कहा था —प्यारी पूर्णा जी चाहता है तुमको आँखों में बिठा लूँ। अफ़सोस अब कौन प्यार करेगा। उस रेशमी चोली और तौलिये की तरफ़ उसकी निगाह गयी तो बड़े ज़ोर से चीख़ उठी। यकायक प्रेमा को देखा तो झपटकर उठी और उसके गले मिलकर ऐसे बिलबिलाकर कहने में रोयी कि अन्दर तो अन्दर बाहर मुंशी बदरीप्रसाद साहब बाबू कमलाप्रसाद और दीगर हज़रात आँखों से रूमाल दिये बेअख़्तियार रो रहे थे। प्रेमा बेचारी का महीनों रोते-रोते गला बैठ गया था। हाँ उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे। पहले वो समझती थी कि मैं ही सारे ज़माने में बदक़िस्मत हूँ मगर उस वक़्त वो अपना दुख भूल गयी और बड़ी मुश्किल से ज़ब्त करके बोली — प्यारी पूर्णा ये क्या ग़ज़ब हो गया !

बेचारी पूर्णा की हालत वाक़ई दर्दनाक थी। उसकी ज़िन्दगी का बेड़ा पार लगानेवाला कोई न था। उसके मैके में बजुज़ एक बूढ़े बाप के और कोई न था और वो बेचारा भी आज-कल का मेहमान हो रहा था। ससुराल में सिर्फ़ शौहर से नाता था न सास न ससुर, न देवर न अक़ारिब कोई चुल्लू भर पानी देनेवाला न था। असासा भी घर में कुछ न था कि ज़िन्दगी भर को काफ़ी होता। बेचारा शौहर अभी कुल दो बरस से नौकरी कर रहा था और आमदनी से ख़र्च किसी तरह कम न था। रुपया कहाँ से जमा होता। पूर्णा को अभी तक ये सब बातें नहीं सूझी थीं। अभी उसको सोचने का मौक़ा ही न मिला था। हाँ बाहर मर्दाने में लोग आपस में इस अम्र पर बातचीत कर रहे थे।

दो ढाई घंटे तक तो उस मकान में औरतों का ख़ूब हुजूम था। रोना पीटना मचा था मगर शाम होते-होते सब औरतें अपने-अपने घर गयीं। बेचारी प्रेमा को ग़श पर ग़श आने लगे थे इसलिए लोग उसे वहाँ से पालकी पर उठाकर ले गये और दिया में बत्ती पड़ते-पड़ते उस मकान में बजुज़ बिल्लो और पूर्णा के कोई न था। हाय यही वक़्त था कि बसन्तकुमार

दफ्तर से आते। पूर्णा उस वक्त दरवाजे पर खड़ी उनकी राह देखा करती थी और उनको देखते ही लपककर उनके हाथों से छतरी ले लेती थी। रोज उनके लिए जलेबियाँ लाकर धर देती थी। जब तक वो मिठाइयाँ खाते थे वो झटपट पान के बीड़े लगाकर देती थी। वो आशिके जार दिन भर का थका-माँदा बीवी की इन खातिरों से अपनी तमाम तकलीफों को भूल जाता। कहाँ वह मसरूफ़ाना खिदमत और कहाँ आज ये सन्नाटा। तमाम घर सांय सांय कर रहा था। दीवारें काटने को दौड़ती थीं। मालूम होता था कि दरो-दीवार पर हसरत छायी है। बेचारी पूर्णा आँगन में खामोश बैठी है। उसके कलेजे में अब रोने की ताकत नहीं। हाँ आँखों से आँसू के तार जारी हैं। उसको मालूम होता है कि कोई दिल से खून चूस रहा है। उसके महसूसात को बयान करने की हमारी जबान में ताकत नहीं। हाय इस वक्त पूर्णा पहचानी नहीं जाती। उसका चेहरा जर्द हो गया है। होंठों पर पपड़ी छायी है। आँखें सूज आयी हैं। सर के बाल खुलकर पेशानी पर आ गिरे हैं। रेशमी साड़ी फटकर तार-तार हो गयी है। जिस्म पर जेवर एक भी नहीं है। चूड़ियाँ टूटकर चकनाचूर हो गयी हैं। वो हसरत हिरमाँनसीबी मातम की मुजस्सम तसवीर हो रही है। उसकी ये हालत और भी नाकाबिले बर्दाश्त हो रही है क्योंकि कोई उसको तसकीन देनेवाला नहीं है। ये सब कुछ हो गया है मगर पूर्णा अभी तक पूरे तौर पर मायूस नहीं हुई है। उसके कान दरवाजे की तरफ लगे हैं कि कहीं कोई उनके सही व सलामत निकलने की खबर न लाता हो। अकसरहा दिलों का यही हाल होता है। उनकी आस टूट जाने पर भी बँधी रहती है।

शाम होते-होते इस पुरहसरत वाक्ये की खबर सारे शहर में गूँज उठी। जो सुनता था अफसोस करता था। बाबू अमृतराय कचहरी से आ रहे थे कि रास्ते में उनको यह खबर मिली। वो बसन्तकुमार को बखूबी जानते थे। उन्हीं की सिफारिश से पंडितजी को दफ्तर में वो जगह मिली थी। सख्त अफसोस हुआ। मकान पर आते ही कपड़े बदल बाइसिकिल पर सवार हो पूर्णा के मकान की तरफ पहुँचे। जाकर देखा तो चौतरफ़ा सन्नाटा छाया हुआ है। दरो-दीवार से सन्नाटा बरस रहा है। पूर्णा ऐसी ही आवाजों के

खूब रोने लगती थी। इस वजह से अब ऊपर न जाती। हाँ शाम के वक्त वो महताबी पर जाकर जरूर बैठती इसलिए नहीं कि उसको समाँ सुहाना मालूम होता था या हवा खाने को जी चाहता था। नहीं बल्कि सिर्फ इसलिए कि वो कभी कभी अमृतराय को उधर से पूर्णा के घर जाते देखती। हाय जिस वक्त वो उनको देखती उसका दिल बल्लियों उछलने लगता। जी चाहता कि कूद पड़ूँ और उनके कदमों पर जान निसार कर दूँ। जब तक वो नजर आते वो टकटकी बाँधे उनको देखा करती। जब वो नजरों से छुप जाते तब बेअख्तियार उसकी आँखों में आँसू भर आते और कलेजा मसोसने लगता। ऐसा मालूम होता कि दिल बैठा जा रहा है। इसी तरह कई महीने बीत गये।

एक रोज वो हस्बे-मामूल अपने कमरे में लेटी हुई करवटें बदल रही थी कि पूर्णा अन्दर आयी। हाय उस वक्त ऐसा मालूम होता था कि उसने किसी मुहलिक आरजे से शिफा पायी है। चेहरा जर्द था और उस पर गजब की पजमुर्दगी छायी हुई थी। रुखसारे पिचके हुए थे और आँखें जिनमें अब चलत-फिरत बाकी न रही थी अन्दर घुसी हुई थीं। सर के बाल शानों पर बेतरतीबी से इधर-उधर बिखरे हुए थे। गहने जेवर का नाम न था। सिर्फ एक नैनसुख की साड़ी पहने हुए थी। उसको देखते ही प्रेमा दौड़कर उसके गले से लिपट गयी और उसको लाकर अपनी चारपाई पर बिठाया।

कई मिनट तक दोनों सखियाँ खामोश थीं। दोनों के दिलों में खयालात का दरिया उमड़ा हुआ था। मगर जबानों में याराए गोयाई न था। आखिर पूर्णा ने कहा — प्यारी प्रेमा क्या आजकल तबीयत खराब है? बिलकुल घुलकर काँटा हो गयी हो।

प्रेमा ने मुस्कराने की कोशिश करके कहा — पूर्णा तुम भूली जाती हो, मेरी तबीयत अच्छी कब थी। तुम तो खैरियत से रहीं?

पूर्णा — (आँखें पुरआब होकर) मेरी खैरियत क्या पूछती हो सखी खैरियत तो मेरे लिए सपना हो गयी। तीन महीने से ज्यादा हो गये मगर अब तक मेरी आँखें नहीं झपकीं। मालूम होता है नींद आँसू होकर बह गयी।

प्रेमा — सखी ईश्वर जानता है मेरा भी यही हाल है। मगर तुम ब्याही विधवा हो तो मैं कुँआरी विधवा हूँ। हमारी-तुम्हारी एक ही गत है। हाँ सखी मैंने ठान लिया है कि अब इसी कौम में जिन्दगी काटूँगी।

पूर्णा — कैसी बातें करती हो प्यारी मैं अभागिनी हूँ मेरा क्या ठिकाना मुझ मोयमा मेरी किस्मत में बदा था भोग चुकी। मगर तुम अपने को क्यों घुलाये डालती हो। प्यारी मैं तुमसे सच कहती हूँ बाबू अमृतराय की हालत भी तुम्हारी ही-सी है। वो मेरे यहाँ कई बार आये थे निहायत मुतफ़क्किर मालूम होते हैं। मैंने एक रोज़ देख लिया था वो तुम्हारे काढ़े हुए रूमाल लिये हुए थे।

प्रेमा का चेहरा यकायक खिल गया। उन्हें मसर्रत से आँखें जगमगाने लगीं। उसने पूर्णा का हाथ अपने हाथ में ले लिया और उसकी आँखों से आँखें मिलाकर बड़ी संजीदगी से पूछा — मेरी जान सच बताओ कभी उनसे इधर की बातें भी आती हैं?

पूर्णा — (मुस्कराकर) क्यों नहीं कई बार बात चली। मैंने उनसे कहा — आप अपनी शादी क्यों नहीं करते। मगर उन्होंने इसका कुछ जवाब न दिया। हाँ दूसरे से मालूम हुआ कि इस क़िस्म की बात उनको नागवार गुज़रती है। इसी ख्याल से फिर यह तज़किरा छेड़ते डरती हूँ।

प्रेमा — तुम उनके सामने निकलती हो?

पूर्णा — क्या करूँ बिना सामने आये काम तो नहीं चल सकता और सखी अब उनसे क्या पर्दा करूँ। उन्होंने मुझ पर जो-जो एहसान किये हैं उनसे मैं कभी उरिन नहीं हो सकती। पहले ही दिन जब कि मुझ पर यह बिपत पड़ी उसी रात को मेरे यहाँ चोरी हो गयी। जो कुछ असबाब था ज़ालिमों ने मूस लिया। सच मानो उस वक्त मेरे पास एक कौड़ी भी न थी। बड़े फेर में पड़ी हुई थी कि अब क्या करूँ। जिधर नज़र दौड़ाती अँधेरा नज़र आता था। उसी दिन बाबू अमृतराय आये। ईश्वर उनको जुग-जुग सलामत रक्खे उन्होंने बिल्लो की तनख़ाह मुक़र्रर कर दी और मेरे साथ भी बहुत कुछ सुलूक किया। अगर उस वक्त आड़े न आते तो शायद अब तक बिना दाना मर गयी होती। सोचती हूँ कि वो इतने बड़े आदमी

होकर मुझ भिखारिणी के दरवाजे पर आते हैं तो उनसे क्या पर्दा करूँ। और दुनिया ऐसी है कि इतना भी नहीं देख सकती। वो जो पड़ोस में पंडाइन रहती हैं, कई बार मेरे मकान पर आयीं और बोलीं कि सर के बाल मुड़ा लो। विधवाओं को सर के बाल न रखने चाहिए। मगर मैंने अब तक उनका कहना नहीं माना। इस पर सारे मुहल्ले में तरह-तरह की बातें मेरी निस्बत की जाती हैं। कोई कुछ कहता है कोई कुछ। जितने मुँह उतनी बातें। बिल्लो आकर सब कहानी मुझसे कहती है। सब सुन लेती हूँ और रो-धो कर चुप हो रहती हूँ। मेरी किस्मत में दुख भोगना लोगों की बुरी-भली सुनना न लिखा होता तो ये आफ़त ही काहे को आ पड़ती। मगर बालों ने क्या क़सूर किया है जो उनको मुड़ा दूँ। ईश्वर ने सब कुछ तो हर ही लिया अब क्या इन बालों से भी हाथ धोऊँ।

ये कहकर पूर्णा ने शानों पर बिखरे हुए लम्बे-लम्बे बालों को बड़े इत्मीनान की निगाहों से देखा। प्रेमा ने उनको हाथ से सम्हालकर कहा — नहीं प्यारी पूर्णा तुम्हें हमारी क़सम बालों को मत मुड़ाना। पंडाइन को बकने दो। ह बाल मुड़ा लो। ईश्वर जाने कैसे खूबसूरत बाल हैं और गो तुमने कंघी नहीं की है ताहम बहुत खूबसूरत मालूम होते हैं। मुसीबत तो जो पड़ गयी उसे दिल ही जानता है। बालों के मुड़ाने से क्या फ़ायदा। ये देखो नीचे की तरफ़ जो खम पड़ गया है कैसा खुशनुमा मालूम होता है।

ये कहकर प्रेमा उठी बक्स में से खुशबूदार तेल निकाला और जब तक पूर्णा हाँय-हाँय करे कि उसने उसके सर की चादर खिसकाकर तेल डाल दिया और उसका सर ज़ानू पर रखकर आहिस्ता-आहिस्ता मलने लगी। पूर्णा बेचारी इन नाजबरदारियों की मुतहम्मिल न हो सकी। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। बोली — प्यारी प्रेमा ये क्या ग़ज़ब करती हो। अभी क्या कम बदनामी हो रही है। जो बाल सँवारे निकलूँगी नहीं मालूम सब क्या कहेंगे। अब तुमसे क्या दिल की बात छिपाऊँ सखी ईश्वर जानता है मुझे ये बाल गुद बोझ मालूम होते हैं। जब इस सूरत को देखनेवाला ही जहान से उठ गया तो ये बाल किस काम के। मगर मैं जो इनको रखकर पड़ोसियों के महने सहती हूँ तो सिर्फ़ इस ख़याल से कि सर

के बाल मुड़ाकर मुझसे बाबू अमृतराय के सामने न निकला जायगा हाय सर मुड़ाकर मैं उनके सामने कैसे जाऊँगी और वो अपने दिल में क्या समझेंगे। ये कहकर पूर्णा फिर चश्मे पुरआब हो गयी और प्रेमा ने आहिस्ता-आहिस्ता उसके सर में तेल मला। उसके बाद कंघी की। बेचारी पूर्णा तो मुद्दत से इन आराइशों व बनावटों को खैरबाद कह चुकी थी। इन हमदर्दाना दमसाजियों ने उसके दिले दर्दमन्द को मसोसना शुरू किया मगर प्रेमा ने निहायत मुहब्बतआमेज़ अन्दाज से उसके बाल गूँथे और तब आहिस्ता से एक आईना लाकर उसके सामने रख दिया। हाय पूर्णा ने तीन महीने से आईना नहीं देखा था। उसको मालूम होता था कि मेरी सूरत बिलकुल उतर गयी होगी मगर आज जो देखा तो सिवाय इसके कि चेहरा ज़र्द हो गया था और कोई तब्दीली न मालूम हुई। बल्कि सादगी हसरत और मायूसी ने एक नई कैफ़ियत पैदा कर दी थी। आँखों में आँसू भरकर बोली — प्रेमा ईश्वर के लिए अब बस करो। मेरी क़िस्मत में ये सिंगार बदा ही नहीं है। पड़ोसी देखेंगे तो उनकी छाती फटेगी नहीं मालूम क्या बनावें। ये कहकर वो खामोश हो गयी। और वो मातमारें जिनको मुड़ाने की वो कोशिश कर रही थी ताज़ा हो आयीं। प्रेमा उसकी सूरत को टकटकी बाँधकर देख रही थी। उसको पूर्णा कभी ऐसी हसीन न मालूम हुई थी। उसने प्यार से उसे गले लगा लिया और बोली — पूर्णा क्या हर्ज है अगर तुम मेरे यहाँ उठ आओ। हम-तुम दोनो बहिना साथ-साथ रहेंगे। तुम्हें मेरी क़सम। इन्कार मत करो।

पूर्णा — प्यारी इससे बढ़कर मुझे क्या खुशी हासिल हो सकती है कि मैं तुम्हारे साथ-साथ रहूँ। मगर हाय अब तो मुझको फूँक-फूँककर पैर धरना पड़ता है। नहीं मालूम ज़माना क्या कहेगा? अलावा इसके इस मामले में बाबू अमृतराय की सलाह की भी ज़रूरत है बिला उनकी मर्ज़ी के कैसे आ सकती हूँ। ज़माना कैसा अंधा है। ऐसे रहमदिल और गरीब परवर शख्स को लोग कहते हैं कि ईसाई हो गया है। कहनेवालों के मुँह से न मालूम कैसे ऐसी झूठ बात निकलती है। मुझसे जो कहते थे कि मैं बहुत जल्द एक ऐसा स्थान बनानेवाला हूँ जिसमें लावारिस विधवाएँ

था जिससे खुशबू उड़ रही थी। कुसुमन धानी रंग की रेशमी चादर जो उनके गले में पड़ी हुई थी हवा के नर्म-नर्म झोंकों से लहरा-लहराकर एक कैफ़ियत दिखाती थी। जूते की आवाज़ सुनते ही बिल्लो ने बाबू साहब को कमरे में बिठा दिया।

अमृतराय — क्यों बिल्लो खैरियत? (खैरियत?)

बिल्लो — हाँ सरकार, सब खैरियत।

इसी अरसा में निशस्तगाह का अन्दरूनी दरवाज़ा खुला और पूर्णा निकली। बाबू अमृतराय ने उसकी तरफ़ देखा तो हैरत में आ गये और निगाह खुद-ब-खुद उसके चेहरे पर जम गयीं। पूर्णा मारे शर्म के गड़ी जाती थी कि आज क्यों मेरी तरफ़ इस तरह ताक रहे हैं। उसको नहीं मालूम था कि आज मैंने बालों में तेल डाला है कंघी की है पेशानी पर ईंगुर की एक बिन्दी भी पड़ी हुई है। बाबू अमृतराय ने उसको इस बनाव चुनाव के साथ कभी नहीं देखा था और न उनको कभी ख़याल हुआ था कि वो एसी हसीन होगी। चन्द मिनट तक तो पूर्णा सर नीचा किये खड़ी रही। यकायक उसको अपने गुँथे हुए बालों का ख़याल आ गया और उसने फ़ौरन शर्म के गर्दन नीची कर ली। घूँघट को बढ़ाकर चेहरा छुपा लिया और यह ख़याल करके कि शायद बाबू साहब इस बनाव-सिंगार से नाराज़ हैं उसने निहायत भोलेपन के साथ यूँ माज़रत की मैं क्या करूँ आज प्रेमा के घर गयी थी उन्होंने ज़बर्दस्ती सर में तेल डालकर बाल गूँथ दिये। मैं कल सब बाल कटवा डालूँ ये कहते-कहते उसकी आँखों में आँसू भर आये।

एक तो उसके बनाव सिंगार, दूसरे उसके भोलेपन ने बाबू साहब का लुभा लिया। बेअख़्तियार बोल उठे, नहीं नहीं तुम्हें मेरे सर की क़सम ऐसा हरगिज़ न करना। मैं बहुत खुश हूँ कि तुम्हारी सखी ने तुम्हारे ऊपर यह मेहरबानी की। अगर इस वक़्त वो यहाँ होतीं तो मैं उनका इस एहसान के लिए शुक्रिया अदा करता। पूर्णा पढ़ी लिखी औरत थी हिन्दी के मुश्किल दोहरों के माने निकाल लेती। इस इशारे को समझ गयी और झेंपकर गर्दन नीची कर ली।

प्रेमा का नाम सुनकर बाबू साहब को ख़्वाहिश पैदा हुई कि ज़रा उसकी

मिस्तर मुझ और हालत मालूम नहीं। बोले — तुम्हारी सखी प्रेमा है तो अच्छी तरह?

पूर्णा — अच्छी तरह क्या है आज उनको देखकर मैं अपनी मुसीबत भूल गयी। वो बिलकुल घुलकर काँटा हो गयी हैं। महीनों से खाना-पीना बराये नाम है। दिन भर पलँग पर पड़े-पड़े रोया करती हैं। घरवाले लाख समझाते हैं नहीं मानतीं। आज मुझे देखकर बहुत खुश हुईं और बड़ी देर तक अपने दुख-दर्द की दास्तान सुनाती रहीं। आखिर में उन्होंने कहा — पूर्णा अगर मेरी चली तो बाबू अमृतराय की वर्ना कुँवारी रहूँगी।

इस खबर को सुनकर अमृतराय के चेहरे पर एक हसरत-सी छा गयी। बोले — सच?

पूर्णा — जी हाँ उनकी हालत निहायत नाजुक है। मुझसे बार-बार पूछती थीं कि तुमसे बाबू साहब से कभी इधर का जिक्र आता है? मैंने कह दिया कि वो तुम्हारे फ़िराक़ में बहुत बेचैन हैं। इस पर बहुत खुश हुईं।

अमृतराय — तुमको कैसे मालूम हुआ कि मैं प्रेमा के फ़िराक़ में बेचैन हूँ। कोई जमाना था जब मैं उनका फ़िदाई था और उनसे शादी करने का अरमान रखता था मगर अब वो बातें गुजर गयीं। मुंशी बदरी प्रसाद ने मुझे इस एजाज़ के क़ाबिल नहीं समझा। मुझे यह सुनकर सख्त अफ़सोस हुआ कि प्रेमा अभी तक मुझको याद करती है।

पूर्णा — बाबू साहब मेरी की गुस्ताखी मुआफ़। मुझे तो यक़ीन नहीं आता कि प्रेमा की मुहब्बत आपके दिल में नहीं है। लोग कहते हैं मुहब्बत छुप ही नहीं सकती। इसके अलावा आज जब मैंने उनसे आपका जिक्र किया तो फूल की तरह खिल गयीं। चेहरा रौशन हो गया मुझ गले लगाकर कहा — सखी उनसे कह देना कि अगर अब भी मुझ पर तरस न खायेंगे तो मैं ज़रूर ज़हर खा लूँगी।

अमृतराय — पूर्णा हमको सख्त अफ़सोस है उनकी हालत पर — इसमें कोई शक नहीं कि पहले मैं उन पर शैदा था मगर मैंने कामयाबी की कोई उम्मीद न देखकर दिल पत्थर कर इस आग को बुझाया। अब इसके अलावा कोई

बुझी ही तमन्ना पैदा हो गयी है और वक्त से भी पूरी न हुई तो वकील जानो कि मैं बिन ब्याहा ही रहूँगा। ये कहकर वो वकील की तरफ़ ताकने लगे।

पूर्णा का ख़याल था कि बाबू अमृतराय की शादी प्रभा से हो या न हो वो उसकी मुहब्बत ज़रूर करते हैं। मगर अब उसको मालूम हुआ कि उनकी शादी कहीं और होनेवाली है तो उनकी बातों पर यक़ीन आ गया। मुस्कराकर शर्मीली हुई बोली — ईश्वर आपकी यह मुराद पूरी करे। शहर में कौन ऐसा रईस है जो आपसे नाता करना फ़ख़्र न समझता हो। मगर इस काम में मुझसे कोई ख़िदमत बजा ला सकेगी तो मैं अपने को निहायत खुशकिस्मत समझूँगी। जो काम मेरे काबिल हो वो करना दीजिए, मैं बसरोचश्म बजा लाऊँगी।

अमृतराय — (मुस्कराकर) तुम्हारे बिना तो इस काम का अंजाम पाना ही मुहाल है। बल्कि तुम्हारी कोशिश पर इस तमन्ना का दारो-मदार है।

पूर्णा बड़ी खुश हुई। फूली न समाती कि मैं भी अब उनका कुछ काम कर सकूँगी। उसकी समझ में इस जुमले के माने न आये तुम्हारी ही कोशिश पर इस तमन्ना का दारोमदार है। उसने समझा शायद मेरे नामा-ओ-पयाम का काम सपुर्द होगा। उसने इस जुमले का मतलब छ महीने के अन्दर ही अन्दर बख़ूबी तरह समझ लिया था। बाबू अमृतराय कुछ देर तक यहाँ और बैठे। उनकी नज़रें आज बेअख़्तियार इधर उधर न घूमकर आतीं और पूर्णा के चेहरे पर पड़ जातीं। अब तक वो बैठे रहे पूर्णा को मारे शर्म के सर उठाने की जुर्रत नहीं हुई। अमृतराय उठे और चलते वक्त बोले — पूर्णा मैं ये गजरा आज तुम्हारे वास्ते लाया हूँ। उम्मीद है कि तुम इसको कुबूल करोगी। देखो कैसा खुशनुमा बना है। यह कहकर उन्होंने हाथ से गजरा उसकी तरफ़ बढ़ाया।

पूर्णा मसरूर हो गयी। आज बेतकल्लुफ़ी ज़ाहिर कैसी? एक मिनट तक उसके दिल में ख़्याल हुआ कि लूँ या न लूँ। उन गजरों का ख़्याल आया जो उसने अपने शौहर के लिए होली के दिन बनाये थे। फिर मैंना

की कलियों का ख़याल आ गया। उसने इरादा किया कि मैं न लूँगी। ज़बान ने कहा 'मुझे मुआफ़ रखिये।' मगर हाथ एक बेअख़्तियारी तौर पर बढ़ गया। बाबू साहब ने ख़ुश-ख़ुश गजरा उसके हाथ में पहनाया। उसको ख़ूब नज़र भरकर देखा। बाद अज़ाँ बाहर निकल आये बाइ-सिकिल पर सवार होकर रवाना हो गये। पूर्णा कई मिनट तक मुजस्से तसवीर बनी खड़ी रही। उसको ख़बर न थी कि मेरे हाथ में गजरे कैसे आ गये। मैंने तो इनकार किया था जी चाहा कि फेंक दूँ मगर फिर ख़याल पलट गया। उसने गजरे को हाथ में पहन लिया। हाय उस वक़्त भी उसकी समझ में न आया कि इस जुमले का क्या मतलब है, 'तुम्हारी ही रज़ामन्दी पर इस तमन्ना का दारोमदार है।

उधर प्रेमा महताबी पर टहल रही थी। उसने बाबू साहब को आते देखा था। उनकी अदा उसकी नज़रों में खुब गयी थी। उसने कभी इस बनाव के साथ नहीं देखा था। सबसे ज़्यादा ताज्जुब उसको इस बात का था कि उनके हाथों में गजरा क्यों है। वो उनकी वापसी का इन्तज़ार कर रही थी। उसका जी झुँझलाता था कि वो आज इतनी देर क्यूँ लगा रहे हैं। क्या बातें हो रही हैं। दफ़्अतन बाइसिकिल नज़र आयी। उसने फिर बाबू साहब को देखा। चेहरा खिलखुला था। हाथ पर नज़र पड़ गयी। हैं, ये गजरा क्या हो गया!

मुए पर सौ दुर्रे

पूर्णा ने जोड़ा पहन तो लिया मगर रात भर उसकी आँखों में नींद नहीं आयी। उसकी समझ में यह बात न आती थी कि बाबू कमलाप्रसाद ने उसको जोड़ा क्यों दिया। उसे मालूम होता था कि पंडित वसन्तकुमार उसकी तरफ़ निहायत कहर-आलूद निगाहों से देख रहे हैं। उसने चाहा कि जोड़ा उतार कर फेंक दूँ। मगर नहीं मालूम क्यों उसके हाथ काँपने लगे। सारी रात उसने आँखों में काटी। सुबह हुई अभी सूरज भी न निकला था। पंडाइन व चौबाइन और बाबू कमलाप्रसाद की बूढ़ी महराजिन सब सेठानी जी और कई दूसरी औरतों के पूर्णा के मकान में दाखिल हुईं। उसने बड़े अदब से सबको बिठाया। सबके क़दम छुए। बाद अज़ाँ यह पंचायत होने लगी।

पंडाइन — (जो मुहल्ले की तरफ़ से मुखबिर मुक़र्रर की तरह हो गयी थी।) क्यों दुल्हन पंडित जी को गंगा लाभ हुए कितने दिन बीते?

पूर्णा — (डरते-डरते) तीन महीने से कुछ ज़्यादा होता है।

पंडाइन — और अभी से तुम गैरों के घर आने जाने लगीं। ऐसा माना कि हम तुम सरकार के घर कभी गयी थीं। उनकी कुँवारी कन्या के पास दिन भर बैठी रहीं। भला सोचो तो तुमने अच्छा किया या बुरा किया? क्या बात तुम्हारा और उनका अब क्या साथ? जब वह तुम्हारी सखी थीं तब थीं। अब तो तुम विधवा हो गयीं। तुमको कम से कम साल भर तक घर से पाँव बाहर नहीं निकालना चाहिए था। यह नहीं कि तुम दर्शन को न जाओ स्नान को न जाओ स्नान-पूजा तो तुम्हारा धर्म

है। हाँ किसी सुहागन या किसी कँवारी कन्या के ऊपर तुमको अपना साया नहीं डालना चाहिए।

पंडाइन खामोश हुईं तो मुंशी बदरीप्रसाद की महराजिन फ़रमाने लगीं — क्या बतलाऊँ, बड़ी सरकार और दुल्हन दोनों खून का घूँट पी के रह गयीं। बड़ी सरकार तो ईश्वर जाने बिलख बिलख रो रही थीं कि एक तो बेचारी लड़की के यूँ ही भाग के लाले पड़े हैं दूसरे अब रांड़-बेवा के साथ उठना-बैठना है, नहीं मालूम ईश्वर क्या करनेवाले हैं। छोटी सरकार मारे गुस्से के काँप रही थीं। बारे मैंने उनको समझाया कि माफ़ मुआफ़ कीजिए। अभी वह बेचारी बच्चा है। रीत-व्योहार क्या जाने? सरकार का बेटा जिये जब बहुत समझाया तब जाके मानीं। नहीं तो कहती थीं कि मैं अभी जाकर खड़े-खड़े निकाल देती हूँ। सो बेटा अब तुम सोहागिनों या कन्याओं के साथ बैठने जोग नहीं रहीं। अरे ईश्वर ने तो तुम पर बिपत डाल दी। अब तुम्हारा धर्म यही है कि चुप चाप अपने घर में पड़ी रहो। जो कुछ मयस्सर हो खाओ-पियो और सरकार का बेटा जिये जहाँ तक हो सके धर्म के काम करो।

पूर्णा ने चाहा कि अब भी कुछ जवाब दूँ कि चौबाइन साहबा ने पन्दो-नसायेह का दफ़्तर खोला। ये एक मोटी भदेसल और अधेड़ औरत थीं बात-बात पर आँखें मौचा करती थीं और आवाज भी निहायत करख्त थी — भला इनसे पूछो कि अभी तुम्हारे दूल्हे को उठे तीन महीने भी नहीं बीते और तुमने अभी से आइना कंघी चोटी सब करना शुरू कर दिया। क्या नाम कि तुम अब विधवा हो गयीं। तुमको अब आइना-कंघी से क्या सरोकार है। क्या नाम कि मैंने हजारों औरतों को देखा जो पति के मरने के बाद गहना-पाता नहीं पहनतीं। हँसना-बोलना तक छोड़ देती हैं। न कि आज तो सोहाग उठा और कल सिंगार-पिटार होने लगा। क्या नाम कि मैं लल्लो-पत्तो की बात नहीं जानती। कहूँगी सच चाहे किसी को तीता लगे या मीठा। बाबू अमृतराय का रोज रोज यहाँ आना ठीक नहीं है कि नहीं सेठानी जी?

इस पर सेठानी जी ने हाँक लगायी — (ये एक निहायत फ़रबा-अंदाम

मोटे मोटे मखमली गद्दों से लदी हुई बैठी थीं। गोश्त के लोथड़े हड्डियों से अलग होकर नीचे लटक रहे थे। इसकी भी एक बहू बेवा हो गयी थी जिसकी जिन्दगी इसने अजीरन कर रखी थी। इसकी आदत थी कि बात करते वक्त हाथों को मटकाया करती थी) इस इस की बात जब होती तब कोई कहता भला किसी ने कभी दौड़-अना को गाने पर बिना लिये देखा है। अब सोहाग उठ गया तो टीका कैसा। बेटी भी एक बहू बिधवा है मगर उसको आज तक लाल साड़ी नहीं पहनने देती। नहीं मालूम इन ओछियों का जी कैसा है कि बिधवा हो जाने पर भी सिंगार पर ललचाया करता है। अरे उनको चाहिए कि माला ले हाथ दौड़ हो गये इनको सिखाये सिंगार से क्या लेना है।

महराजिन — सरकार का बेटा जिये तुम बहुत ठीक कहती हो सेठानी जी। कल छोटी सरकार ने तो इनको माँग में टीका लगाये देखा तो छाती धक् रह गयी। सरकार का बेटा जिये दाँतों तले उँगली दबायी। अभी तीन दिन की बिधवा और ये सिंगार करे। जो बेटा जब तुमको धरम पूछकर काम करना चाहिए। तुम अब बच्चा नहीं हो। पूर्णा बेचारी बैठी बिसूर रही थी और वह सब बेहूदा बातें उसकी कै कर रही थी। उसने चाहा कि अब की बार कुछ जवाब-माकूल दे मगर कौन सुनता है। सेठानी जी फिर गरज उठीं और हाथ चमका चमकाकर फरमाने लगीं — और क्या अब पहले की बात होती तो सब कोई कहता। चुप क्यों हो पंडाइन? इसके लिए अब कोई राह-बाट निकाल दो।

पंडाइन — क्या काम कि गाँव की बाँध नहीं। दुल्हन को चाहिए कि सबसे पहले वे कल-कल्ले ऐब रखना छोड़ें और क्या काम कि दूसरों के घर जाना आना ठीक है।

मौलाइन — और बाबू अमृतराय को यहाँ रोज रोज आना क्या जरूर?

महराजिन — सरकार का बेटा जिये मैं भी यह बात कहनेवाली थी। बाबू साहब के आने से बदनामी का डर है। ... और सिंगारन की बातें करने से मनसूरतें यहाँ से दसपाँच के

गयी और महराजिन भी मुंशी बदरीप्रसाद साहब के यहाँ खाना पकाने गयी। इनसे और छोटी सरकार से बहुत बनती थी। वो उन पर बहुत एतबार रखती थीं। महराजिन ने जाते ही उनसे सारी कथा खूब रमो-रौगन नमक-मिर्च लगाकर बयान की और छोटी सरकार ने इस वाक़ये को प्रेमा के जलाने और सुलगाने के लिए मुनासिब समझकर उसके कमरे की तरफ़ रुख किया।

यूँ तो प्रेमा हर रोज़ सारी रात जागा करती थी मगर कभी-कभार घंटे-आध घंटे के लिए नींद आ जाती थी। नींद क्या आ जाती थी एक ग़शी-सी तारी हो जाती थी। मगर जब से उसने बाबू अमृतराय को बदगुमानियों की नज़र में देखा था और पूर्णा के घर से वापस आते वक़्त उसकी कलाई पर उसको गजरा नज़र आया था उस वक़्त से उसके पेट में खलबली पड़ी हुई थी कि कब पूर्णा आये और कब सारा हाल मालूम हो। रात तो बड़ी बेचैनी से उठ-उठ गयी पर मगर बौखली इस वक़्त जो उसने पैरों की चाप सुनी तो समझी कि पूर्णा आ रही है। फ़ौरन इस्तिक़बाल से लपककर दरवाज़े तक आयी मगर ज्यों ही अपनी भावज को देखा ठिठक गयी और बोली—कैसे चलीं भाभी?

दुल्हन साहबा तो चाहती थीं कि छेड़-छाड़ के लिए कोई ज़रिया हाथ आ जाय यह सवाल सुनते ही तुनककर बोली—क्या बतलाऊँ कैसे चली? अब से जब तुम्हारे पास आया करूँगी तो इस सवाल का जवाब सोचकर आया करूँगी। तुम्हारी तरह सबका खून थोड़ा ही सफ़ेद हो गया है कि चाहे घी का घड़ा लुढ़क जाये घर में आग लगी है मगर अपने कमरे से क़दम बाहर न निकाले।

यो छोटा-सा जुमला प्रेमा के मुँह से यूँ ही बिला किसी ख़याल के निकल आया था। उसके जो ये माने लगाये गये तो प्रेमा को निहायत नागवार गुज़रा। बोली—भाभी तुम्हारी तो नाक पर गुस्सा रहता है, ज़रा-सी बात का बतंगड़ बना देती हो। भला मैंने कौन-सी बात बुरा मानने की कही थी।

भावज—कुछ नहीं तुम तो जो कुछ कहती हो गोया मुँह से फूल झाड़ती

हो। तुम्हारी ज़बान में शकर बनी हुई है। दुनिया में कितने हैं उनकी नाक पर गुस्सा रहता है और तुम बड़ी धीमी हो।

प्रेमा — (मुस्काकर) न जाने क्यों तुम्हारा मिजाज बिगड़ा हुआ है। ईश्वर के लिए मुझे फ़िक्र मत करो। मैं तो यूँ ही अपनी जान को रो रही हूँ।

माधव — (मटककर) हाँ तभी मेरा तो मिजाज बिगड़ा हुआ है सर फिरा हुआ है। ज़रा सोची हूँ न मैं भी बातों को चोटी-चूड़ी बिछुड़ी पर लिया करती तुम्हारे जैसा करती अँगूठियों का अदल-बदल करती तो मैं भी होशियार कहलाती। मगर माल न माल है मेरा मेहमान। पुन लाख बिछियाँ किसी काम अलग करो मगर तो मोल की बिछिया हाथ आनेवाली नहीं।

मैं अभी कहीं सुनकर प्रेमा से कुछ न हो सका। बेचारी कमज़ोर दिल की औरत थी और मर्दों से रोने-धोने नहीं सहते कलेजा और थी एक बात था धैर्यविहीन रोने लगी। माधव ने उसको ऐसे देखा तो आँखें डबडबा गयीं। इतने की यूँ सर करते हैं और को। बोली — बिलखती क्या हो क्या करनी को मुनासिब दर्शनिकाला करा दोगी। कुछ मुझ कौन हो कहती हूँ। वही अनुचरता किसके पास भाग बचने-बचने बिछिया किया करती थी अब काम किस रहते उन कहना पूर्णा के पर माना है और कहीं बड़ी रहता है। मुमानी हूँ कब के नहीं ताक सिखाता है। शायद दो-एक कीमती जेवर भी दिये हैं।

प्रेमा इससे ज़्यादा न कह सकी। गिड़गिड़ाकर बोली — माधव मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ सब पर दया करो। मुझे जो चाहो कह लो। (रोकर) नहीं तो मारपीट को। मगर किसी का नाम लेकर और उस पर छोड़ देकर मेरे ग़रीब दिल को मत जलाओ।

प्रेमा ने तो शिकायत का ज़माना से बे बलस्कार कहे मगर छोटी मर बार ही रोकर पर बदबोलना हो गयी। समझकर बोली — रो। तभी जो कुछ मैं कहती हूँ तो उसे रोती हूँ। मेरी तुम्हारे सामने सामने से डिगाई किसकी है न?" तुम्हारे सामने नज़ बोलेंकी तो

तुम सोने के तख़्त पर बिठा दोगी। मगर मैं एक मूर्ख हूँ सारा ज़माना तो नहीं मूर्ख है। आज सारे मुहल्ले में घर-घर यही चर्चा हो रहा है। बहुत तो पढ़ी-लिखी हो भला तुम्हीं सोचो एक तीस बरस के रंडे मरदुए का पूर्णा से क्या काम है। माना कि वो उसकी मदद करते हैं। मगर ये तो दुनिया है। जब एक पर आ पड़ती है तो दूसरा उसके आड़े आता है मगर शरीफ़ आदमी इस तरह दूसरों को बहकाया नहीं करते। और उस छोकरी को क्या बहकायेगा कोई जो तो आप ही सात घाट का पानी पिये है। मैंने जिस दिन उसकी तसवीर देखी थी उसी दिन ताड़ गयी थी कि एक ही विष की गाँठ है। अभी तीन दिन भी दूल्हे को मरे हुए नहीं बीते कि सबको चमकड़ा दिखाने लगी। जोग्या दूल्हा क्या मरा एक बला दूर हुई। कल जब उसके मनहूस क़दम यहाँ आये तो मैं ज़रा बाल गुँथा रही थी नहीं तो ड्योढ़ी के भीतर तो क़दम धरने ही न देती चुड़ैल कहीं की! यहाँ आकर तुम्हारी सहेली बनती है, इसी ने अमृतराय को अपना जोबन दिखा-दिखा के अपना लिया है। कल कैसा लचक-लचककर ठुमक ठुमककर चलती थी। देख-देख जी जलता है, हरजाई कहीं की। ख़बरदार जो अब कभी तुमने उस चुड़ैल को यहाँ बिठाया। मैं उसकी सूरत नहीं देखना चाहती।

बयान वह बला है कि झूठ बात का भी यक़ीन दिला देती है। बहू साहबा ने तो जो कुछ फ़रमाया हर्फ़-बहर्फ़ सही था भला उसका असर क्यों न होता। पहले तो प्रेमा ने उनकी बातों को ग़लत व मुबालग़ाआमेज़ ख़याल किया मगर आख़िर ख़याल ने पलटा खाया। भावज की बातों में रास्ती की झलक पायी। यक़ीन आ गया। ताहम वो ऐसी ओछी नहीं थी कि उसी वक़्त अमृतराय और पूर्णा को कोसने लगती। हाँ वो सीने पर हाथ धरे यहाँ से उठकर चली गयी और छोटी सरकार भी ख़रामा ख़रामा अपने कमरे में तशरीफ़ लायीं। आइने में अपने जमाल को मुलाहिज़ा किया और आप ही आप बोलीं—लोग कहते हैं कि तुमसे ख़ूब सूरत है, अब वो ख़ूबसूरती कहाँ गयी?

प्रेमा को तो पलंग पर गिरकर भावज की बातों को वाक़्यात से मिलाने

दीजिए, हम मकान में चलें। यहाँ कुछ और ही रंग खिला हुआ है। निहायत आरास्ता-ओ-पैरास्ता और बड़ा दीवानख़ाना है। क़ालीन पर मिर्ज़ापुर के साख़्त की ख़ूबसूरत क़ालीन बिछी हुई है। गद्दे और कुर्सियाँ हर वज़ा की करीने से लगी हुई हैं। दीवारें ख़ूबसूरत तस्वीरों से मुज़य्यन हैं। पंखा झला जा रहा है और मुंशी बख़्शी प्रसाद साहब एक कुर्सी पर बैठे हुए चश्मा लगाये एक अख़बार पढ़ रहे हैं। उनके दाएँ-बाएँ की कुर्सियों पर चन्द दीगर अहबाब रौनक़ अफ़रोज़ हैं। उनके सामने की तरफ़ मुंशी गुल्ज़ारीलाल हैं और उनकी बग़ल में बाबू ज्ञानचन्द। दाहिने जानिब बाबू कमलाप्रसाद मुंशी सज्जनलाल से कुछ कानाफूसी कर रहे हैं। बायीं जानिब दो अहबाब और जलवा अफ़रोज़ हैं जिनको हम नहीं पहचानते। कई मिनट तक मुंशी बख़्शी प्रसाद साहब अख़बार पढ़ते रहे। आख़िर उन्होंने सर उठाया और झल्लाहट से बोले — बाबू अमृतराय की हरकतें अब बर्दाश्त से बाहर होती जाती हैं।

गुल्ज़ारीलाल — बेशक जनाब जब उनकी शरारतों और हरकतों से यहाँ की सोसायटी की हालत डाँवाडोल हो रही है। इलाज कि अब हम उनके तर्ज़ को बदलने की फ़िक्र करें।

बाबू कमलाप्रसाद — बेशक आप बहुत दुरुस्त फ़रमाते हैं। हमारा फ़र्ज़ था कि इब्तिदा ही से उनकी फ़िक्र करते ताहम कभी कुछ नहीं बिगड़ा है।

सज्जनलाल — अगर बिगड़ा है तो इब्तिदा है कि स्कूल और कालिज के चन्द दोस्तों ने उनकी तबीयत बिगाड़ दी है और मज़ाक़ बदल दिया है। के चन्द ख़ुशामदख़ोरों ने उनकी ख़ुशामद करने का बीड़ा उठाया है। अगर हम बहुत जल्द उनकी ख़बर न लेंगे तो फिर आगे चलकर बड़ी मुश्किल दरपेश होगी। देखिए, इस अख़बार में पाँच हफ़्ते से बराबर उनके मज़ामीन शाया हो रहे हैं और उनके नये ठहरानेवाले ख़ूब मान पान के बेहूदों में धूम मचाते फिरते हैं। ये मज़मून नहीं है कि बेहूदगी अमल कमअक़्ल हुए होते हैं। क्या ताज्जुब है कि उनकी बातों पर उनके के लिए मुसीबत हो जावें। बाबू अमृतराय से ज़्यादा किसी ज़िम्मे

की हिमायत हो या न हो इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि उनकी वकालत चौगुनी बढ़ रही है। मुवक्किलों को तो वो बस शीशे में उतार लेता है।

मुख़्तारीलाल — सबसे पहले हमारा काम ये होना चाहिए कि उनकी दरख़्वास्त जो कमेटी में पेश की गयी है उसे मंसूख करा दें।

बाबू रामनाथ ने जो इन मुबाहिसों में बराये नाम हिस्सा लिये हुए थे पूछा — कैसी दरख़्वास्त?

मुख़्तारीलाल — क्या आपको मालूम नहीं हज़रत चाहते हैं कि जो दरिया के किनारेवाला सरसब्ज़ क़िता हाथ आ जाय। शायद वहाँ एक ख़ैरातख़ाना तामीर करायेंगे। सुनता हूँ उसमें बेवाएँ रखी जायेंगी और उनकी परवरिश-पोशिश का इन्तज़ाम किया जायगा। मगर ऐसी क़ीमती और फ़ायदे की ज़मीन हरगिज़ इस तरह ज़ाया नहीं की जा सकती।

मुंशी बदरीप्रसाद — नहीं नहीं ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता। बच्चा (कमलाप्रसाद) तुम आज उसी ज़मीन के लिए एक दरख़्वास्त कमेटी में पेश कर दो हम वहाँ ठाकुरद्वारा और धर्मशाला बनवायेंगे।

मुख़्तारीलाल — हमको ये कोशिश करनी चाहिए कि अगर प्रेसीडेंट साहब बाबू अमृतराय की तरफ़दारी करें तो उनके मुवाफ़िक़ फ़ैसला न हो। उन्होंने अंग्रेज़ों से ख़ूब इत्तिहाद पैदा कर रखा है। क्या रायों की तादाद हमारी तरफ़ ज़ियादा न होगी?

कमलाप्रसाद — इसमें कोई शक भी है, यह देखिए मेम्बरों की फ़ेहरिस्त कुल सत्ताईस हज़रात हैं, उनमें सात असहाब नहीं रौनक़ अफ़रोज़ हैं। ग़ालिबन दस-बारह वोट और हासिल कर लेना कुछ मुश्किल न होगा।

सम्मनलाल — हमको इतने ही पर बस नहीं करना चाहिए। हम मज़ामीन का दंदानशिकन जवाब देना भी ज़रूरी है। मैंने मोतबर ख़बर सुनी है कि लाला धनुषधारी साहब फिर तशरीफ़ ला रहे हैं। हमको कोशिश करनी चाहिए कि पब्लिक हाल में तक़रीर करने का मौक़ा उनको न मिले।

यहाँ ये हज़रात बैठे हुए ये चेमीगोइयाँ कर रहे थे कि यकायक एक आदमी ने अन्दर आकर कहा — बाबू अमृतराय तशरीफ़ लाये हैं।

मंगलाचरण

अमृतराय का नाम सुनते ही करीब-करीब कुल हजरात के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। खुसूसन मुंशी गुलजारीलाल और बाबू दाननाथ के चेहरे का रंग फक हो गया। ऐसे मौके पर अगर कोई जगह छुपने की होती तो वो दोनों जरूर छुप जाते। दाननाथ समझे कि इनको केवल बदनाम करेंगे। वो अभी तक दिल से अमृतराय के हमदर्द और [illegible] थे वो अपना मतलब निकालने के लिए मुंशी बदरीप्रसाद से [illegible] बहाना भर कर लिया था।

एक लमहे में बाबू अमृतराय कोट पतलून पहने सोला हैट लगाये मुस्कराते हुए अन्दर दाखिल हुए। उनको देखते ही बजुज मुंशी बदरीप्रसाद साहब के और सब हजरात ताजीमन् उठ खड़े हुए। अमृतराय ने आते ही बिला तअम्मुल [illegible] कहना [illegible] कि मैं आप [illegible] की खिदमत में इसलिए हाजिर हुआ हूँ कि एक कौमी इल्तिजा पेश करूँ। आप लोगों पर रोशन है कि इस शहर में अभी तक कोई ऐसा पनाह का मुकाम नहीं है जहाँ लावारिस औरतों की परवरिश व परदाख्त का इन्तजाम हो सके। ऐसी औरतों को सड़कों पर [illegible] इधर उधर मारे-मारे फिरते देखना [illegible] निहायत [illegible] है। इसमें हमारी तहजीब पर एक निहायत [illegible] धब्बा है। इस कमी को पूरा किया [illegible] कि अगर [illegible] करने का [illegible] नहीं कि अगर मन [illegible] मोहल्ला [illegible] या तो [illegible] यह कोशिश करनी [illegible] है। मगर मैं [illegible] से मैं एक काम ऐसा नहीं है कि मुझ-से हिम्मतीन व [illegible] का [illegible] जानते कि आप हजरात मेरी मदद न फरमावें। इसी गरज से मैं एक [illegible] है। मसौ [illegible] है कि ऐसे मौके पर जरूर आपकी [illegible] अपना [illegible] सिवाय एक बहुत अच्छा एक प्रोग्राम साथ [illegible] है जिससे एक [illegible] के इन्तजाम व इस्तराम के [illegible] तजवीज पेश की जायेगी और उस पर हाजिरीन कौम की उसे [illegible] की जायेगी।

[illegible] बाबू अमृतराय ने [illegible] जेब से कैफियत निकाली

और बिना किसी को आपस में मखरवाहियाँ या सरगोशियाँ करने की मोहलत दिये हुए उसको मुंशी गुलजारीलाल साहब के सामने पेश कर दिया। अब मुंशी जी सख्त अजाब में मुब्तिला हैं। एक हब्बा देने की नीयत नहीं है मगर यह ख़ौफ़ है कि कहीं और हजरात कुछ फ़य्याज़ी दिखायें तो मैं ख़ामख़ाह नक्कू बनूँ। अलावा इसके आप मिस्टर अमृतराय के सच्चे हमदर्दों में थे और उनके इसलाह के मशग़लात से बड़ी दिलचस्पी जताते थे। उन्होंने एक मिनट तक तअम्मुल किया चाहा कि इधर-उधर से कुछ इशारे किनाये पा जायें मगर अमृतराय पहले से होशियार थे वो उनके सामने निगाह रोककर खड़े हो गये और मुस्कराकर बोले — सोचिए नहीं मुझे आपसे बहुत कुछ उम्मीद है।

आख़िर मुंशी गुलजारीलाल ने कोई मफ़र न देखकर झेंपते हुए अपने नाम के मुक़ाबिल पाँच सौ रुपये की रक़म तहरीर फ़रमायी। अमृतराय ने उनका शुक्रिया अदा किया और वो और हजरात कुछ कानाफूसी करने लगे थे मगर इसका कुछ ख़याल न करके उन्होंने फ़ेहरिस्त बाबू दाननाथ के सामने रख दी।

हम पहले कह चुके हैं कि बाबू दाननाथ अमृतराय के मक़ासिद से इत्तफ़ाक़ रखते थे। मगर पहले जब उन्होंने चन्दे की फ़ेहरिस्त देखी तो बड़े पसोपेश में थे कि क्या करूँ अगर कुछ देता हूँ तो शायद मुंशी बदरीप्रसाद बुरा मान जायें। नहीं देता तो अमृतराय के नाराज़ हो जाने का ख़ौफ़ है। इसी हैस-बैस में थे कि बाबू गुलजारीलाल की मुबादिरत ने उनको जुर्रत दिलायी। फ़ौरन अपने नाम के मुक़ाबिल एक हज़ार की रक़म लिखी। अमृतराय को उनसे इतनी उम्मीद न थी। बड़े गर्मजोशी से उनका शुक्रिया अदा किया। अब ये तशवीश हुई कि फ़ेहरिस्त किसके सामने पेश की जाय। अगर मुंशी बदरीप्रसाद की ख़िदमत में पेश करूँ तो शायद वो कुछ न दें और उनका नुक्स दूसरे असहाब को भी मुतास्सिर करेगा। अगर किसी दूसरे साहब को दिखाता हूँ तो शायद मुंशी साहब बुरा मानें कि मेरी तौहीन की। एक लमहा तक वह इसी सोच में रहे मगर बला के हाज़िरजवाब आदमी थे। दिमाग ने फ़ौरन फ़ैसला कर लिया।

उन्होंने कौंसिल की बहस से मुंशी करीमबख्श की खिदमत में पेश करके कहा — यह आपके साथ एहसान की ज़रूरत है। न सिर्फ़ ये कि आप मेरे मददगार हैं बल्कि तजवीज़ है कि ये इमारत आपके नामे नामी से तामीर करायी जाये। मैंने कमिश्नर साहब को बुनियादी पत्थर रखने पर रज़ामन्द कर लिया है।

मुंशी करीमबख्श बहुतेरा आदमी थे मगर उस वक्त उनका हुलिया का गये। ऐसा कि दो मामूली वकीलों ने एक एक हज़ार रुपये दिये हैं और अलावा इसके कमिश्नर साहब भी उनके में तसदीक करेंगे। इमारत मेरे ही नाम से तामीर होगी और उनको तमल्लुक के नाम का इख्तियार भी समझो होगा। यही सोचते-विचारते आपने नामे नामी के बदले दो हज़ार की वापसी इक तहरीर फ़रमायी। फिर क्या था झिलमिल हुए गए. गुल हाईकोर्ट में अपनी अपनी ईबिकाली के मुताबिक बहस की। एक इस मिस्टर से कोई मशहूर मसहूद हज़ार रुपये हाथ आ गये मिस्टर मशगरांव की अपनी बिकली अपनी से कामयाबी की उम्मीद हो चली थी मगर इस हद तक नहीं। सो मारे खुशी के उछले जाते थे। इस पीर मजलिस को कामयाबी ने चेहरा कुन्दन की तरह दमक रहा था। जले की कौंसिल के मैं दाखिल करके बोले — आप साहब ने मेरे ऊपर बड़ा एहसान किया और मेरे ऊपर क्या शहर की बेहद दुनिया बेखबरी पर। मुझे उम्मीद है कि जब आप लोगों ने भारी एहसान फ़रमायी तो इस कमेटी के मेरी दरख्वास्त पेश होगी उस पर भी नज़रे इनायत मबज़ूल फ़रमायेंगे। मजिस्ट्रेट साहब ने अपना मंशा ज़ाहिर किया था। उन्होंने फ़रमाया कि इस वक्त कोई तनदेश हो रही है ऐसी कीमती और आप फ़रमाते की ज़मीन बिला मुआवज़े के नहीं दे सकती। मैंने भी उनसे अर्ज़ की कि इस कमेटी के सबब मेरी दरख्वास्त पेश होगी की कोशिश कमेटी करेगी उसके कबूल करने से मुझे कोई उज्र न होगा। मैं उनकी कीमत अदा करने को तैयार हूँ। मगर मुझे शामिल समझते हैं कि जब आपने मेरी इमदाद ऐसी दरियादिली से की है तो इस ज़मीन को हासिल में भी कोशिश फ़रमायेंगे।

ये कहकर बाबू अमृतराय वहाँ से तशरीफ़ ले गये। मगर अफ़सोस उन्हें क्या मालूम था कि उस पर्दे की आड़ से जो मुंशी बदरीप्रसाद की कुर्सी के पीछे पड़ा हुआ था और जहाँ से जनानखाने पर जाने का रास्ता था कोई बैठा हुआ एक-एक बात को सुन रहा है। बाबू साहब को जाते प्रेमा ने देख लिया था।

आज से कभी मंदिर न आऊँगी

बेचारी सुमन मजमा व कोलाहल और धूम के बढ़ जाने के बाद रोने लगी। वो सोचती थी कि तुम सब से ऐसी मजबूर उसकी आती हूँ कि किसी के साथ बैठ नहीं सकती। अब लोगों की मेरी सूरत से नफरत है। कभी नहीं मालूम क्या-क्या ओछापन भाग्य में बदा है। या नारायण तू ही मुझ दुखिया का बेड़ा पार लगा। मेरी शामत आयी थी कि रामबाबू घर से ऐसा झगड़ा किया। यही बात कभी न होती तो काहे को आज इतना कसीला होता। इन्हीं बातों का ख्याल करते-करते जब वह घूमता बात आ गया कि 'बाबू कमलराव का रोज रोज आना ठीक नहीं' तो उसने सर पर हाथ मारकर कहा—

वो आते हैं तो मैं कैसे मना करूँ। मैं तो उनका दिया खाती हूँ। सिवाय उनके अब मेरी खबर लेनेवाला और कौन है। उनसे कैसे कहूँ कि तुम मत आओ। और फिर उनके आने में हर्ज ही क्या है। बेचारे सीधे सादे शरीफ आदमी हैं। कुछ खोटे नहीं जामाता नहीं फिर उनके आने से क्या हर्ज है। नहीं-नहीं मुझसे मना न किया जायेगा। अब तो मुझ पर मुसीबत आ ही पड़ी है। अब जिसके जी में जो आवे कहे। नहीं मालूम कल मुझे क्या हो गया। क्या मन लग गया था कि प्रभा के यहाँ जाकर भाव नया कीर्तन करवायी। अब मुमकिन भी खबर का रंग न लगेगी। मगर हाय प्यारी प्रभा के ऐसे और ख्याकर रहा जायगा। मैं न जाऊँगी तो वो अपने दिल में क्या समझेगी। समझेगी क्या उनकी माँ ने उनको पहले ही से मना कर दिया होगा।

इन झगड़ों से फ़ुरसत पाकर उसने हस्बे मामूल गंगाजी का क़स्द किया। जब से पण्डितजी का इन्तक़ाल हुआ था वो रोज़ बिला नाग़ा गंगा नहाने जाया करती थी। मगर मुँह अँधेरे जाती और सूरज निकलते निकलते लौट आती। आज इन बिनबुलाये मेहमानों की वजह से देर हो गयी। थोड़ी दूर चली थी कि रास्ते में सेठजी जी की बहू से मुलाक़ात हो गयी। उसका नाम रामकली था। बेचारी दो बरस से रँडापा भोग रही थी। उसका सिन भी मुश्किल से सोलह-सत्रह बरस होगा। चेहरा मोहरा भी बुरा न था। गोरी-लाल निहायत दिलफ़रेब। अगर पूर्णा माह की तरह पाक थी तो उसका चेहरा जोशे जवानी से गुलाबी हो रहा था। बाल में तेल न था। न आँखों में काजल। न माँग में सेंदुर। न दाँतों पर मिस्सी। ताहम उसकी आँखों में जो शोख़ी थी चाल में जो लचक और होंठों पर जो तबस्सुम जिनसे इन बनावटी आराइशों की ज़रूरत बाक़ी न रही थी। वो मटकती इधर-उधर ताकती मुस्कराती चली जा रही थी कि पूर्णा को देखते ही ठिठक गयी और बड़े अन्दाज़ से हँसकर बोली—आओ बहन आओ। तुम ऐसा चलती हो मानूँ बताशे पर पैर धर रही हो।

पूर्णा को ये जुमला नागवार मालूम हुआ। मगर उसने बड़ी नर्मी से जवाब दिया—क्या करूँ बहन, मुझसे तो और तेज़ नहीं चला जाता।

रामकली—सुनती हूँ कल हमारी डायन कई चुड़ैलों के साथ तुमको जलाने गयी थी। मुझे सताने से अभी तक जी नहीं भरा। क्या करूँ बहन! ये सब ऐसा दुख देती हैं कि जी चाहता है ज़हर खा लूँ। और अगर यही हाल रहा तो एक न एक दिन यही होना है। नहीं मालूम ईश्वर का क्या बिगाड़ा था कि एक दिन भी ज़िन्दगी का सुख न भोगने पायी। भला तुम तो अपने पति के साथ दो बरस रही थी। मैंने तो उसका मुँह भी नहीं देखा। जब तमाम औरतों को बनाव सिंगार किये हँसी-ख़ुशी चलते-फिरते देखती हूँ तो छाती पर साँप लोटने लगता है। विधवा क्या हो गयी घर भर की लौंडी बना दी गयी। जो काम कोई न करे वो मैं करूँ उस पर रोज़ उठते जूती बैठते लात। काजल मत लगाओ

मिस्सी मत लगाओ। बाल मत गूँथाओ। रंगीन साड़ियाँ मत पहनो। पान मत खाओ। एक रोज़ एक गुलाबी साड़ी पहन ली थी तो वह बहन मारने उठी थी। जी में तो आया कि कह दूँ, बेटा बाल नोच लें। मगर शहर का मुँह है कि ऐसी बातें और वो तो उनकी बेटियाँ और दुल्हनें मेरी सूरत से नफ़रत रखती हैं। मुझ को कोई मेरा मुँह नहीं देखता। अभी परसों ही मैं एक शादी हुई थी। सब की सब गहने रच-रच कर आयीं बनाती नहीं। एक मैं ही अनाथिन घर में पड़ी रोती रही। भला बहन अब कहाँ तक कोई सब्र करे। आख़िर हम भी तो आदमी हैं। हमारी भी तो चाहना है। दुनिया की खुशी, पहनना-पहनना है वाजिबाइ दिल से हौसले हैं। अब भूख लगती है और खाना नहीं मिलता तो चोरी करना पड़ती है।

यह कहकर रामकली ने पूर्णा का हाथ अपने हाथ में ले लिया और मुस्कराकर आहिस्ता-आहिस्ता एक गीत गुनगुनाने लगी। पूर्णा को ये बेतकल्लुफ़ियाँ बहुत नागवार मालूम होती थीं मगर मजबूर थी। रास्ते में हज़ारों ही आदमी मिले। सबकी नज़रें इन दोनों औरतों की तरफ़ फिरती थीं। किसी कुत्ते फिरे जाते थे। मगर पूर्णा सर को ऊपर उठाती ही न थी। हाँ रामकली अलबत्ता मुस्करा मुस्कराकर मायूसाना अंदाज़ से इधर उधर देखती थी। एक बार बदमाशी अकड़कर भी देखी। पूर्णा जब सड़क पर नहीं को वहाँ देखती तो बचाने फिरकर फिर निकल जाती मगर रामकली को उसके बीच से घुमाकर निकलने की फ़िक्र थी। नहीं मालूम क्यूँ उसकी बातें बार बार ठहर जाती थीं। किसको थी। एक अंदाज़ से बोलती थी। इसी तरह दरिया किनारे पहुँची। यहाँ हज़ारों मर्द और औरतें और बच्चे नहा रहे थे।

रामकली को देखते ही एक पंडित ने कहा — इधर देखनी भी इधर।

पंडा — (मुस्कराकर) यह कौन है?

रामकली — (आँखें मटकाकर) कोई होगी। क्या तुम जानते हो क्या?

पंडा — ज़रा नाम सुन के कान खुश कर लें।

रामकली—ये मेरी सखी हैं। इनका नाम पूर्णा है।

पंडा—(हँसकर) अहा हा क्या अच्छा नाम है। हैं भी तो पूरन चन्द्रमा की तरह। अच्छा जोड़ा है।

पूर्णा बेचारी झेंपी। ये मजाक उसको निहायत नागवार मालूम हुआ। मगर रामकली ने अपने सर की लट एक हाथ से पकड़ और दूसरे हाथ से छिटकाकर कहा—खबरदार, इनसे दिल्लगी मत करना। ये बाबू अमृतराय की पुजारी हैं!

पंडा—तो हो हो खूब घर ताका है। हैं भी तो चन्द्रमा की तरह। बाबू अमृतराय भी बड़े रसिया हैं, कभू-कभू यहाँ चले आते हैं। जो देखो जो नया घाट बन रहा है सो बाबू साहब बनवा रहे हैं। फिर ऐसी मनोहर सूरतों का दर्शन हमको कैसे मिलेगा!

पूर्णा दिल में सख्त पशेमान थी कि काहे को इसके साथ आयी अब तक तो महा-जी के घर पहुँची होती। रामकली ने बोली—बहुत नहाना हो तो नहाओ। मुझको देर होती है। अगर तुम अभी देर में आओ तो मैं अकेली जाऊँ।

पंडा—नहीं-नहीं रानी हम ग़रीबों पर इतनी ख़फ़ा (क्रुद्ध) मत होओ। जाओ सेठानी जी इनको नहला लाओ। सुनता हूँ आज कचहरी बन्द है। बाबू साहब घर पर होंगे।

पूर्णा ने चादर उतारकर धर दी और धोती लेकर नहाने के लिए उतरना चाहती थी कि यकायक सब पंडे उठ-उठकर खड़े होने लगे। और एक लमहे में बाबू अमृतराय एक सादा कुरता पहने खादी टोपी सर पर रखे चश्मा लगाये हाथ में पैमाइश का फीता लिये चन्द ठेकेदारों के साथ इधर आते दिखायी दिये। उनको देखते ही पूर्णा ने एक लम्बी घूँघट निकाल ली। उसने चाहा कि नीचे के जीने पर उतर जाऊँ। मगर मनों-हया ने उसके पैरों को वहीं बाँध लिया। बाबू साहब को इन जीनों की चौड़ाई-लम्बाई नापनी थी। चुनांचे वह पूर्णा से दो क़दम के फ़ासले पर खड़े होकर नपवाने लगे और काग़ज़ पेंसिल पर कुछ लिखने लगे। लिखते-लिखते आगे को क़दम जो बढ़ाया तो पैर जीने के नीचे जा पड़ा

और करीब था कि वो औंधे मुँह गिरें और उसी वक्त एक कीमती ज़िन्दगी का खात्मा हो जाय कि पूर्णा ने झपटकर उनको सम्हाल लिया। बाबू साहब ने चौंककर देखा तो दाहिना हाथ एक नाज़नीन के हाथ में है। जब तक पूर्णा अपना घूँघट बढ़ाये वो उसको पहचान गये और बोले —अच्छा, तुम हो पूर्णा। तुमने मेरी जान बचा ली।

पूर्णा ने उसका कुछ जवाब न दिया बल्कि सर नीचा किये हुए धीमे से उतर गयी। जब तक बाबू साहब ईमारत करवाते रहे वो क्या की तरफ़ रुख किये खड़ी रही। जब वो चले गये तो रामकली मुस्कराती हुई आयी और बोली—बहन आज तो तुमने बाबू साहब को गिरते गिरते बचा लिया। आज से तो वो और भी तुम्हारे पैरों पर सर रक्खेंगे।

पूर्णा—(कड़ी निगाहों से देखकर) रामकली ऐसी बातें न करो। मुझे ऐसी दिल्लगी भली नहीं मालूम होती। आदमी आदमी के काम आता है। अगर मैंने उनको बचा लिया तो इसमें क्या अनोखी बात हो गयी।

रामकली—ऐ लो, तुम तो जामे से बाहर हो गयीं। बस इसी ज़रा-सी बात पर।

पूर्णा—नहीं मैं गुस्से में नहीं हूँ। मगर ऐसी बातें मुझको अच्छी नहीं लगतीं। मैं नहाकर चलोगी भी या आज सारा दिन यहीं बिताओगी?

रामकली—अब तक इधर-उधर की बहके अच्छा है। घर पर सिवाय कलपने के और क्या रक्खा है।

कुछ देर में दोनों सखियाँ वहाँ से रवाना हुईं तो रामकली ने कहा—क्यूँ बहन पूजा करने न चलोगी?

पूर्णा—नहीं बहन बहुत देर हो जायगी और न मैं कभी मंदिरों में पूजा करने गयी हूँ।

रामकली—आज तुमको चलना पड़ेगा ज़रा देखो तो कैसी बहार की जगह है। अगर दो-चार दिन जाओ तो फिर बिना गये तबीयत न माने। वहाँ दो-तीन घंटे की स्नान-पूजा में रहता है, मेरी गुरू का है। बाकी दिन रात सिवाय मरनी मुझसे न और कोई काम नहीं।

दुर्गा—तुम जाओ। मैं न जाऊँगी। जी नहीं चाहता।

रामकली—चलो-चलो नखरे न बघारो। हम भी दम में तो लौटे आते हैं।

रास्ते में एक तमोली की दुकान पड़ी। काठ के जीनेनुमा तख्तों पर लाल कपड़े पानी से भिगोकर बिछाए हुए थे। उस पर बँगला देसी व मगही पान बड़ी सफ़ाई से चुने हुए थे। सामने दो बड़े-बड़े चौखटेदार आइने लगे हुए थे और एक छोटी-सी चौकी पर खुशबूदार की शीशियाँ और मसालों की डिबियाँ खूबी से सजाकर धरी हुई थीं। तमोली एक मनचला जवान था। सर पर दुपल्ली टोपी चुनकर रख रखी थी बदन में आधे रंगों का चुन्नट पड़ा हुआ कुर्ता था। गले में सोने की ताबीजें आँखों में सुर्मा पेशानी पर मुश्क टीका होंठ पर पान की लाली नमूदार। इन दोनों औरतों को देखते ही बोला—सेठानी जी सेठानी जी आओ पान खाती जाओ।

रामकली ने झट सर से चादर खिसका दी और फिर उसको एक अन्दाज से ओढ़कर और दिलरुबायाना अन्दाज से हँसकर कहा—अभी ठाकुरजी का परशाद नहीं पाया है।

तमोली—आओ यह भी तो परशाद से कम नहीं है। सन्तों के हाथ की चीज परशाद से बढ़कर होती है। आजकल तो कई दिन से तुम्हारे दर्शन ही नहीं हुए, ये तुम्हारे साथ कौन सखी है।

रामकली—(मटककर) ये हमारी सखी हैं, देखन लायक ये हैं। क्या कुछ जी ललचा रहा है!

तमोली—ये तो हमारी तरफ़ ताकती ही नहीं। हाँ भाई, बड़े घर की हैं। हम जैसे तो कदमों से सर रगड़ते फिरें।

ये कहकर तमोली ने बीड़े बनाये और एक पत्ते में लपेटकर रामकली की तरफ़ तकल्लुफ़ से हाथ बढ़ाया। जब उसने लेने के लिए अपना हाथ फैलाया तो तमोली ने अपना हाथ खींच लिया और हँसकर बोला—तुम्हारी सखी लें तो दें।

रामकली—लो भली पान खाओ।

पूर्णा—मैं न जाऊँगी।

रामकली—तुम्हारे कौन-सी लाज बैठी है जो जाओगी। मेरी तो लाज मना करती है, तब पर भी हर रोज चल जाती हूँ।

पूर्णा—तुम्हारा साथ होगी। मैं पार नहीं जाती।

रामकली—आज मेरी खातिर से चलो। तुम्हें हमारे सर की कसम है।

लाचार पूर्णा ने खिड़कियों की ओर चलती हुई चलीं। जब उस पुष्प वाटिका का रास्ता मालूम होने लगा था। उसने रामकली से कहा—किधर है तुम्हारा मंदिर। यहाँ तक चलते-चलते तो थकान आ गई।

रामकली—बिलकुल पास आ गये हैं, हमें भी। पर घर पर क्या धरा है।

पूर्णा जाने की हो गयी। उनकी बातें बहुत अच्छी हैं कि फिर किसने कर कमाल का गया। तुम भी कहीं भी मान लिया करो तो दुष्टों की बात पर बन आती। बड़ी मोटी हो गयी है। मैं चले ही गी। मैं नहीं मैं आ रही थी। कर देर में काला बकव्ह हो गया। यहीं वनमाली ने कहा थी कि एकाएक रामकली ने कहा—वो वह का ना मंदिर।

पूर्णा ने सोचकर वाहिने आंगिन देखा तो एक विशाल आलीशान मंदिर दिखाई है। मनाया नहीं कनौन से बहुत ऊँचा है और बहाँ तक जाने के लिए सब चारों ओर बने हुए हैं। रामकली पूर्णा को उस कमाल में ले गयी। अन्दर जाकर क्या देखती है कि एक कुशल बनी सहन है, जिसमें कैसी भी और कौशल बना है। चाहिर कारिन एक बारादरी है, जो समाज उड़ना में बालाका नौ-पोशाका मदद कर बसन करती है। इस बारादरी में एक सिंहासन चलौह भी-सकेल खदन पर देवता की सिर्व पड़ी मान पर खूबसूरत दुपट्टी रब की मदद वाले मखमल पर तकिया लगाये बैठा है। देवता लगा हुआ है। उसके सब गाड़िय बैठे हुए किला रहे हैं और एक महाराज गानवोत्र देवराज पहले बसय बाती बैरा वाला बलबंद है। बैठी वाला खुफ उबार बैठे हैं और बैठी नारे है। पूर्णा ने अमराव को वह कैलिवर देखी तो बोकार बोली—बहू, ये तो मालूम मालूम होता है। कहीं भूल तो नहीं गयीं।

रामकली — (मुस्कराकर) चुप ऐसा भी कोई कहता है? यही देवी का मन्दिर है। वो महंत जी बैठे हैं। देखती हो कैसा सजीला मकान है। आज सोमवार है। हर सोमवार को यहाँ कंचनियों का नाच होता है।

इसी असना में एक बलन्द क़ामत शख़्स आता दिखायी दिया। काई छः फ़ीट का क़द था और निहायत लहीम-ओ-शहीम। बालों में कंघी की हुई थी, मुँह पान से भरे, माथे पर भभूत रमाये, गले में बड़े-बड़े दानों का रुद्राक्ष माला पहने, शानों पर एक रेशमी दोपट्टा रक्खे, बड़ी-बड़ी और सुर्ख़ आँखों से इधर उधर ताकता उन दोनों औरतों के क़रीब आकर खड़ा हो गया। रामकली ने उसकी तरफ़ एक अंदाज़ से देखकर कहा — क्यों बाबा इन्द्रदत्त, कुछ परशाद-वरशाद नहीं बनाया?

बाबा इन्द्रदत्त ने फ़रमाया — तुम्हारे वास्ते सब हाज़िर है। पहले चलकर नाच देखो, ये कंचनी कश्मीर से बुलायी गयी है। महंत जी बहुत रीझे हैं। एक हज़ार रुपया इनाम दे चुके हैं।

रामकली ने यह सुनते ही पूर्णा का हाथ पकड़ा और बारादरी की तरफ़ चली। बिचारी पूर्णा जाना न चाहती थी मगर वहाँ सबके सामने इन्कार करते भी न बन पड़ता था। जाकर एक किनारे खड़ी हो गयी। बेशुमार औरतें जमा थीं। एक से एक हसीन, गहने व गोटनी की तरह लदी हुई थीं। बेशुमार मर्द थे। एक से एक खुशरू, आला दर्जे की पोशाकें पहने हुए, सब के सब एक ही जगह मिले जुले खड़े थे। आपस में नज़रबाज़ियाँ हो रही थीं। नज़रबाज़ियाँ ही नहीं बल्कि दस्तदराज़ियाँ भी होती जाती थीं। मुस्करा-मुस्कराकर राज़ो-नियाज़ की बातें की जा रही थीं। औरतें मर्दों से, मर्द औरतों से। ये बेतकल्लुफ़ मिलन-मिलाप पूर्णा को कुछ ताज्जुबखेज़ मालूम हुआ। उसकी हिम्मत अन्दर घुसने की न पड़ी। एक कोने में बाहर ही ठिठक गयी। मगर रामकली अन्दर घुस गयी और वहाँ कोई आध घण्टे तक उसने खूब गुलछर्रे उड़ाये। जब वो निकली है तो पसीने में ग़र्क़ थी। तमाम कपड़े मसक गये थे।

पूर्णा ने उसे देखते ही कहा — क्यूँ बहन, पूजा से फ़ारिग़ हो गयी? अब भी घर चलोगी या नहीं।

रामकली—(हँसकर) अरे तुम बाहर ही नहीं थी क्या? इस मन्दिर बनकर देखो क्या बहार है। ईश्वर वाले कभी खाली क्या है किस मनोरथ देखी है। अब भाव उसको बाती है। हजारों रूपये के आदमी।

पूर्णा—दर्शन भी किया या माला ही पुजती रही?

रामकली—दर्शन करने आती है बेटी, बहन। यहाँ तो अगर दिल बहलाने से काम है। तुम्हारे लाल न होती तो कहीं बैठी ये सब बाती। बाबा हजरत राय ने ऐसा करीब सत्कार किया है कि क्या बताऊँ।

पूर्णा—क्या है? बलात्कृत है?

रामकली—(हँसकर) बलात्कृत का नाम है—भंग।

पूर्णा—ऐ है तुमने सब पी थी?

रामकली—यही तो सत्कार है देवी जी का। इसके पीने से क्या हुई है? सभी पीते हैं, देवी जी को चढ़ाव भी चढ़ती है। कहो तुमको पिलाऊँ?

पूर्णा—नहीं बहन, मुझे मुआफ रखो।

इसके बाद नहीं गाने लगी कि दस-बारह आदमी बाहर से आकर उन दोनों औरतों के दर्द गिर्द हो गये।

एक—(पूर्णा की तरफ देखकर) अरे बाबा! ये तो कोई नया सुग्गा है।

दूसरा—जरा बचकर बलो, कैसे हैं पावे को आहिस्ता से धक्का दिया तो दिल से किसी ने सूना मैं मुस्करा है। जिधर देखती है आदमी ही आदमी दिखाई नहीं बताते हैं। कोई बात से कहकहा लगता है कोई ऊपर से आवाज नजर आते हैं। रामकली हँस रही है। मवाली का करकना असर देती है। बनना है। रामकली हँसकर कभी कुर्ती को सम्हालती है। कभी बाहर की खिड़की है। उनसे पूछा—तैसली की वह कौन है?

एक आदमी ने—ये हमारी मती है। जरा रोके रखना किया आती थी।

रामकली—नहीं बहन, माया करो भी तो क्या रुप है।

दूसरा—सुर-सुरा करके उन आदमियों से निपटा लिया। पूर्णा ने बाहे झूठा मानी। रामकली भी उसके साथ हुई। घर पर आकर पूर्णा ने बहुत दिया कि अब कभी मन्दिर न जाऊँगी।

आठवाँ बाब

देखो तो दिलफ़रेबिये अंदाज़े नक़्शे पा
मौजे ख़िराम यार भी क्या गुल कतर गयी

बेचारी पूर्णा ने कान पकड़े कि अब मन्दिर कभी न जाऊँगी। ऐसे मन्दिरों पर इन्दर का वज्र भी नहीं गिरता। उस दिन से वो सारे दिन घर ही पर बैठी रहती। वक्त काटना पहाड़ हो जाता। न किसी के यहाँ आना न जाना। न किसी से रस्म-राह न कोई काम न धंधा। दिन कटे तो क्यूँकर? पढ़े तो जरूर, मगर पढ़े क्या? दो चार किस्से-कहानियों की किताबें पंडित जी के ज़माने की पढ़ी हुई थीं मगर उनमें अब जी नहीं लगता था। बाज़ार जानेवाला कोई न था जिससे किताबें मँगवाती। खुद पढ़े हुए उसकी यह दशा होती थी। बिल्लो इस काम की न थी। और सौदा-सुलुफ़ तो वो बाज़ार से लाती मगर ग़रीब किताबों का मोल क्या जाने? दो-एक बार जी में आया कि कोई किताब प्रेमा के घर से मँगवाऊँ मगर फिर कुछ समझकर ख़ामोश हो रही। फूल-बूटे बनाने उसको आते ही न थे। सीना जानती थी मगर सिये क्या? ये रोज़ की बेचारगी उसको बहुत खलती थी और हरदम उसको मुतफ़क्किर-ओ मग़मूम रखती थी। जिसमानी का वक्त ख़ामोशी के साथ बहुत बुरा कटता था। हाँ कभी पंडाइन व चौबाइन वग़ैरा अपने बेटे-बापों के आकर कुछ निसाबन की बातें सुनाती जाती थीं। अब उसको पूर्णा से कोई शिकायत बाक़ी न रह गयी थी बजुज़ इसके कि बाबू अमृतराय क्यूँ आया करते हैं। पूर्णा ने भी खुल्लम-खुल्ला कह दिया था कि मैं उनको आने से रोक नहीं सकती। और न कोई ऐसा बर्ताव कर सकती हूँ जिससे उनको मालूम हो कि मेरा आना उनको नागवार मालूम होता है। सच तो यह

है कि पूर्णा को अब इन मुलाकातों में मज़ा आने लगा था। उसे अब किसी हमदर्द की सख्त ज़रूरत न रही। किसी से हँसकर बोलने को जी तरस जाता। एक अब सुमित्रा जाता तो कुछ दी से अपनापन है और मकान की तकलीफें होने लगीं। किसी बड़ी दुविधा से बात मकान बाबू करती दरवाज़े के मकान का सोचे में आशंका की बातें। उसे अब का जमा हुआ नहीं गुज़ार हुए किया जाता। पूर्णा कुछ भी मालूम के बाहर और बात करने पहली। हाँ वह ऐसे कभी-कभी करते हुए भी करती थी। अब बाबू अमृतराय का आते तो नहीं मालूम बाबू पूर्णा का मकान कुछ कुसुम की तरह समझने लगा। उनकी प्यारी सूरत और जिसका आदर में मालूम होने लगी। अब तक बाबू साहब बैठे रहते भी बुला कोशिश के बाद कि क्या बात कहीं जिनके वे कहीं से सुख पूछ जाती। तो उनकी यहीं कि बैठी बोलती। बाबू साहब ऐसे हँसमुख थे कि वैसे ही नहीं आखिर के हँसती बाहर हँसा बैठे। वहाँ जो कुछ के दिल में जो मतलब का कोई एक बार बाहर न करते जिसमें पूर्णा के बस करता तो पूर्णा नहीं मालूम कुछ ऐसी बात न करते जिसमें पूर्णा के मन की बात जाते और पूर्णा के आखिर के देता थी। अब उनके चले का बस आता। बाबू साहब कभी-कभी वहीं बैठ जाते। अब कितनी कसाल हो जाती। बाबू साहब इतनी तरह आते और पूर्णा कुछ कुछ देर और बैठे। इसी तरह कभी-कभी बातें करते और बैठे हुए होती उनकी न बातें बढ़ने का वक्त का समय। बाबू साहब बढ़ते जाते कैसी-सी बातें हुई हो तक उधर बीतती हुई थी। कौन-सी बातें हुई होती उनकी देर तक रहकर उधर से लौटती। वे कहते उनको एक विलक्षण तरह का मालूम होता। फिर से लौटती। वे बात उनको एक विलक्षण दुख सा मालूम होता। इसी तरह कई महीने गुज़र गये और कांग्रेस की बात बाबू अमृ-रात के दिन में भी वो करीब-करीब पूरी हो गयी। बाकी पूर्णा को भी मालूम होने लगा कि वे दिन में उनकी मुहब्बत समझती जाती है। अब बिचारी पूर्णा पहले से भी ज़्यादा उदास रहने लगी। सुख जो दिखे नाना प्रयत्न करा एक बार महसूस करते हैं डरते भी नहीं सदा जो दुःखे मनो कुछ्ला लोक को। सो बहुत कोशिश करती कि अमृतराय का ख़्याल दिल से न आने पावे मगर कुछ बस न चलता।

अपने दिल की हालत के अन्दाज करने का उसको यूँ मौका मिला कि एक रोज बाबू अमृतराय अपने मुअम्मना पर नहीं आये। थोड़ी देर तक तो सब्र किये उनकी राह देखती रही मगर जब वो अब भी न आये तब उसका दिल कुछ मसोसने लगा। बड़ी बेसब्री से दौड़ती हुई दरवाजे पर आयी और कामिल आध घण्टे तक आँख लगाये खड़ी रही। दम्म पर कुछ वही कैफ़ियत तारी होने लगी जो पंडित जी के दौरे पर जाने के वक़्त हुआ करती। सुबहा हुआ कि कहीं दुश्मनों की तबीयत नासाज़ तो नहीं हो गयी। आँखों में आँसू भर आये। महरी से कहा — बिल्लो जरा जाकर देखो तो बाबू साहब की तबीयत कैसी है? नहीं मालूम क्यूँ मेरा दिल बैठा जाता है। बिल्लो को भी बाबू साहब के बर्ताव ने गिरवीदा बना लिया था और पूर्णा को तो वो अपनी लड़की समझती थी। उसको मालूम होता जाता था कि पूर्णा उनसे मुहब्बत करने लगी है। मगर उसकी समझ में नहीं आता था कि इस मुहब्बत का नतीजा क्या होगा। यही सोचते-विचारते वो बाबू साहब के दौलतखाने पर पहुँची। मालूम हुआ कि वो आज दो-तीन खिदमतगारों को साथ लेकर बाजार गये हुए हैं। अभी तक नहीं आये। पुराना बूढ़ा कहार जो बावजूद बाबू साहब के मुतवातिर तकाजों के आगे टाँग की धोती बाँधता था बोला — बेटा बड़ा खराब जमाना आता है। हजार का सौदा होय तो दुइ हजार का लेखा होय तो हम ही लिखावत रहेन। आज कुछ आप गये हैं। भला इतने बड़े आदमी का यह चाहत रहा। बाकी फिर अब अंग्रेजी जमाना आता है। अंगरेजी पढ़-पढ़ के कौन न हुइ जाय तौन अचरज नहीं है।

बिल्लो यहाँ से कुछ-कुछ बूढ़े कहार के सिर हिलाने पर हँसती हुई घर को वापस हुई। इधर जब से वो आयी थी पूर्णा की अजब कैफ़ियत हो रही थी। किसी पहलू चैन ही न आता था। उसे मालूम होता था कि बिल्लो को आपसी में भी देर हो रही है। इसी असना में बूटों की आवाज सुनायी दी। वो दौड़कर दरवाजे पर आयी और बाबू साहब को टहलते हुए पाया तो गोया उसको नेमत मिल गयी झटपट अन्दर से दरवाजा खोल दिया, कुर्सी करीने से रख दी और अन्दरूनी दरवाजे पर खड़

गीता करके बनी हो गयी। बाबू साहब स्मारा पहने हुए थे। एक कुर्सी पर स्मारा रखा और बोले — किसी नहीं क्या है क्या?

पूर्णा — (कमाते हुए) को हाँ आप ही के तो बनी है।

मधुसूदन — मेरे नहीं कब नहीं? मुझे कोई बनना भी?

पूर्णा — आपके आने के पहले देर हुई तो मैंने कमला शायद दूसरी की उनीयत कुछ नाराज हो गयी हो उसको देखा कि आकर देख जा।

मधुसूदन — (प्यार की निगाहों से देखकर) मुझे तब अफ़सोस हुआ कि मैंने देर करके तुमको तकलीफ उठाना पड़ी। फिर जब एक बजा न होगी। मैं उस बाज़ार चला गया था।

ये कहकर उन्होंने एक बार और से मुस्कराकर — सुकाई, अन्दर जायें। और एक लम्हें में दो-तीन कपड़ों कमरे में दाखिल हुए। एक के हाथ में सूरजमुखी नौकैर का बण्डल था और दूसरे के हाथ में वह किसी हुए कमरे थे। जब सामान तख्त पर रख दिया गया। बाबू साहब ने हक भाषा — पूर्णा मुझे उम्मीद है कि तुम ये सब चीजें कबूल करोगी। यह रोजाना वक्तियाल की चीजें हैं। (हँसकर) वे घर में आने का मुलीला है।

पूर्णा उन चीजों में न थी जो किसी चीज को लेना तो चाहते हैं मगर [illegible] की [illegible] के लिहाज से दो-चार बार नहीं करना कहें समझती हैं। वो उसने [illegible] कहा — बाबू साहब मैं आपका इस एहसान के लिए शुक्रिया अदा करती हूँ। मगर मेरे पास तो जो कुछ आपकी मुहब्बतों के [illegible] है वही बदलने के काबिल है। मैं इन्हीं चीजें लेकर क्या करूँगी।

मधुसूदन — जो तुम्हारा जी चाहे सो करो। तुमसे कबूल कर लिया और मेरी मेहनत ठिकाने लगी।

यही कमला में किसी पहुँची। कमरे में बाबू साहब को देखते ही ठिठक ही गयी। जब तख्त पर निगाह पहुँची और उन चीजों को देखा तो बोली — क्या इसके लिए आप बाजार गये थे? क्या नौकर चाकर नहीं थे? मुझा पहले से पता था कि मैंने लमूटी आती गयी।

अमृतराय—(हँसकर बड़ी प्यार से) जो सब कहार मेरे नौकर हैं। मेरे लिए बाज़ार से चीज़ें लाते हैं। तुम्हारी सरकार का मैं नौकर हूँ।

बिल्लो यह सुनकर मुस्कराती हुई बाहर चली गयी तो पूर्णा ने कहा—आप क्या फ़रमाते हैं, मैं तो खुद आपकी लौंडियों की लौंडी हूँ।

इसके बाद चन्द और बातें हुईं। माघ-पूस का ज़माना था। सर्दी सख्त पड़ रही थी। बाबू अमृतराय ज़्यादा देर तक बैठ न सके। आठ बजते-बजते दौलतख़ाने की तरफ़ रवाना हुए। उनके जाते ही पूर्णा ने फ़र्ते इश्तियाक़ से कोठे का सन्दूक़ खोला तो दंग रह गयी। उसमें ज़नाना सिंगार की तमाम चीज़ें मौजूद थी और जो चीज़ थी लाजवाब थी—खुशनुमा आइना कंघी खुशबूदार तेलों की शीशियाँ मुवाफ़िक़ हाथों के कंगन और गले का हार जड़ाऊ, नगीनेदार चूड़ियाँ एक निहायत नफ़ीस पानदान रूहपरवर इतरियात से भरी हुई एक छोटी-सी सन्दूक़ची लिखने-पढ़ने का सामान चन्द क़िस्सा-कहानी की किताबें अलावा इनके चन्द और तफ़्रीहात की चीज़ें क़रीने से सजाकर भरी हुई थीं। कपड़े खोले तो अच्छी से अच्छी साड़ियाँ नज़र आयीं। शर्बती गुलनारी धानी गुलाबी उन पर रेशमी गुलबूटे बने हुए चादरें, खुशनुमा बारीक, खुशरंग—बिल्लो इनको देख हँस जाने में फूली न समाती थी—बहू ये सब चीज़ जब तुम पहनोगी तो रानी हो जाओगी रानी।

पूर्णा—(गिरी हुई आवाज़ से) कुछ पगला गयी हो क्या बिल्लो मैं ये चीज़ें पहनूँगी तो जीती बचूँगी! चौबाइन व सेठाइन ताने दे-देकर मार डालेंगी।

बिल्लो—ताने क्या देंगी कोई दिल्लगी है उनके बाप का इसमें क्या इजारा। कोई उनसे कुछ माँगने जाता है।

पूर्णा ने बिल्लो को हैरत और इस्तेजाब की निगाहों से देखा। यही बिल्लो है जो अभी दो घण्टे पहले चौबाइन और पंडाइन की हमख्याल थी मुझको पहनने ओढ़ने से बार-बार मना किया करती थी। यकायक यह क्या कायापलट हो गयी बोली—मगर ज़माने के नेको-बद का भी तो ख्याल होता है।

पूर्णा ने जब कोई जवाब न देखा तो उठी और कमरे से बाहर सुमित्रा और कुंदन निकली [illegible] की सुहागी [illegible] वाली एक हाथ में मिठाइयाँ लिये दरवाजे पर आकर खड़ी हो गयी। अमृतराय ने मुस-कुराकर देखा। और पूछिया नहीं। एक क्षण तक तो महफ़िल का आलम छाया रहा। [illegible] मुस्कराकर बोले — क्यों न हूँ?

पूर्णा — (लजाती हुई) मिठाई तो आपका अच्छा है?

अमृतराय — (मिठाई खिलाते हुए) [illegible] तक अच्छा था। मगर अब तबियत नहीं भरी।

पूर्णा समझ गयी। अमृतराय के हमेशा मजाक का मजा कैसे तो कुछ इत्मिनान हो गयी है। बोली — अपने लिये का क्या सवाल?

अमृतराय — क्या बात से किसी को खाना की सुरती है।

पूर्णा ने दाँतों से मुँह फेर लिया। बाबू अमृतराय हँसने लगे और पूर्णा को लजाकर [illegible] देखा। उसकी हाजिरजवाबी उनको बहुत भायी। कुछ देर तक और इधर [illegible] बातों का मजा लेते रहे। पूर्णा को भी सवाल न था कि [illegible] से [illegible] का मौका था न पाती थी। [illegible] लिए कोई नहीं है। उसको [illegible] में उसने मुस्कराकर अमृतराय ने पूछा — किसी का डर। बाहरी [illegible] कुछ जवाब मिली है?

अमृतराय — नहीं पूर्णा मुझे [illegible] उनकी कुछ खबर नहीं थी। [illegible] जानता हूँ कि बाबू [illegible] से [illegible] की [illegible] हो गयी है।

पूर्णा — मगर अफ़सोस है कि उनकी किस्मत में [illegible] लिखी [illegible] नहीं लिखा है। मगर उनका जोर है तो [illegible] हो [illegible]। हाँ [illegible] भी तो कहीं [illegible] हो रही थी। [illegible] की कौन [illegible] है। जो दिन जब [illegible] कि मैं [illegible] में [illegible] में मिलती।

अमृतराय — (मुस्कराते रहते थे) [illegible] किस्मत [illegible] करती है। मैं अपनी कोशिश में तो कुछ उठा नहीं रखता।

पूर्णा — तो क्या उनका ही में लिखा है, ताज्जुब है।

अमृतराय — नहीं पूर्णा मैं बड़ा बदक़िस्मत हूँ अभी तक कोई कोशिश कारगर नहीं हुई। मगर सब कुछ तुम्हारे ही हाथों में है। अगर तुम चाहो तो मेरे सर कामयाबी का सेहरा बहुत जल्द बँध सकता है। मैंने पहले कहा था और अब भी कहता हूँ कि तुम्हारी ही रज़ामन्दी पर मेरी कामयाबी का दारोमदार है।

पूर्णा हैरत से अमृतराय की तरफ़ देखने लगी। उसने अब की बार भी उनका मतलब साफ़-साफ़ न समझा। बोली — मेरी तरफ़ से आप ख़ातिर जमा रखिये। मुझसे जहाँ तक हो सकेगा उठा न रखूँगी।

अमृतराय — इस अहसान को याद रखना पूर्णा, ऐसा न हो कि भूल जाओ। नहीं तो मुझ बेचारे के सब अरमान ख़ाक में मिल जायेंगे

ये कहकर बाबू अमृतराय उठे और चलते वक़्त पूर्णा की तरफ़ देखा। बेचारी पूर्णा की आँखें डबडबायी हुई थीं गोया इल्तिजा कर रही थीं कि ज़रा देर और बैठिये मगर अमृतराय का कोई ज़रूरी काम था। उन्होंने उसका हाथ आहिस्ता से ले लिया और डरते-डरते उसको चूमकर बोले — प्यारी पूर्णा, अपनी बातों को याद रखना।

ये कहा और दम के दम में ग़ायब हो गये। पूर्णा खड़ी रोती रह गयी और एक दम में ऐसा मालूम हुआ कि कोई दिलख़ुशकुन ख़्वाब था जो आँख खुलते ही ग़ायब हो गया।

है। मगर वह मुझसे न होगा। मेरे दिल में मुहब्बत जरूर है। मुझे मालूम तक ऐसी मुहब्बत किसी और को नहीं मालूम हुई। मगर मुझसे मुहब्बत की आखिर ख़ाला क्या पाय न समझा जाएगा। मेरी खुशी तो इसमें है कि उनको नज़र भर के देखा करूँ और उनकी सेहत की दुआ करती रहा करूँ। मगर हाय रब उन के आखिरी मुझसे मन के हैं। कहीं मेरे इनकार से उनके दुश्मनों का काम भी आसान हुआ तो मैं बेमौत मर जाऊँगी। या ईश्वर मैं क्या करूँ। मेरी तो कुछ अक्ल काम नहीं करती।

बिल्लो पूर्णा के चेहरे का उतार चढ़ाव बड़े गौर से देख रही थी। जब वो कब की चुप हुई तो उससे पूछा — बहू क्या किया है?

पूर्णा — (चौंककर आवाज़ से) क्या बताऊँ क्या किया है।

बिल्लो — बहू तबियत तो है, कोई बुरी दुखानी तो नहीं है?

पूर्णा — हाँ बिल्लो इसके सिवाय बुरी दुखानी हो ही नहीं सकती। कमलाप्रसाद कहते हैं कि मुझसे

उससे और कुछ न कहा गया। बिल्लो समझ गयी मगर वहीं तक पहुँची जहाँ तक उसकी अक्ल ले गयी थी। वो कमलाप्रसाद की बदली हुई मुहब्बत को देख कर दिल में समझ रही थी कि वो एक न एक दिन पूर्णा को अपने पर बस कर लेंगे। पूर्णा उनसे मुहब्बत करती है। उस पर जान देती है। वो पहले बहुत पछताया करती। मगर आखिर मान जायेगी। उसने बेवाओं को देखा था कि बाहरी खुशियों को पर इश्क लिया करते हैं। लेकिन इस हालत में भी ऐसा होगा। इसमें उनकी कोई बात बतलानी नहीं मालूम होती थी। क्योंकि उसको यकीन था कि बाबू साहब पूर्णा से सच्ची मुहब्बत करते हैं। मगर बेचारे बिलकुल इसके और पर ही क्या सकते हैं कि उनकी पर में हाल हैं। मुझी मन उसने पूर्णा को दूं बातें करते देखा तो ताड़ गयी कि कामयाब का मौका है। वो जानती थी कि अगर पूर्णा राजी हुई तो उसकी खातिर बिल्लो को आराम से रहेगी। बाबू साहब भी निहाल हो जायेंगे और मैं कहीं भी उनकी बदौलत आराम करेगी। मगर यहाँ उसने इनकार किया तो दोनों

की ज़िन्दगी तल्ख़ हो जायगी। यह बातें सोचकर उसने पूर्णा से पूछा — तुम क्या जवाब दोगी?

पूर्णा — जवाब इसका जवाब सिवाय इनकार के और हो ही क्या सकता है। भला विधवाओं की शादी कहीं हुई है और जो भी बदकिस्मती की छपी थे। मैंने इस किस्म के किस्से उन किताबों में पढ़े थे जो बाबू अमृतराय मुझे दे गये हैं। मगर वो किस्से हैं, तुमने कभी ऐसा होते भी देखा है।

बिल्लो समझी थी कि बाबू अमृतराय उसको घर डालने की कोशिश में हैं। शादी का तज़किरा सुना तो हैरत में आ गयी। बोली — भला ऐसा कहीं भया है। बाल सफेद हो गये मगर ऐसा ब्याह नहीं देखा।

पूर्णा — बिल्लो, ये शादी-ब्याह सब कहानेवाली हैं। उनका मतलब मैं समझ गयी। मुझसे ऐसा न होगा। मैं ज़हर खा लूँगी।

बिल्लो — बहू ऐसी बातें ज़बान से मत निकालो। वो बेचारे भी तो अपने दिल से लाचार हैं, क्या करें?

पूर्णा — हाँ बिल्लो उनको नहीं मालूम क्यूँ मुझसे मुहब्बत हो गयी है। और मेरे दिल का हाल तो तुमसे छिपा नहीं मगर जब वो मेरी जान माँगते तो मैं अभी दे देती। ईश्वर जानता है, मैं उनके वास्ते हज़ारों बार अपने को निछावर कर सकती हूँ। मगर वो जो चाहते हैं वो मुझसे नहीं होने का। उसका ख़याल करते ही मेरा कलेजा काँपने लगता है।

बिल्लो — हाँ भलेमानुसों में तो ऐसा नहीं होता। कमीनों में होता जाता है। मगर बहू सच तो यह है, अगर तुम इनकार करोगी तो उनका दिल टूट जायगा। मुझे तो डर है कि कहीं वो जान पर न खेल जावें। और ये तो मैं कह सकती हूँ कि उनसे बिछड़ने के बाद तुमसे एक दम बेरोये न रहा जायगा। चाहे तुमको बुरा लगे या भला।

पूर्णा — यह सब तो तुम सच कहती हो पर आख़िर मैं क्या करूँ। वो मुझसे झूठ-सच शादी कर लेंगे। शादी क्या करेंगे शादी का नाम करेंगे। मगर ज़माना क्या कहेगा। लोग अभी से बदनाम कर रहे हैं तब तो नहीं मालूम क्या हो जायेगा। इससे बेहतर यही है कि जान दे दूँ। न रहे

आँखें लाल थीं। उन्होंने उसकी तरफ देखा। चेहरे से हसरत बरस रही थी। दोनों निगाहें मिलीं। अमृतराय बेअख्तियाराना जोश से उसकी तरफ बढ़े और उसका हाथ लेकर कहा — पूर्णा, ईश्वर के लिए मुझ पर रहम करो।

उनके मुँह से कुछ और न निकला। आवाज हलक में फँसकर रह गयी। पूर्णा की कुव्वतें आज तक कभी ऐसे इम्तहान में न पड़ी थीं। उसने टेके टेके अपना सर अमृतराय के कंधे पर रख दिया। कुछ कहना चाहा मगर आवाज न निकली। दुख मुसर्रत का जोश हद गया और वह तमाम ओस की बूँद हुआ था उबल पड़ा। अमृतराय समझ के कि नक्शामाल है। समझ गये कि अब मेरा मौका है। उन्होंने आँखों के इशारे से किश्ती से कंगन मँगवाया। पूर्णा को आहिस्ता से कुर्सी पर बिठा दिया। फिर जरा भी न झिझकी। उनके हाथों में कंगन पहनाया। पूर्णा ने जरा भी हाथ न खींचा। तब अमृतराय ने मुस्करा करके उसके हाथों को चूम लिया और उसकी आँखें मारे खुशी के जगमगाने लगीं। दोनों हुए पूर्णा के मुख कमली खिड़की से उसकी तरफ देखा और बोली — प्यारे अमृतराय तुम मक्कार आदमी हो।

शादी हो गयी

तजर्बे की बात है कि बजा औक़ात बेबुनियाद ख़बरें दूर-दूर तक मशहूर हो जाया करती हैं, तो भला जिस बात की कोई असलियत हो उसको ज़बानज़दे हर ख़ासोआम होने से कौन रोक सकता है। चारों तरफ़ मशहूर हो रहा था कि बाबू अमृतराय इस बरहमनी के घर आया-जाया करते हैं। सारे शहर के लोग हुल्लड़ उठाने को तैयार रहते कि दोनों में नाजायज़ ताल्लुक़ है। कुछ अर्से से पंडिताइन व पंडाइन ने भी पूर्णा के चौके-सिंगार पर हाशिया चढ़ाना छोड़ दिया था। चूँकि वो अब उनकी दानिस्त में उन उसूल की पाबन्द न थी जिनका हर एक बेवा को पाबन्द होना चाहिए। जो लोग तालीमयाफ़्ता थे और हिन्दुस्तान के दीगर सूबेजात की भी कुछ ख़बर रखते थे वो इन क़िस्सों को सुन-सुनकर ख़याल करते थे कि शायद इसका नतीजा नक़ली शादी होगी। हज़ारों आवारा बदमाश ताक में थे कि अगर वह हसब रात को पूर्णा के मकान की तरफ़ जाने लगें तो ज़िन्दा वापस न आयें। अगर कोई अभी तक अमृतराय की नीयत की सफ़ाई पर एतबार करता था तो वो प्रेमा थी। वो बेचारी बेक़रार लड़की ग़म पर ग़म और दुख पर दुख सहती थी। मगर अमृतराय की मुहब्बत उस पर ग़ालिब थी। उसकी आस अभी तक बँधी हुई थी। उसके दिल में कोई बैठा हुआ कहता था कि तुम्हारी शादी ज़रूर अमृतराय से होगी। इसी उम्मीद पर वो जीती थी। और जितनी ख़बरें अमृतराय की निस्बत मशहूर होती थीं उन पर वो कुछ यूँ ही-सा यक़ीन लाती थी। हाँ अक्सर उसको यह ख़याल पैदा होता था कि वो पूर्णा के

घर बार बार क्यों आते हैं?' और शायद देखते देखते अपनी शायक और सारे घर की बातें उनसे पूछते वह अमरनाथ को बगल-की-बगल में दबाते रहते हैं। मगर अभी तक उनकी मुहब्बत उनके दिल में बदस्तूर मौजूद थी। वो उन लोगों में थे जो एक बार दिल का सौदा चुका देते हैं तो फिर अफ़सोस नहीं करते।

बाबू अमरनाथ मुश्किल से बैठने पर पहुँचे होंगे कि उनकी शादी की खबर एक कान से दूसरे कान पहुँचने लगी। और शाम होते होते सारे शहर में यही खबर गूँज रही थी। जो शख्स पहले सुनता तो एतबार न करता और जब उसको इस खबर की तसदीक का यकीन हो जाता तो अमरनाथ को अफसोसनाक सुनाता। एक तो किसी तरह नहीं। सुबह होते ही मुंशी नरोत्तमदास साहब के दौलतखाने पर शहर के पुरुष व रईस उमड़ा व पड़ता सब यहाँ हमदर्द कचहरियों और मौलवियों के जमा हुए और तसदीक होते अभी कि ये सभी सुनकर टाल जाते। पहिला मुहूर्त — जिसका विवाह करीब है। कोई इससे आशनाय कर के। नई सादगी के शिकार होंगे कराती — हो उधर आसमानें हो।

जब इधर उधर से मैंने पीके शिकायतें सुनीं के पोर्शियों हमारे घर पहले आँखें खोले पर तो मुँह से तम्बाकू की गंध एक ना जमा हो बड़े और ज़माने में ससुराल होते कभी कि उधर आस्मानें हो। यह लोग पूछ जाते और उसके उत्तर कर दें बलाय लिया जाये। अगर ज़माने में आवारगी की एक लकीर भी निकले तो फिर क्या हमारे हाथ है। बहुत से कद्रदान जैसे की हमीं ज़माने में शरीक होकर आस्मानें खिलाफ रहे है। नरोत्तमदास साहब अंग्रेजी हाकिमों के। अब उन बात पियों को शर्तनामें पर भरसक लेना तो फैसला किसने आस्मानें बिना जायगा। मान लो वह शर्तनामें न करें तब,' सेठ पूरनमल — बिना शर्तनामें दिये ब्याह कर लेंगे?' (ज्योति मुस्कराकर) — वाचे में रफ़ू कर दूँगा।

ठाकुर जोरावर सिंह (मूँछों पर ताव देकर) — कोई उठ्ठा है ब्याह करना। सर काट लूँगा। खून की नदियाँ बह जायेंगी।

राय साहब — बारात की बारात काट डाली जायगी।

उस वक्त सैकड़ों आवारा शोहदे वहाँ आ डटे और आग में ईंधन लगाना शुरू किया।

एक — बक्कर से बक्कर सर काट डालूँगा।

दूसरा — घर में आग लगा देंगे बारात की बारात जल-भुन जायगी।

तीसरा — पहले उस औरत का गला घोंट देंगे।

इधर तो ये हरबोंग मचा हुआ था खास निशस्तगाह में वुकला बैठे हुए शादी के नाजायज होने पर क़ानूनी बहस कर रहे थे। बड़ी गर्मी से वकील जिल्दों की वरक़-गिरदानी हो रही थी। सालहा साल की पुरानी नज़ीरें पढ़ी जा रही थीं ताकि कोई क़ानूनी गिरिफ़्त हाथ आ जाये। कई घण्टे तक यही बहस-मुबाहसा रहा। आखिर खूब सर खपाने के बाद यह राय हुई कि पहले ठाकुर जोरावर सिंह अमृतराय को धमका दें। अगर वो इस पर भी न मानें तो जिस दिन बारात निकले सरे बाजार मारपीट हो और ये रेजोल्यूशन पास करने के बाद जलसा बर्खास्त हुआ। बाबू अमृतराय शादी की तैयारियों में मसरूफ़ थे कि ठाकुर जोरावर सिंह का रुक्का पहुँचा। लिखा था —

अमृतराय को ठाकुर जोरावर सिंह का सलाम-बन्दगी बहुत-बहुत तरह से पहुँचे। आगे हमने सुना है कि आप किसी बिधवा बरहमनी से ब्याह करनेवाले हैं। हम आपसे कहे देते हैं कि भूलकर भी ऐसा न कीजिएगा वर्ना आप जानें और आपका काम।

जोरावर सिंह अलावा एक मुतमव्विल और बाअसर आदमी होने के शहर के लठैतों और शोहदों का सरदार था और बारहा बड़े-बड़ों को नीचा दिखा चुका था। उसकी धमकी ऐसी न थी जिसका अमृतराय पर कुछ असर न होता। इस रुक्के को पढ़ते ही उनके चेहरे का रंग उड़ गया। सोचने लगे कि उसको किसी हिकमत से फेर दूँ कि एक दूसरा रुक्का फिर पहुँचा जो गुमनाम था और मज़मून भी पहले ही रुक्के

से मिलता-जुलता था। उसके बाद बाप हुये हुये हमारे ही मुख्तार हुये जाते। कोई खुद्दा था मगर फिर व्याह का काम किया तो घर में काम क्या ही? कोई नए कस्बे को चलना है, कोई पेट में सेवा माँगने के लिए ठेकार बैठा था और कोई मुँह के बल बताने के लिए वकीलों वगैरे कर रहा था। मनुष्य से ही जाते थे कि साहबजादे मुख्तारिश्ता करते, मगर रब फिरब को मुख्तारिश्ता का उनको बहुते-मुनाम भी न था। इस वकीलों से उनकी मुंशी ने बाद में कौड़ियाना कर दिया था और अपने से जिनका अरसेया उनको मुंशी के बाते थे ना कि कहीं काबिल उस वेचारी को कोई सर्वोवर न पहुँचा है। मुंशी को वह वक्त अपने पहन वकालिकिस पर बराबर ही बयरह मजिस्ट्रेट की सिफारश से हाकिम हुए और उसके हमारी कस्बा बयान किया। मजिस्ट्रेट ने बढ़िया इसलिए कि भयान सूख था। न इसलिए कि वो मुखत्यारी के बड़िया उनके साथ बने को रोशनलाल और साहबी के। उन्होंने मजिस्ट्रेट साहब और उनी बहन मुख-बहलाल हो के जाते। उन्हें इसकदर किया कि साथ बाबू मनुष्यत्व की मुख रिश्तेदार पुलिस को नहतार किया कि एक बारह खाना कर है और जानती कि सिपाह के लिए पुलिस का एक बार वहीं रहे ताकि मानकर और मुख बजत्ता पानी न हो जाते। नाम हुंडे-हुंडे तोल मुकदमा सिफारिशों की एक न हो जाते। उनकी बदल के लिए का बड़ी किसी से सौ समझूत और समझ उनकी बदल के लिए सूर्यों के समझ का सिफारश के लिए रवाना कर दिया।

साहबजादों ने जब मनुष्यत्व की वेबकफियों देखी तो मिहरबत कर बदकेनसिबा हुए और मुंशी बहादिरसाब के साथ नई मनुष्यों के मजिस्ट्रेट की सिफारिश से हाकिर हैदर करिमाद मनावी कि अगर सरकार दोस्त बहार में इस पानी के रोको का कोई बन्दोबस्त न किया तो कस्बा ही अपने का बैठिया है। मगर मजिस्ट्रेट ने साफ-साफ कह दिया कि सरकार को किसी साल के केस में दस्तन्दाजी करना मंजूर नहीं है, ताकि कि समाज की उस केस में कोई नुकसान न पहुँचे। यह देखा था कि

पाकर मुंशी जी बहुत महजूज हुए। वहाँ से खुश-खुश मकान पर आये और अपने मुशीरों के साथ बैठकर कतई फ़ैसला किया कि जिस वक्त बारात चले उसी वक्त पचास आदमी टूट पड़ें। पुलिसवालों की भी खबर लें और अमृतराय की हड्डी-पसली भी तोड़ कर बर दें।

बाबू अमृतराय के लिए वाकई यह नाजुक वक्त था मगर वह क़ौम का दिलदादा बड़े इस्तिक़लाल व जाँफ़िशानी से तैयारियों में मसरूफ़ था। शादी की तारीख़ आज से एक हफ़्ते पर मुक़र्रर की गयी चूँकि ज़ियादा ताख़ीर करना ख़तरे से ख़ाली न था और यह हफ़्ता बाबू साहब ने ऐसी परेशानी में काटा जिसका सिर्फ़ क़यास किया जा सकता है। बल्लमबाज़ दो कानिस्टेबिलों के साथ पिस्तौलों की जोड़ी लगाये रोज़ एक बार पूर्ना के मकान पर आते। पूर्ना बेचारी मारे डर के मरी जाती थी। वो अपने को बार-बार कोसती कि मैंने क्यूँ उनको उम्मीद दिलाकर बहुमत मोल ली। अगर जालिमों ने कहीं उनके दुश्मनों को कोई गज़न्द पहुँचाया तो उसका कफ़्फ़ारा मेरी ही गर्दन पर होगा। गो उसकी मुहाफ़िज़त के लिए कानिस्टेबिल मामूर थे मगर वो रात भर जागा करती। पत्ता भी खड़कता तो वह चौंककर उठ बैठती। जब बाबू साहब सुबह को आकर उसको तसकीन देते तब ज़रा उसके जान में जान आती।

अमृतराय ने खुतूत इधर-उधर रवाना कर ही दिये थे शादी की तारीख़ से चार दिन पहले से मेहमान आना शुरू हुए। कोई बम्बई से आता था कोई मद्रास कोई पंजाब कोई बंगाल से। बनारस में रिफ़ार्म के इतिहास का इत्तिफ़ाक़ था और सारे हिन्दोस्तान के रिफ़ार्मरों के जी से लगी हुई थी कि चाहे जो हो बनारस में रिफ़ार्म की रोशनी फैलाने का ऐसा नादिर मौक़ा हाथ से न देना चाहिए। वो इतनी दूर की मंज़िलें तय करके इसीलिए आये थे कि शादी को धूमधाम के साथ अंजाम तक पहुँचायें। वो जानते थे कि अगर इस शहर में ये शादी हो गयी तो फिर इस सूबे के दूसरे शहरों के रिफ़ार्मरों के लिए बड़ी आसानी हो जायगी। अमृतराय मेहमानों की आवभगत में मसरूफ़ थे और उनके पुरजोश पैरो जिनकी तादाद कालिज के दस-बारह तुलबा पर महदूद

थी। शहर-मुहल्ले भीड़ पहुँचे स्टेशन पर आकर मेहमानों की तकरीम करते और उनके ठहराने-बैठाने में बड़ी दरबदरी दिखाते थे। चारों के दिन तक यहाँ कोई ऐसे ही मुल्क मुस्तैद हो गये। अगर कोई ख़ास हिन्दोस्तान की रौनक़ी हुजूम रहता न जोके शोर को बढ़ता देखना चाहता तो इस वक़्त बाबू अमृतराय के मकान पर देख सकता था। बनारस के पुराने ख़यालात वाले अमृतराय इन तैयारियों और मेहमानों की कसरत को देख देखकर दिल में हैरान होते थे। मुंशी बदरीप्रसाद साहब और उनके ख़ानदान वालियों में कई बार मसवरे हुए और हर बार यही फ़ैसला हुआ कि चाहे जो हो मगर शरीक ज़रूर की जाय। मुनासिब यह था शामिल जलसे असरदार था।

शादी के कुछ ज़माना क़बल अमृतराय अपनी पुरलुत्फ़ बैठक में बैठकर पूर्णा के मकान पर पहुँचे और वहाँ उसको नाज़नियों की शामिल न होने को कहने के लिए मजबूर किया। तब वहाँ पूर्णा के पास गये। जो उसको देखते ही बावली सी हो गयी।

अमृतराय — (हँस के मुस्कराकर) प्यारी पूर्णा, क्यों क्या। ईश्वर चाहेगा तो हुस्न हमारे साथ भी रोका न कर सकेंगे। हम कोई गुनाह नहीं कर रहे हैं। हम भी नाहक तुम्हारे दरवाज़े पर मौजूद वैसी बारात आज तक शहर में किसी के दरवाज़े पर न आयी होगी।

पूर्णा — मगर मैं क्या करूँ। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि दस बजट साहब होंगी। ये बातें ठहरा रह सुन रही हैं। रम कुछ भी पूरी बदमिजाज के यहाँ कौन जाता है।

अमृतराय — प्यारी तुम इन बातों का ज़रा भी अंदेशा न करो। मुंशी जी के यहाँ तो ऐसे मसवरे महीनों से हो रहे हैं और होता हुआ करेंगे। उनका क्या शौक़ है। तुम दिल को मज़बूत रखो। बस यह रम और बदनामियाँ हैं। बस प्यारी पूर्णा मेरे कहने पर होगी। इस को मेरे लिए कैसा सुखी का दिन होगा।

पूर्णा यह सुनकर चाहे अपने सोच को भूल गयी। उसने अमृतराय को प्यार की निगाहों से देखा और तब बाबू साहब चले गये तो उसके

गले से लिपट गयी और बोली — प्यारे अमृतराय तुमको मेरी क़सम इन ज़ालिमों से बचते रहना। बदमाशों की सुन-सुन के मेरी रूह फ़ना हुई जाती है।

अमृतराय ने उसे सीने से लगा लिया और तसल्ली व दिलासा देकर अपने मकान को रवाना हुए। शाम के वक्त पूर्णा के मकान पर कई पंडित जिनकी सूरत से शराफ़त बरस रही थी रेशमी मिर्ज़ईयाँ पहने गले में फूलों का हार डाले आये और वेद की रीति से रसूमात अदा करने लगे। पूर्णा दुलहिन की तरह सजायी गयी। भीतर-बाहर गैस की रोशनी से मुनव्वर हो रहा था। कांस्टेबिल दरवाज़े पर टहल रहे थे। जो नये कूल और नयी रोशनी के पुतले जिनको अमृतराय यहाँ पर तैनात कर गये थे तैयारियों में मसरूफ़ थे। दरवाज़े का सेहन साफ़ किया जा रहा था। फ़र्श बिछाया जा रहा था। कुर्सियाँ लग रही थीं। सारी रात इन्हीं तैयारियों में कटी और अलस्सबाह बारात अमृतराय के घर से रवाना हुई।

माशेअल्ला क्या मुहज्जब बारात थी और कैसे मुहज्जब बाराती न बाजों का धड़-धड़ पड़-पड़ न बिगुलों की पों-पों पों-पीं न पालकियों का झुरमुट, न सजे हुए घोड़ों की चिल्लपों न मस्त हाथियों का रेल-पेल न ज़र्रीपोश असाबरदारों की कतार, न गुल न गुलदस्ता। बल्कि सफ़ेदपोशों की एक जमात थी जो आहिस्ता-आहिस्ता चहलक़दमी करती अपनी संजीदा रफ़्तार से अपनी मुस्तक़िलमिज़ाजी का सुबूत देती हुई चली आ रही थी। हाँ ईज़ाद यह थी कि दोरूया चली पुलिस के आदमी वर्दियाँ डाटे सोटे लिये खड़े थे। सड़क के इधर-उधर जा-बजा मुँह के कुछ आदमी लाठियाँ लिये जमा नज़र आते थे और बारात की तरफ़ देख-देखकर दाँत पीसते।

मगर पुलिस का वो रोब था कि किसी को क़दम हिलाने की जुर-अत न पड़ती। बारातियों के पचास क़दम के फ़ासले पर रिज़र्व पुलिस के सवार हथियारों से लैस घोड़ों पर रानपटरी जमाये भाले चमकाते और घोड़ों को उछालते चले जाते थे। ताहम हर लमहा ये अन्देशा था

कि कहीं पुलिस के कोप का वे शिकार हुए न जाएं। वारदातियों के बारे में भी काफ़ी इत्मीनान नहीं ज़ाहिर होता था और बाबू अमृतराय को इस बात निहायत खूबसूरत बना को बेचारगी बढ़ते हुए वे बौड़-बौड़ कर इधर-उधर देखते थे। कहते भी बदस्तूर होती तो उनके हाल नहीं होते। एक मर्तबा आखिरी के बावजूद कायम कर लिया। क़ायल वकालत समाप्त हो गया मगर सिफ़ारिशी पुलिस के ज़िम्मे साबित किया और इस के दम में बस लोगों की जो मुझे हम की लगी। फिर किसी को अपनी मुस्किलदस्तगी को अपनी सूरत में कमी का पूरा न हुआ। बाद हुआ पूरा करके कोई भाग नहीं में वायदा पूरी के मकान पर पहुंची। वहां पहुंचे ही वायदी मजबूर थे और मजबूर का सामान किया गया था। शहर में कब लगा हुआ था। कुंजियों रखने के बाद हुई थी। एक तरफ रूप पजामी सहबस्ता एक कर तोके हुए इतना रखते हैं मसनद के और कर के घर सिर पर पतिव बैठे हुए थे के लोग बड़ी सम्मानपूर्वक से था रहे थे। कुल की गुस्ताखू में मारे मुहब्बत मुबारक हो रहा था। बात सिपाही के आने ही सब की बेजानी पर बजाय और आकाश भय गया उनके मनों में खूबसूरत हार पहनाये गये। बाद फ़ौरन दूल्हा सब तरफ जनाब के मकान के अन्दर गया और वहां बंद टोपी के साथी का रस्म बन्द किया गया। न कोई हुआ न काम न माली बहार। बेचारी पूजा को मुहब्बतवाला कोई न था सिर्फ किसी मदरसा का काम भी करती था और वकील का भी। बस्स्तर तो नानी ही रही थी मोहर इधर भारती सांठियों और कोई लिये घूम गया रहे हैं। पुलिसवाले उनको रोके हुए मकान के लिए एक हल्का लगे रहते थे। तमाम बारात दम न घुट थे। इसी अवसर में पुलिस का इंतजाम भी आ पहुंचा। उसने आते ही हुक्म दिया कि भीड़ हटा दी जाए और दम के दम में पुलिसवालों ने मोटी में मार मारकर उन गृहस्थों बेचारियों को ढकेला शुरू किया जो पुलिस के रास्ते के लिए बहुतों की दो चार बातें लगा मैं गए थे। अब क्या था कोलाहल मचकर भग गयी। मगर इसी घड़ी कम अफ़सर औरतकर सिर छोड़ी विलोल करके खबर पड़ा। उनकी मुंह गयी थी। काली

से अंगारे उड़ रहे थे। उसको देखते ही जो बेक़ायदा जमाअत थी तितर बितर हो रही थी फिर जमा होने लगी जिस तरह सरदार को देखकर भागती हुई फ़ौज दम पकड़ ले। एक लमहे में कोई हज़ारहा आदमी इकट्ठा हो गये और रिसालदार ठाकुर ने ज्यूँ ही एक नारा मारा जय दुर्गा-जी की त्यूँ ही सारी जमात के दिलों में गोया कोई ताज़ा रूह आ गयी। जोश भड़क उठा। ख़ून में हरकत पैदा हुई और सब के सब दरिया की तरह उमड़ते हुए आगे को बढ़े। मिलिटरी पुलिसवाले भी संगीनें ताने हुए क़तार के क़तार हमले के मुन्तज़िर खड़े थे। चौतरफ़ा एक ख़ौफ़नाक सन्नाटा छाया हुआ था। खटका लगा हुआ था कि अब कोई दम में ख़ून की नदी बहा चाहती है। पुलिस कप्तान बड़ी पामर्दी से अपने आदमियों को उभार रहा था कि एकाएक पिस्तौल की आवाज़ आयी और कप्तान की टोपी ज़मीन पर गिर पड़ी मगर ज़ख़्म नहीं लगा। कप्तान ने देख लिया था कि ये पिस्तौल ज़ोरावर सिंह ने सर किया है। उसने भी झट अपनी बन्दूक सम्भाली और बन्दूक का छाती तक आना था कि ठाकुर ज़ोरावर सिंह चारों ख़ाने चित ज़मीन पर आ रहा। उसका गिरना था कि रिसालदार सिपाहियों ने धावा किया और ये जमात बदहवास होकर भागी। जिसके जहाँ सींग समाये चल निकला। कोई आध घण्टे में चिड़िया का पूत भी न दिखायी दिया।

बाहर तो यह तूफ़ान मचा था अन्दर दुल्हा और दुल्हन मारे डर के सूखे जाते थे। पूर्णा थर-थर काँप रही थी। उसको बार-बार रोना आता था कि ये मुझ अभागिनी के लिए इतना ख़ून-ख़च्चर हो रहा है। अमृतराय के ख़यालात कुछ और ही थे। वो सोचते थे कि काश मैं पूर्णा के साथ किसी तरह सहीसलामत मकान तक पहुँच जाता तो दुश्मनों के हौसले पस्त हो जाते। पुलिस है तो काफ़ी। अरे ये बन्दूकें चलने लगीं! लीजिए, बेचारा ज़ोरावर सिंह मारा गया। आध घण्टे के ही अन्दर, जो अमृतराय को कई बरसों के बराबर मालूम होता था मियाँ-बीबी हमेशा के लिए एक-दूसरे से मिला दिये गये और तब यहाँ से बारात की चला-चली की ठहरी।

संकलारण

पूर्वा एक क्षितिज में बिजली गयी और फिर तरह बादल वाली की तरह तरह सामना हुई। मन को मुक्तिबोध की तरह उठाने की कुछ न हुई। बाबली इधर उधर बढ़कर गया है और अद्भुतलाल दिखाई में इस अभाव को देखते थे। इधर उधर से पत्थर भी बजाते आ रहे थे तालियाँ बजानी जा रही थी मुँह बिचकाना आ रहा था। मगर उन सब रहों में ऐसे मुक्तिबोधकार रिश्तेदारों को वंशीलाल में क्या बकता का पकड़ा था। हाँ बल्कि क्षितिज में बैठी हुई पूर्वा रो रही थी। लाजिमन इसलिए कि बुझा बुझा के घर आते बहुत बहकर रोया करती है। बारे सुनार-सुनार करके सराफ किनारे पहुँची। बुजुर्गवार को बुझाना जाती नहीं। वर्तमानिकी की आस में आप जाती। अनुभूवता को बुलाने न क्या पूछना। वो कौन दौड़ सबके हाथ सिखाती फिरते थे। कोई किसी जाती थी। ज्योंही पूर्वा उस पहले हुए कहते में देख अफ़सोस हुई जो कुछ भी बुझाने की तरह छुपा हुआ था समझदार न कायर कहते कहा— चलो को क़ बर्दाश्त पहुँच गयी। ई, तुम ही रो रही हो वह कहते हुए उनके से इसके आँसू पोंछे और उसको गले से लगाया। उनकी तमीजन गुड़ पूर्वा को कुछ बोली की तुम्हीं महसूस हुई। उनकी तमीजन गुड़ न गुड़ मसूद गयी। उसने अमनराय का हाथ पकड़ लिया और बोली— अब यहीं मेरे पास बैठिए, आपको बाहर न जाने दूँगी। कोई मार्जरी न कैसा अमन मनाया।

इस भयानक दृश्य के बाद वातावरण में बसने की तैयारियाँ होने लगीं। मगर सबने इसरार किया कि अब्बा अनुष्ठानिकता सबको अपनी तकरीर से एक बार कुछ-कुछ करें। दूसरे दिन अमनराय में बैठके के मकानवाले शहर में एक शामियाना लगवाया और कई धूमधाम का जलसा हुआ। वो जमींदार तशरीफ़ हुई कि मैकश भाग दिनों के झुक गए गये। एक सजी की कामयाबी से हिम्मत बढ़ाती थी जगने और हुए और हुनों कामयाबी के साथ। नाच महफ़िल हुआ पहला था। पुलिस का बरताव दस्तावेज़ पड़ा। वहाँ कोई भी कम हिस्सा के हिन्दू कटिबद्ध लिये हुए थे आज उन ठनठोरे की ओर से सुनते थे और उसने

खुद गो उन बातों पर अमल करने के लिए तैयार न हों मगर इतना जरूर कहते थे कि यार, यह सब बातें तो ठीक कहते हैं। इन जलसों के बाद दो बेवाओं की और शादियाँ हुईं। दोनों दुल्हे अमृतराय के पुरजोश पैरवों में से थे और दुल्हनों में से एक पूर्णा के साथ गंगा नहानेवाली रामकली थी। चौथे दिन तमाम हजरात रुखसत हुए। पूर्णा बहुत भली कातती फिरी। मगर दाइम आरज़ियों से मिजाजपुर्सी करना पड़ी और बाबा धनुषधारी ने तो तीन दिन सात-सात घण्टे तक उसको अखलाकी तलकीन की।

शादी के चौथे दिन बाद पूर्णा बैठी हुई थी कि एक औरत ने आकर उसको एक सर-ब-मोहर लिफ़ाफ़ा दिया। पढ़ा तो प्रेमा का खत था। उसने उसको मुबारकबाद दी थी और बाबू अमृतराय की वह तसवीर, जो बरसों से उसके गले का हार थी पूर्णा के लिए भेज दी थी। उस खत की आखिरी सतरें ये थीं —

सखी तुम बड़ी भाग्यवान हो। ईश्वर सदा तुम्हारा सुहाग क़ायम रक्खे। मेरी हजारों उम्मीदें इस तसवीर से वाबस्ता थीं। तुम जानती हो कि मैंने उनको जान से ज़ियादा अज़ीज़ रखा मगर अब मैं इस क़ाबिल नहीं कि इसको अपने सीने पर रक्खूँ। अब ये तुमको मुबारक हो। प्यारी मुझे भूलना मत। अपने प्यारे पति का मेरी तरफ़ से मुबारकबाद देना। अगर ज़िन्दा रही तो तुमसे आकर मुलाक़ात होगी।

तुम्हारी अभागी सखी
प्रेमा

पूर्णा ने इसको बार-बार पढ़ा। उसकी आँखों में आँसू भर आये। इस तसवीर को गले में पहन लिया और निहायत हमदर्दाना लहजे में इस खत का जवाब लिखा।

अफ़सोस आज के पन्द्रहवें दिन बेचारी प्रेमा बाबू दाननाथ के गले बाँध दी गयी। बड़े धूमधाम से बारात निकली। हज़ारों रुपया लुटा दिया गया। कई दिन तक सारा शहर मुंशी बदरीप्रसाद साहब के दरवाजे पर नाच देखता रहा। लाखों का वारा-न्यारा हो गया। शादी के तीसरे ही दिन बाद मुंशी जी राहिये मुल्के बक़ा हुए। खुदा उनको मग़फ़िरत करे।

ग्यारहवाँ बाब

दुश्मन चे कुनद चु मेहरबाँ बाशद दोस्त

मेहमानों की रुख़्सती के बाद ये उम्मीद की जाती थी कि मुख़ालिफ़ीन अब सर न उठायेंगे। दुश्मन इस क़दर थे कि उनकी ताक़त मुंशी बदरीप्रसाद और ठाकुर जोरावर सिंह के मर जाने से निहायत कमज़ोर ही हो रही थी। मगर इत्तफ़ाक़ से बड़ी बला है। एक हफ़्ता भी न गुज़रने पाया था कि चर्चा कुछ-कुछ कम हो चला था कि एक रोज़ सुबह को बाबू अमृतराय के तमाम कारिन्दे उनकी ख़िदमत में हाज़िर हुए और अर्ज़ किया कि हमारा इस्तीफ़ा ले लिया जाय। बाबू साहब अपने नौकरों से बहुत अच्छा बर्ताव रखते थे। उनको इस दरख़्वास्त से बहुत ताज्जुब हुआ। बोले—तुम लोग क्या चाहते हो? क्यूँ इस्तीफ़ा देते हो?

नौकर—अब हुज़ूर हम लोग नौकरी न करेंगे।

अमृतराय—आख़िर इसकी कोई वजह भी है। अगर तुम्हारी तनख़्वाह कम हो तो बढ़ाई जा सकती है। अगर कोई दूसरी शिकायत हो तो उसकी भी इस्लाह हो सकती है। ये इस्तीफ़े की बातचीत कैसी और फिर सब के सब एक साथ।

नौकर—हुज़ूर तनख़ा की हमको ज़रा भी शिकायत नहीं। हुज़ूर तो हमका माई बाप की तरह पालत हैं। मगर अब हमार कुछ बस नाहीं। अब हमार बिरादरी वाले बाहर करत हैं, हुक्का-पानी बन्द करत हैं। सब कहत हैं कि उनके हियाँ नौकरी मत करो।

बाबू अमृतराय बात की तह तक पहुँच गये। मुख़ालिफ़ीन ने अपना और कोई बस चलता न देखकर सताने का ये ढंग निकाला है। बोले—

हम तुम्हारी तनख्वाह दूनी कर देंगे मगर अपना इस्तीफ़ा फेर लोगे। वर्ना तुम्हारा इस्तीफ़ा नामंजूर, ताकि फिर हमको और कहीं खिदमत गार न मिल जायें।

नौकर — (हाथ जोड़कर) सरकार, हमारे ऊपर मेहरबानी की जाय। बिरादरी हमको आज ही खारिज कर देगी।

अमृतराय — (डाँटकर) हम कुछ नहीं जानते जब तक हमको नौकर न मिलेंगे हम हरगिज इस्तीफ़ा मंजूर न करेंगे। तुम लोग अंधे हो देखते नहीं हो कि बिना नौकरों के हमारा काम क्योंकर चलेगा।

नौकरों ने देखा कि ये इस तरह हरगिज छुट्टी न देंगे चुनांचे उस वक्त तो वहाँ से चले आये। दिन भर खूब दिल लगाकर काम किया। आठ बजे रात के क़रीब जब बाबू अमृतराय सैर करके आये तो कोई दमदम थामनेवाला न था। चारों तरफ़ घूम-घूमकर पुकारा। मगर सदाये ना बरखास्त। समझ गये कम्बख्तों ने धोखा दिया। खुद घोड़े को खोला, फेरने की कहाँ फ़ुरसत। साज उतार अस्तबल में बाँध दिया। अन्दर गये तो क्या देखते हैं कि पूर्णा बैठी खाना पका रही है और बिल्लो इधर-उधर दौड़ रही है। नौकरों पर दाँत पीसकर रह गये। पूर्णा से कहा — प्यारी आज तुमको बड़ी तकलीफ़ हो रही है, कम्बख्तों ने सख्त धोखा दिया।

पूर्णा — (हँसकर) आज आपको अपने हाथ की रसोई खिलाऊँगी। कोई भारी इनाम दीजिएगा।

अमृतराय को उस वक्त दिल्लगी कहाँ सूझती थी बेचारे चावल-दाल खाकर भूख गये थे। कश्मीरी बरहमन निहायत नफ़ीस खाने तैयार करता था। उस शहर में ऐसा जादूगर बावर्ची कहीं न था। कितने लोग उसको नौकर रखने के लिए मुँह फैलाये हुए थे। मगर कोई ऐसी दरियादिली से तनख्वाह नहीं दे सकता था। उसके जाने का बाबू साहब को सख्त अफ़सोस हुआ।

बीबी से पूछा — ये बदमाश तुमसे पूछने भी आये थे या यूँ ही चले गये?

मुर्रा — मुझसे तो कोई भी नहीं पूछने आया। महुराव मस्करा गया और ऐसा था कि मुझे कोस मारने को समझा रहे हैं।

मधुराव — (मुझसे ठ हाथ मलकर) नहीं साहब ये वाजिब क्या कहनेवाले हैं। ये कहकर बाहर करने रखने लगे। वहाँ तो रोब फिर मजबूर जाकर अपने उतारता था मुंह दोनोंका का हाथ मुँह पुरवाला और महुराव कभी के सबसे बाहे देवार रक्खा और कहीं बकायक बाब समाधान हो गया। बेचारे नाक-सी झिड़की बन्कर फिर बसे। मुर्रा बाबू नाकियो में जाना पड़ेगा बैठे हुई थी और फिर मैं कुछ भी थी कि बाब सबसे उनकी यह शिकायत करने का मौका मिला। मगर अब उनका बेहतर रंगा तो बहुत गयी। कुछ बोलने की सूरत न बनी। हाँ बिल्ली ने कहा— बजकर आप गायबा बयान होते हैं। कौतर-बाहर तो बैठे हैं बात है। वहीं सब दो-एक रोज रहकर उधर रहे फिर आप ही सब गाकर आयेंगे।

मधुराव — (मुझसे की बात करते) नहीं मालूम बिल्ली ने उन्हीं लोगों की बरात है, उन्हीं जातिवालों ने तमाम मौकों को उघाड़कर क्या दिया है। और कभी नहीं मालूम क्या करनेवाले हैं। यहाँ तो कौन है कि सारे शहर में कोई आदमी हमारे यहाँ मौकों करने न आयेगा। हाँ बल्कि घर के बहार आ सकते हैं मगर वो सब बहुती बेकार होते हैं। मजदूर बाबसरवालों के और किसी काम के नहीं होंगे। ये कहकर आगे बैठे। वो बार बिलाके बाबे तो बाला बदौलार मालूम हुआ। मुर्रा फिर मन करीब जाते बस बड़ी थी। इस बस में उनको बात सकता था मगर जल्दी में बहुत मालूमी पानी के और कुछ न बना सकी थी। ताहम बाबू साहब ने बाते का बड़ी तारीफ की और अलग तौर पर उनका शुक्र भी किया। उस तो इस तरह काम चला मगर नकस्या की वाईसिलिक पर सवार होकर बड़ा जहाँ से निकले गये। और बिल्ली बाजार गीला उठायेंगे गयी। मगर उन्हें फिक्रा वाजपुर हुआ जब कि बनियों ने उनको कोई बाब भी न दी। फिर दुकान पर बजती वहीं ठहर का अनाज पानी। सारा बाजार छान डाला। मगर कहीं सौदा न मिला। नाचार घायल होकर लौटी और मुर्रा के साथ किस्सा बयान किया। मुर्रा ने बाब हमारा

किया था कि प्यारा अपने हुस्न के जौहर दिखलायेगी चीजों के न मिलने से दिल में ऐंठकर रह गयी। नाचार सादे खाने पकाकर धर दिये।

इसी तरह दो-तीन दिन गुज़रे। चौथे दिन बाबू साहब के इलाक़े पर से चन्द मोटे-ताजे हट्टे-कट्टे कहार आये जिनके बड़े बड़े हाथ-पाँव और फूले हुए कंधे इस क़ाबिल न थे जो एक तहज़ीबयाफ़्ता जेंटुलमैन की ख़िदमत कर सकें। बाबू साहब उनको देखकर ख़ूब हँसे और कुछ कारेराह देकर उनसे क़दम वापस किया और उसी वक़्त मुंशी धनुषधारी लाल के पास तार भेजा कि मुझको चन्द ख़िदमतगारों की सख़्त ज़रूरत है। मुंशी जी साहब पहले ही से सोचे हुए थे कि बनारस जैसे शहर में किस क़दर मुख़ालिफ़त हो जायेगी। तार पाते ही उन्होंने अपने होटल से पाँच ख़िदमतगारों को रवाना किया जिनमें एक काश्मीरी महाराज भी था। दूसरे दिन ये सब ख़ादिम आ पहुँचे। सब के सब पंजाबी थे जो न हिन्दू धर्म के गुलाम थे और न जिनको बिरादरी से ख़ारिज होने का ख़ौफ़ था। उनको भी मुख़ालिफ़ीन ने बरग़लाना चाहा। मगर कुछ दाँव न चला। नौकरों का इन्तज़ाम तो इस तरह हुआ। सौदे का ये बन्दोबस्त किया गया कि लखनऊ से तमाम रोज़ाना ज़रूरियात की चीज़ें इकट्ठी मँगा लीं जो कई महीनों के लिए काफ़ी थीं। मुख़ालिफ़ों ने जब देखा कि इन चालों से बाबू साहब को कोई सदमा न पहुँचा तो और ही चाल चले। उनके मुवक्किलों को बहकाना शुरू किया कि वो तो ईसाई हो गये हैं। विधवा विवाह किया है। सब जानवरों का गोश्त खाते हैं। छूत विचार नहीं मानते। उनको छूना गुनाह है। गो देहात में भी रिसाले व लेक्चर दिये गये थे और अमृतराय के पुरजोश पैरो मुश्तहिर तौर कर रहे थे मगर इन देहातों में अभी तक विधवा विवाह का ज़िक्र मसऊहतन नहीं किया गया था। चुनाँचे जब उनके मुवक्किलों ने जिनमें ज़ियादातर राजपूत और भूमिहार थे ये हालात सुने तो क़सम खाई कि उनको अपना मुक़द्दमा न देंगे। राम-राम विधवा से विवाह कर लिया! तक़रीबन दो हफ़्ते तक बाबू अमृतराय साहब के मुवक्किलों में ये बातें फैलीं और मुख़ालिफ़ीन ने उनके ख़ूब कान भरे जिसका नतीजा ये हुआ कि जब

साहब की वकालत की सरबराकारी शुरू हो गयी। वहाँ सारे मुकदमों के पास होने की फ़ुर्सत न मिलती थी वहाँ अब दिन भर हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने की नौबत आ गयी। हला कि हफ़्ते में एक मुकदमा भी न मिला। उनका बाजार ठंडा हुआ तो मुंशी मुख्तारीलाल बाबू रामलाल साहब की चाँदी हो गयी। अब तीन हफ़्ते तक बाबू अमरदयाल साहब को इजलास पर जाने की नौबत न आयी तो अब साहब को नागवार हुआ। श्री बाबू अमरदयाल साहब की बैठक में हज़रात की बड़ी कद्र करते थे और अक्सर उनको अपने मकान पर बुलाकर देवीदास मुख्तार से उनकी राय लिया करते थे और वाक़ई उनको वकील मुकदमा की बड़ी तहरीकात कमीशन का प्रेसिडेंट बनाया था। वकीलसाहब ने उनके इस तरह मजबूर होने का सबब पूछा। वकीलसाहब साहब कौम के मुसलमान और निहायत रहमदिल आदमी थे। उन्होंने फ़िलफ़ौर यह हाल सुनाया और ढाढ़स दूसरे दिन अमरदयाल को इजलास पर गुरु व गुरु मुख्तार साहिबा मुस्तफ़ा की। अमर ज़मींदारा के रुक्के उनके कर एक नालिश मुकदमा के पास कागज़ात मुसाफ़िर के राय की शिकायत में मुकदमा बहादुर ने ऊपर भी दरख्वास्त न की। अब अमर थे। बड़े वकील उन वक्त साहब बहादुर ने कुर्सी से उठकर उनसे हाथ मिलाया और उस लिए आये तो साहब ने बोले— अच्छा बाबू साहब जैसा आप कहता है राय बड़े बड़े तो साहब ने उसी माफ़िक करेगा। (ऊँचा) बालाक ने बात करकर मुख्तार ने कि है। इनका क्या हाल हम सब मसले में उसी बक़ील हूँ तो उन अमलदारी न जिन्हें जब साहब ने बुलाने अब कचहरी बैठे हौज़ बन — होता है। मुकदमा अब पेश के वे शर्तें बाकी पूछे गए, जिन्हें पूछे गये थे मुझ साहब— (एकदम खड़े) अब अब साहब अमरदयाल से गुरु-गुरु बड़े-बड़े लोगों का मान ढाके हैं तो राय के मुताबिक फ़ैसला बाल अपना देंगे। अब ये अब जहाँ की राय के मुताबिक फ़ैसला होवे।

प्रिय मी— (सर मुड़ाये टोपा लगाये बकरा का प्रतीक्षा करते

पर रक्खे हुए) हाँ चाल तो ऐसी पड़त है। जब बाबू साहब चले आवन तो जज साहब बोलेन कि आप जैसा कहेंगे वैसा किया जायगा।

ठाकुर—अब कहीं अमृतराय समान वकील जिरगौमाँ नाहीं था बाकी फिर ईसाई होय गया राँड से बियाह किहेसि।

मिस जी—इतनै तो पेंच पड़ा है। हमका तो जान पड़त है कि जरूर मुकद्दमा हार जाये। इतना वकील हुवे बाकी उनको बराबरी कोऊ नाहीं था। कइस बहस करत है, मानौं सरसुती जिभ्या पर बैठी है। जो अगर उनका वकील किये होयत तो जरूर हमार जीत हुइ जात।

इसी तरह की बातें दोनों में हुईं और विराग अलग-अलग दोनों बाबू अमृतराय के पास आये और मुकद्दमे की कयदाद बयान की और अपने खताओं की मुआफ़ी चाही। बाबू साहब ने पहले ही समझ लिया था कि मुकद्दमे में जान नहीं है ताहम उन्होंने उसको ले लिया और दूसरे दिन ऐसी पुरजोर और मुदल्लल बहस की कि फ़रीक़े सानी के वोकला खड़े मुँह ताका किये और शाम होते-होते मैदान अमृतराय के हाथ था। इस मुक़-द्दमे का जीतना कहिए और कचहरी बर्खास्त होने के बाद जज साहब का उनको मुबारकबाद देना कहिए कि घर जाते-जाते बाबू साहब के दरवाजे पर मुवक्किलों की भीड़ लग गयी और एक हफ्ते के अन्दर-अन्दर उनकी वकालत दूनी आबो-ताब से चमकी। मुख़ालिफ़ों को फिर नीचा देखना पड़ा। सच है, खुदा मेहरबान हो तो कुल मेहरबान।

इसी अरसा में वो घाट जो बाबू साहब सरके क़ब्रीर से बनवा रहे थे तैयार हो गया और मुख़ालिफ़ीन को भी मजबूरन मोतरिफ़ होना पड़ा कि ऐसा खूबसूरत घाट इस सूबे में कहीं नहीं। चौतरफ़ा संगीन चारदीवारी खिंची हुई थी और दरिया से नहरों के रास्ते पानी आता था। अनाथा लय भी तैयार हो गया। अच्छा ऊँची आलीशान पुख़्ता इमारत थी। ऐन दरिया के किनारे पर। उसके चारों तरफ़ अहाता घेरकर फूल लगा दिया था। फाटक पर संगमरमर के दो तख्ते नस्ब किये हुए थे। एक पर उन असहाब के असमाये गिरामी खुदे हुए थे जिनकी फ़य्याज़ी से वो इमारत तामीर हुई थी और दूसरे पर इमारत का नाम और उसके

मसरफ अभी हुकुम में लिखे हुए थे। वो रियासत कश्मीर हो चुकी थी मगर अभी तक दस्तूर-उल-अमल की पूरी तैयारी न हो सकी थी। लिहाजा यह थी कि शीघ्र निर्देश पुर-पूरे करना, पुर्जे वगैरह कमाल लिखाने के लिए हिन्दुस्तानियों न मिलती थी। हाँ लाला मुकुन्दलाल साहब पर उनके महीना करने का कार काम करा था और बहुत अल्प नामवरी की उम्मीद थी। रुक रियासत का दफ्तरदारी, अकबर ने गुजरान से हुआ। सिकन्दरनगर के महाराजा साहब के जो कुछ की निहायत कठनाई और मेक स्टे के रियासत की सबसे मुसीबत में तोला और भी कुछ विश्वा विवाह के मुताबिक में वे अगर रह कलामयत के साथ उन्हीं दफ्तरी जाहिर की और बाबू रामलाल के नवाबर अमीला की करार शब्दों जान थी। बाद के समय जनता किला इस्तेलक रह अबने में घटित हुए और महाराजा साहब की कालिका छव्वारी में वह को रूप में एक दिन रुपया वसूल करा दिया। और बाद बहुतरण की मालूम हुआ कि जिसे अपनी जिन्दगी में कुछ काम किया है।

जब से यहाँ हुई थी उन्हीं में बाबू साहब को कभी इतना दुख न पाया था जितना यहाँ से मुश्किल थे। इस दुई महीने भर बैठाने तन्दुरुस्त से मुश्किल थे। एक हफ्ता मेहमानों की सवारी न थका। एक दूसरे तक नौकरों में दस्तरख्वान थी। बाद क्या दो-तीन हुये तक बड़ा बच्चा की मनोवाणी रही थी जो इस बखत है और भी ठकरपुर का बाजार की रही थी कि बाद और कमाचार के ठेकेदार के दिन बना करते थे। अब बड़ा रकमान्त हुआ तो इस टैगुनाही उनकी तनख्वाह से कागजों के मूल हुई। उसका इस मेक महीने तक उनको बहुत दुख था। बहुत गुमशुदा हो रहा किया। बाद जब वह बाते तो बराबर हुए हैं। उनको निहायत रंज होता था था। इधर उनको मुस्कराकर देखती तो उनको विहावल किया करती थी। बाद और उनकी फिक्र दूर करने की बराबर कोशिश किया करती थी। बाबू साहब के उठ गये के लगाकर उनको कुछ पैसा तो निहाल हो गयी। बाबू साहब के उठ गए हैं लगाकर रहे — चाहे बुरा, इनको बाद मालूम होता है कि जिन्दगी में कोई काम किया।

पूर्णा — ईश्वर आपके इरादों में बरकत दे। अभी आप न मालूम क्या-क्या करेंगे।

अमृतराय — तुमको इस अनाथालय की निगरानी करना होगी। क्यों अच्छा होगा न?

पूर्णा — (हँसकर) तुम मुझे सिखा देना।

अमृतराय — मैं तुमको लेकर मद्रास और पूना जाऊँगा। वहाँ के औरतखानों का इन्तज़ाम देखूँगा। और ज़रूरत के मुआफ़िक़ तरमीम करके वही क़वाइद यहाँ भी जारी करूँगा। प्यारी कल से तुमको मिस विलियम गाना सिखाने आया करेंगी।

पूर्णा — (हँसकर) तुम मुझे क्या-क्या सिखलाओगे। मुझसे ब्याह करने में तुमने धोखा खाया।

अमृतराय — बेशक धोखा खाया। मुहब्बत की सज़ा अपने सर ली। इसी तरह देर तक बातें होती रहीं। आज से दोनों मियाँ-बीबी बड़े चैन से बसर करने लगे। ज्यूँ-ज्यूँ दोनों की छिपी हुई खूबियाँ एक-दूसरे पर ज़ाहिर होती थीं उनकी मुहब्बत बढ़ती जाती थी। बीबी शौहर की आशिक और शौहर बीबी का शैदा था। दोनों एक जान दो क़ालिब थे। जब बाबू अमृतराय कचहरी जाते तो पूर्णा गाना सीखती। जब वह कचहरी से आ जाते तो उनको गाना सुनाती। बाद अज़ाँ दोनो शाम को बाग में सैर करते। इसी तरह हँसी-खुशी एक महीना खत्म हो गया। खुशी के अय्याम जल्द कट जाते हैं।

बारहवाँ बाब

फ़िक्रे दौर का निशाना किसी
बात से भी कहीं मिला न खुदा।

ऐसा की शादी हुए दो माह से ज़्यादा गुज़र चुके हैं मगर उस[के] चेहरे पर मसर्रत व इत्मीनान की अलामतें नज़र नहीं आतीं। जो हस्बे मुस्तक़बिल की वहम करती है। उसका चेहरा उतरा रहता है। और बैठे हुए मन के साथ फ़िक्रें परेशान उसके दिल से अभी तक बाबू अमरनाथ की मुहब्बत जाती है। वह हर वक़्त चाहती है कि दिल से उनकी सूरत निकाल डाले मगर उसका कुछ बस नहीं चलता। जो बाबू रामलाल उसके साथ उनकी मुहब्बत ज़ाहिर करते हैं और अलावा बशीर की सर्दमेहर तौर होने के निहायत हैरतअंगेज़ बदक़िस्मती व मिज़ाजन ज़ाहिर आदमी हैं मगर ऐसा का दिल उनसे नहीं मिलता। जो उनकी मौजूद हैं मगर इसमें से कोई रवैया नहीं करते हैं मुहब्बत भी जताती है उनकी तो वो हँसती भी है सल्तनत भी करती है। बल्कि बैठे से ठोकर जब वो चले जाते हैं तो फिर को समझाती होती है। या ऐसी है तो उनकर रोते की आवाज़ी थी। वही तो भी नहीं मानती। या ऐसी है न सिर्फ़ इस तरह उसकी ख़ूबी ख़्याल उसकी पास की निहायत करती है बल्कि इस तरह से कि वो उसका पास की निहायत बेचैनी और जाती है। बजाये ऐसा की ज़िन्दगी अपने साथ निहायत बेचैनी रहती है। उसकी हँसी बहुतरूप होती है। उसकी बाबत बातचीत एक बेचैनी और फ़िक्रमन्दाना-सी पायी जाती है। मालूम के लहजे में एक फ़साने के निसार भी करती है मगर उसके चेहरे की कभी-कभी शाम के ख़याले से निसार भी जाती जो किसी इत्मीनान का पर की रौनक और चमक रंग नहीं पायी जाती अक्सर वो बैठी रहती है। दो पहरी होती है। जो निहायत बनी ही

कभी-कभी गाकर दिल बहलाती है। मगर उसका गाना इसलिए नहीं होता कि उसको खुशी हासिल हो। बरअक्स इसके वो दर्दनाक नगमे गाती है और अक्सर रोती है। उसको मालूम होता है कि मेरे दिल पर कोई बोझ धरा हुआ है।

बाबू दाननाथ इतना तो शादी करने के पहले ही जानते थे कि प्रेमा अमृतराय पर जान देती है। मगर उन्होंने समझा था कि उसकी मुहब्बत मामूली मुहब्बत होगी। जब मैं उसको ब्याह कर लाऊँगा और उसके साथ इखलास व प्यार से पेश आऊँगा तो वो सब भूल जायगी और फिर हमारी जिन्दगी बड़े इत्मीनान से बसर होगी। चुनांचे एक महीने तक उन्होंने उसकी दिलगिरफ्तगी की बहुत ज्यादा परवा न की। मगर उनको क्या मालूम था कि वो मुहब्बत का पौधा जो पाँच बरस तक खूने दिल से सींच सींचकर परवान चढ़ाया गया है महीने-दो महीने में हरगिज नहीं मुरझा सकता। उन्होंने दूसरे महीने भर भी सब्र किया मगर जब अब भी प्रेमा के चेहरे पर शिगुफ्तगी व बशाशत न नजर आयी तब तो उनको सदमा होने लगा। मुहब्बत और हसद का चोली-दामन का साथ है। दाननाथ सच्ची मुहब्बत करते थे मगर सच्ची मुहब्बत के एवज सच्ची मुहब्बत चाहते भी थे। एक रोज वो मामूल से सवेरे मकान पर वापस आये और प्रेमा के कमरे में गये तो देखा कि वो सर झुकाये हुए बैठी है। उनको देखते ही उसने सर उठाया हाय! मुहब्बत के लहजे में बोली — मुझे आज न मालूम क्यूँ लाला जी की याद आ गयी थी। बड़ी देर से रो रही हूँ।

दाननाथ ने उसको देखते ही समझ लिया था कि अमृतराय के फ़िराक में ये आँसू बहाये जा रहे हैं। उस पर प्रेमा ने जो यूँ हवा बतलायी तो उनको निहायत नागवार मालूम हुआ। रूखे लहजे में बोले — तुम्हारी आँखें हैं तुम्हारे आँसू भी जितना रोया जाय रो लो। चाहे ये रोना किसी जिन्दा आदमी के लिए हो या मुर्दा के लिए!

प्रेमा इस आखिरी फ़िकरे पर चौंक पड़ी और बिला जवाब दिये शौहर की तरफ़ मुस्तफ़सिराना निगाहों से देखने लगी। दाननाथ ने फिर कहा — क्या समझती हो प्रेमा मैं ऐसा अहमक नहीं हूँ। मैंने भी आदमी

ऐसे हैं और आदमी पहचानता हूँ। जो तुमसे मुझको बिल्कुल सीधा बनाना पड़ा होगा। मैं तुम्हारी एक-एक हरकत को गौर से देखता हूँ। मगर जितना ही देखता हूँ उतना ही ज्यादा [illegible] फिर भी होता है क्योंकि तुम्हारा [illegible] मेरे लिए [illegible] है। जो मुझको ये मुमला नागवार मालूम होगा मगर मजबूर कहना पड़ता है कि तुम मुझसे मुहब्बत नहीं करतीं। मैं अब तक इस नाजुक मसले पर जबान खोलने की जुरअत नहीं की। और ईश्वर जानता है कि मैं तुम्हारी किस कदर मुहब्बत करता हूँ। मगर मुहब्बत बातें जो कुछ बर्दाश्त करे, बेग़ैरती नहीं बर्दाश्त कर सकती और यों भी कैसी बेग़ैरती जिसका असर किसी तरह के [illegible] हो। कोई आदमी जुर्म में नहीं रह सकता कि उसकी बीवी दूसरे के खिदमत में आंसू बहाये। क्या तुम नहीं जानती हो कि हिन्दू औरत की शान के मुनासिब अपने शौहर के अलावा किसी दूसरे का ख्याल करना भी गुनाहगार बना देता है। ऐसा तुम एक बहू हो जो भी इस शहर में किसी की बेटी हो और जिस खानदान की तुम बहू हो वो भी इस शहर में [illegible] नहीं है कि तुम से ऐंठ नहीं। क्या तुम्हारे लिए ये आंसू बहाना जिनका बाप तुम्हारे वालिद उस आदमी के खिलाफ [illegible] थी। मुनासिब [illegible] एक बाजारू तौर आदमी को फिक्र में [illegible] की तुम्हारी [illegible] तुम्हारी [illegible] कहीं होगा, क्या उस [illegible] नहीं करते [illegible] अफसोस है [illegible] फिराक ...

[illegible]

में आँसू बहा-बहाकर अपने और मेरे खानदान के माथे पर कलंक का टीका लगाती हो!

दाननाथ गुस्से के जोश में थे। चेहरा तमतमाया हुआ था और आँखों से शोले न निकलते हों मगर इन्तिहा दर्जे की रोशनी जरूर पायी जाती थी। प्रेमा बेचारी सर नीचा किये खड़ी रो रही थी। शौहर की एक-एक बात उसके सीने के पार हुई जाती थी। सुनते-सुनते कलेजा मुँह को आ गया। आखिर जब्त न हो सका न रहा गया दाननाथ के पैरों पर गिर पड़ी और गर्म-गर्म अश्क के कतरों से उनको भिगा दिया। दाननाथ ने फ़ौरन पैर खिसका लिया। प्रेमा को चारपाई पर बिठा दिया और बोले — प्रेमा रोओ मत तुम्हारे रोने से मेरे दिल को सदमा होता है। मैं तुमको रुलाना नहीं चाहता मगर उन बातों को कहे बिना रह भी नहीं सकता जो अगर दिल में रह गयीं तो नतीजा बुरा होगा। कान खोलकर सुनो। मैं तुमको जान से ज़ियादा अज़ीज़ रखता हूँ। तुम्हारी आसाइश के लिए मैं अपनी जान निछावर करने के लिए हाज़िर हूँ। मैं तुम्हारे जरा से इशारे पर अपने को सदके कर सकता हूँ मगर तुमको सिवाय अपने किसी और का लिहाज़ करते नहीं देख सकता। हाँ प्रेमा मुझसे अब यह नहीं देखा जा सकता। एक महीने से मुझको यही शिकायत हो रही है। मगर अब दिल पक गया है। अब तो जरा-सी ठेस भी नहीं बर्दाश्त कर सकता। अगर इस आगाही पर भी तुम अपने दिल पर काबू न पा सको तो मेरा कुछ कुसूर नहीं। बस इतना कहे देता हूँ कि एक औरत के दो शौहर नहीं जिन्दा रह सकते।

यह कहते हुए बाबू दाननाथ गुस्से में भरे बाहर चले आये। बेचारी प्रेमा को ऐसा मालूम हुआ गोया किसी ने कलेजे में छुरी मार दी। उसको आज तक किसी ने भूलकर भी कोई कड़ी बात नहीं सुनायी थी। उसकी भावज कभी-कभी ताने दिया करती थीं मगर वो ऐसे सख्त नहीं मालूम होते थे। वो घण्टों रोती रही। बाद अज़ाँ उसने शौहर की सारी बातों को सोचना शुरू किया और उसके कानों में यह आखिरी अल्फ़ाज़ गूँजने लगे 'एक औरत के दो शौहर जिन्दा नहीं रह सकते!

इसका क्या मतलब है?

तेरहवाँ बाब

चन्द हसरतनाक सानिहे

हम पहले कह चुके हैं कि उमराव हरदयाल से बाजारी पाने के बाद एक माह तक पूर्णा ने बड़े चैन से बसर की। उन दिन बड़े बाते थे। किसी किस्म की फ़िक्र की परछाई भी न दिखायी देती थी। हाँ ये था कि जब बाबू अमृतराय कचहरी चले जाते तो अकेले उसका जी बहुत घबराता। तब उसने एक रोज़ उनसे कहा—कि अगर कोई हर्ज न हो तो रामकली और लछमी को यहाँ आने दिया करें ताकि उनको सोहबत से मेरा भी जी बहला करे। रामकली को नावाक़िफ़ जानते हैं। लछमी भी एक कायस्थ की लड़की थी और गौने के ही दिन बेवा हो गयी थी। इन दोनों औरतों ने पूर्णा की शादी हो जाने के बाद कभी-कभी उससे मिलने की ख़ातिर की थी और बाबू अमृतराय ने उनके लिए एक मकान किराये पर लिया था और उनकी जानकारी के अफ़सानाजात के मुताल्लिक भी होते थे। बाबू साहब को पूर्णा की तजवीज़ बहुत अच्छी मालूम हुई और दूसरे ही दिन रामकली और लछमी उसी मकान के एक हिस्से में ठहरा दी गयीं। पूर्णा ने इन दोनों औरतों को जहाँ तक होने के बाद न देखा था। अब रामकली को देखा तो पहचानी न जाती थी और लछमी ने भी खूब रूप निकाले थे। दोनों औरतें पूर्णा के साथ हँसी-खुशी रहने लगीं। बाबू साहब की तजवीज़ थी कि इन औरतों की तालीम कराके ही आम तौर अनाथालय की निगरानी उन्हीं के सुपुर्द कर दूँ। पूर्णा ने एक इश्तहार बड़ी दौलहर की बानी और दोनों को पाठ पढ़ाया करती। रामकली अब भी ज़िन्दगी में अपनी याद को रोना करती थी। एक रोज़ पूर्णा के उनसे

मुस्कराकर पूछा—क्यूँ रमन आजकल मन्दिर पूजा करने नहीं जाती हो?

रामकली ने झेंपकर जवाब दिया—सखी तुम भी कहाँ का जिक्र ले बैठीं। अब तो मुझको मन्दिर के नाम से भी नफ़रत है।

लछमी को रामकली के पहले हालात मालूम थे। वो अक्सर उसको छेड़ा करती। उस वक्त भी न रहा गया। बोल उठी—हाँ बुआ अब मन्दिर काहे को जाओगी। अब तो हँसने-बोलने का सामान घर ही पर मौजूद है।

रामकली—(तुनककर) तुमसे कौन बोलता है जो कभी जहर उगलने! बहन इसको मना कर दो ये हमारी बातों में न दखल दिया करे नहीं तो मैं भी कभी कुछ कह बैठूंगी तो रोती फिरेंगी।

लछमी—(मुस्कराकर) मैंने झूठ थोड़े कहा था जो तुमको ऐसा कड़वा मालूम हुआ। तो अगर सच बात कहने में ऐसी शर्म होती हो तो झूठ ही बोला करूँगी। मगर एक बात बतला दो। महन्त जी ने मन्दर बैठे वक्त तुम्हारे कान में क्या कहा था। हमारी सखी जाये जो झूठ बोले।

पूर्णा हँसने लगी मगर रामकली दमाधी होकर बोली—सुना लछमी हमसे शरारत करोगी तो ठीक न होगा। मैं जितना तरह देती हूँ तुम उतना ही सर चढ़ी जाती हो। आपसे मतलब महन्त ने मेरे कान में कुछ ही कहा था। बड़ी आयी वहाँ से सीता बन के।

पूर्णा—लछमी तुम हमारी सखी को नाहक सताती हो। जो पूछना ही करो मुलायमियत से पूछना चाहिए कि यूँ। हाँ बुआ तुम उनसे न बोलो मुझको बतला दो। उस ठगीजी ने तुमको पान खिलाते वक्त क्या कहा था?

रामकली—(चिढ़कर) अब तुम्हें भी छेड़खानी की सूझी। मैं कुछ कह बैठूंगी तो बुरा मान जाओगी।

इसी तरह तीनों सखियों में हँसी-मजाक बोली-ठोली हुआ करती थी। साथ पढ़तीं साथ हवा खाने जाया करतीं कई मर्तबा गंगा-स्नान को गयीं। मगर उसी जमाने घाट पर जो अमृतराय ने बनवाया था। मालूम होता

छठा अध्याय

मुये पर सौ दुर्रे

पूर्णा ने गजरा पहिन तो लिया। मगर रात भर उसकी आँखों में नींद नहीं आयी। उसकी समझ में यह बात न आती थी कि अमृतराय ने उसे गजरा क्यों दिया। उसे ऐसा मालूम होता था कि पंडित बसंतकुमार उसकी तरफ बहुत क्रोध से देख रहे हैं। उसने चाहा कि गजरा उतार कर फेंक दूँ मगर नहीं मालूम क्यों उसके हाथ काँपने लगे। सारी रात उसने आँखों में काटी। प्रभात हुआ। अभी सूर्य भगवान ने भी कृपा न की थी कि पंडाइन और चौबाइन और बाबू कमलाप्रसाद की बूढ़ी महराजिन और पड़ोस की सेठानी की कई दूसरी औरतों के साथ पूर्णा के मकान पर आ उपस्थित हुईं। उसने बड़े आदर से सबको बिठाया सबके पैर छुए। उसके बाद यह पंचायत होने लगी।

पंडाइन (जो बुढ़ापे की वजह से झुककर कोहनी की तरह हो गयी थी) — क्यों दुलहिन पंडित जी को गंगालाभ हुए कितने दिन बीते?

पूर्णा — (डरते-डरते) पाँच महीने से कुछ अधिक हुआ होगा।

पंडाइन — और अभी से तुम सबके घर आने-जाने लगीं। क्या नाम कि कल तुम सर्कार के घर चली गयी थीं। उनकी क्वाँरी कन्या के पास दिन भर बैठी रहीं। भला सोचो तो तुमने कोई अच्छा काम किया। क्या नाम कि तुम्हारा और उनका अब क्या साथ। जब वह तुम्हारी सखी थी तब थी। अब तो तुम विधवा हो गयीं। तुमको कम से कम साल भर तक घर से बाहर पाँव न निकालना चाहिए। तुम्हारे लिए साल भर तक हँसना बोलना मना है। हम यह नहीं कहते कि तुम दर्शन को न जाव या स्नान

को न जाय। स्याह-सुफ़ेद तो तुम्हारे हाथ ही है। हाँ किसी सोहागिन या किसी ब्याही कन्या पर तुमको अपनी कला नहीं आजमानी चाहिए। पंडितजी खुश हुए तो महफ़िल दूसरी ही तरह बहकने लगी — क्या मज़ाक़ है, और और तुम्हीं दोनों लड़ का झूठ पीकर रह गए। ईश्वर जाने यही सज़ा है तो विलक्षण विलक्षण है। दूसरे वह रोज़ थी कि एक तो बेचारी लड़की के माँ ही कान के लाले पड़े हैं। दूसरे वह रोज़ बेटा के साथ उठना बैठना है। नहीं मालूम गाफ़िल क्या करते हैं। छोटी सकारि मारे कोप के काँप रही थी। भाँडों से आला निकल रही थी। आर कैसे उनको समझाया कि साथ जाये। कीजिए यह बेचारी तो कभी सकता है। बड़े बड़े का मर्म क्या जाने। ठकुराइन का बेटा लिये जब कुछ समझाया तब जाके शान्ती। नहीं तो सहेली थी वे कभी जाकर कहीं नहीं विकास करते हैं। तो बेटा अब तुम सोहागिनों के साथ ऐसी चोट नहीं खाती। अरे ठिकाना है तो तुम पर निर्णय साफ़ थी। अब बस मुझे प्रायश्चित हो न पड़ा तो अब ऐसा ईश्वर बोलना। अब तो तुम्हारा बचा रहा है कि तुम्हारा अपने घर में पड़ी रहो। जो कुछ रूखा-सूखा मिले खाकर मिलो। और ठकुराइन का बेटा लिये नहीं रह ही जाते वर्ण के साथ करो।

महफ़िल के बड़े होते ही पंडितजी सकते लगी। वह एक मोटी सपेहिल और कमेले झोल थी — क्या उनसे पूछो कि कभी तुम्हारे दूसरे को उठके पाँव खोली भी न ऐसे कभी से तुम कभी नहीं करने लगी। क्या कि तुम अब विधवा हो गई। तुम्हारी अब ठिकाने बेठार से क्या सरोकार रहा। क्या काम कि ऐसे हुकूमत औरतों का ठेका है जो पति के मरने के बाद महफ़िल-महला नहीं पहनती। हैफ़ा बोलता तक कोप होता है। यह न कि बात तो सुहाग उठा और बस ठिकाने बेठार होने लगा। मैं सखी-पनी की बात नहीं जानती। कहीं रहा। वाले किसी को ठेका करे या भीख। वाह अनुराधा का रोज़ देख यहाँ जाना ठीक नहीं है। है कि यहाँ देवजी जी?

देवजी भी बहुत मोटी थी और भारी-भारी गहनों से लदी थी। कान के लौंगे ईश्वरों से अलग होकर मोटे लटक रहे थे। इसकी भी

एक बहू रांड हो गयी थी जिसका जीवन उसने व्यर्थ कर रखा था। उसका स्वभाव था कि बात करते समय हाथों को मटकाया करती थी। महराजिन की बात सुनकर बोली — ‘जो सच बात होगी सब कोई कहेगा। इसमें किसी का क्या डर। भला किसी ने कभी रांड बेवा को भी माथे पर बिन्दी देते देखा है। जब सोहाग उठ गया तो फिर सेन्दुर कैसा। मेरी भी तो एक बहू विधवा है। मगर आज तक कभी मैंने उसको लाल साड़ी नहीं पहिनने दी। न जाने इन छोकरियों का जी कैसा है कि विधवा हो जाने पर भी सिंगार पर जी ललचाया करता है। अरे इनको चाहिए कि जाना अब हम रांड हो गईं। इनको निगोड़े सिंगार से क्या लेना।

महराजिन — सकोर का बेटा जिये तुम बहुत ठीक कहती हो सेठानी जी! कल छोटी सरकार ने जो इनको मांग में सेन्दुर लगाये देखा तो खड़ी ठक रह गयीं। दांतों तले उंगली दबायी कि अभी तीन दिन की विधवा और यह सिंगार! सो बेटा अब तुमको समझ-बूझकर काम करना चाहिए। तुम अब बच्चा नहीं हो।

सेठानी — और क्या चाहे बच्चा हो या बूढ़ी। जब बेराह चलेंगी तो सब ही कहेंगे। तुम क्यों हो पंडाइन इनके लिए अब कोई राह-बाट निकाल दो।

पंडाइन — जब यह अपने मन की ही गयीं तो कोई क्या राह-बाट निकाले। इनको चाहिए कि वे अपने लंबे-लंबे केश कटवा डालें। क्या काम कि दूसरों के घर आना-जाना छोड़ दें। कंघी-चोटी कभी न करें। पान न खायें। रंगीन साड़ी न पहनें और जैसे संसार की विधवायें रहती हैं वैसे रहें।

चौबाइन — और बाबू अमृतराय से कह दें कि यहाँ न आया करें। इस पर एक औरत ने जो गहने-कपड़े से बहुत मालदार न जान पड़ती थी कहा — चौबाइन, यह सब तो तुम कह गयीं मगर जो कहीं बाबू अमृतराय चिढ़ गये तो क्या तुम इस बेचारी का रोटी-कपड़ा चला दोगी? कोई विधवा हो गया तो क्या अब अपना मुँह सी ले।

महरतिन — (हाथ मटकाकर) यह कौन बोला? इसको! क्या मसला कुचले क्यों?

सेठानी — (हाथ मटकाकर) तुझे किसने बोलाया जो बात के बीच में बोल उठी। एक तो हो बड़ी ही कहे नहीं का के बजार में बैठी हो।

बांसारा — अपने मां से सेठानी जी इस तरी से मुंह क्या लगती हो।

सेठानी — (कड़ककर) इस मुई की यहां किसने बुलाया। यह तो कहती है बैठी से बहुत हूं बैठा हो उधार हो जाय।

महरतिन — तुम ही तौल ३ दो भी तो यह क्यों बुरा लगा? यह कौन हुई है बीच में बोलनेवाली?

बांसारा — बहिन अब इसी से माफ़ बोलती हो। इसको तो क्या बुलाया करता है।

यह मालिक महरतिनों का सारा दौलत लेकर वह सब दिखाई यहाँ से चलती। महरतिन की पुत्री सरदेसाई के यहाँ काम करती थी। इसके और छोटी ठकुर के बहुत बड़ी थी। वह इस पर बहुत विश्वास रखती थी। महरतिन ने बाते ही बारी कर उस बात को मंत्र तक लिये हुए लगाकर बयान की और छोटी ठकुर ने इस बात को बड़े नाव से उठाकर लिया और पैसा को बचाने और पुकारने के लिए बड़ी कसम खाकर उनके कहने की तरह कही। थी तो वह प्रतिदिन आती रही पर आना नहीं थी। अगर कभी कभी बड़े साथ पट्टे के लिए गौर का बाली थी। मगर बल वा बाली थी एक ढेर सी का बाली थी मगर जब से उसकी बाबू जगतराम की संगतियाँ के बीच में देखा था और पुत्री के घर के लोहड़ा वक्त उसको उनको बताने (जबरदस्त कसर लाता था उस से उनके पेट में अम्बको पकी हुई थी कि वह पुत्री आये और वह कुछ हाल मालूम हो। रात को देखते के मारे बड़-बड़ घरों पर कोई दौड़ाती कि कब भोर हो। इस बीच की गायब के पेटों की बात खुली तो यह समझकर कि पुत्री आ रही है लपकी हुई दरवाजे तक आती। मगर ज्यों ही मालूम हो देखा ठिठक गई और बोली — कैसे क्या आयी?

पानी तो यह चाहती ही थी कि ऐड़-करन के लिए कोई मौका मिले।

यह प्रश्न सुनते ही बिगड़ कर बोली — क्या बताऊँ कैसे चली? अब से जब तुम्हारे पास आया करूँगी तो इस सवाल का जवाब सोचकर आया करूँगी। तुम्हारी तरह सबका खून थोड़े ही सफेद हो गया है कि चाहे किसी की जान निकल जाय घी का घड़ा ढलक जाय। मगर अपने कमरे से पाँव बाहर न निकालें।

प्रेमा ने यह सवाल यों ही पूछ लिया था। उसके जब यह अर्थ लगाये गये तो उसको बहुत बुरा मालूम हुआ। बोली — भाभी तुम्हारे तो नाक पर गुस्सा रहता है। तुम ज़रा-सी बात का बतंगड़ बना देती हो। भला मैंने कौन-सी बात बुरा मानने की कही थी?

भाभी — कुछ नहीं तुम तो जो कुछ कहती हो मानों मुँह से फूल झड़ती हो। तुम्हारे मुँह में मिसरी घोली हुई है न! और सबके तो नाक पर गुस्सा रहता है सबसे लड़ा ही करते हैं।

प्रेमा — (झल्लाकर) भावज इस समय तुम्हारा चित्त बिगड़ा हुआ है। ईश्वर के लिए मुझसे मत उलझो। मैं तो यों ही अपनी जान को रो रही हूँ। उस पर से तुम और भी नमक छिड़कने आयीं।

भाभी — (मटककर) हाँ रानी, मेरा तो चित्त बिगड़ा हुआ है सर फिरा हुआ है। बड़ी सीधी-सादी हूँ न! मुझको देखकर भागा करो। मैं बड़ी कुतिया हूँ सबको काटती फिरती हूँ। मैं भी बाबू को चुपके-चुपके चिट्ठी-पत्री लिखा करती तसवीरें बदला करती तो मैं भी सीता कहलाती और मुझ पर भी घर भर जान देने लगता। मगर मान न मान मैं तेरा मेहमान। तुम लाख यतन करो लाख चिट्ठियाँ लिखो मगर वह सोने की चिड़िया हाथ आनेवाली नहीं।

यह जली-कटी सुनकर प्रेमा से जब्त न हो सका। बेचारी सीधे स्वभाव की औरत थी। उसका बरसों से विरह की अग्नि में जलते-जलते कलेजा और भी पक गया था। वह रोने लगी।

भावज ने जब उसको रोते देखा तो मारे हर्ष के आँखें जगमगा गयीं। हुनेरे की! कैसा रुला दिया! बोली — अब बिलखने क्यों लगीं? क्या अम्मा जी को सुनाकर देशनिकाला करा दोगी? कुछ झूठ थोड़ा ही कहती हूँ। वही

मनुष्यत्व जिनके पास बाप चुके-चुके प्रेम-पत्र भेजा करती थी जब कि वहाँ तब तक दुर्गा के घर जाता है और वहाँ नहीं बैठा रहता है। तुम्हारी हैं पुत्र के मन्दिर आ-जाकर पहुनाता है। शायद दो-एक बहुत भी दिये हैं। प्रभा इससे ज्यादा न कुछ कही। निर्लज्जा कर बोली—भाभी मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, मुझ पर दया करो। मुझे भी जाने दो। (दो कर) नहीं तो, जो चाहे मार लो। मगर किसी का नाम लेकर और उस पर हाँ रखकर मेरे मिल को यह जलाओ। आखिर किसी के डर पर मुझ मुझ मायाग क्यों बनाती हो।

प्रेमा ने तो यह सब नहीं बोलता है नहीं। मगर छोटा अगर [illegible] छुटे रखकर पर विराज नहीं। समझ कर बोली—हाँ हो ठगी से दूसरों पर हाँ रखकर तुम्हारी जलाती करती हैं न। मैं तो कुछ का व्यवहार करती हूँ। मुझे तुम्हारे सामने कुछ बोलते हैं किराये मिलती होगी। आखिर मोंगे के निकालने पर कौन ठिकाना। मगर मैं एक ठूँठ हूँ। ताता जमाना तो नहीं सका है। जब मुझको घर में घर नहीं पानी हो गया है। तुम तो पड़ी किसी हो। माना कि वह उनका ठीक-ठाक [illegible] के नहीं मर्दों का दुर्गा के क्या काम। मैं एक पर न पड़ती है तो दूसरा उसके कारण है। मगर यह तो दुनिया है। जब एक का यह हक नहीं है कि इनरों को बहकाया करें। और यह मजे मनुष्यों का यह काम है [illegible] यह तो काम नहीं पर और जाना करना है। [illegible] दिन [illegible] दिन भी इनके को मरे हुए नहीं यह एक ही दिन की बात है। कभी तीन दिन भी [illegible] एक बना हूँ बाते कि सबको सबका दिखाने लगी। इनका क्या मतलब मानो एक बला हूँ हूँ। तब जब वह यहाँ आई थी तो मैं साथ घूँघट रहती थी। नहीं तो मेरी कैद लगती है। यही न पहले हो। पुत्र कहीं का यहाँ आकर तुम्हारे नहीं बनती है। इसी के अनुरूपता को अपना यौवन दिखाकर अपना लिया। तब कैसा लगक कर ठहुक-ठहुक बहती थी। [illegible] तेरा कर आंखें फूटी थी। बरबराए तो अब रुपये, तुमसे कम पुरुष को अपने यहाँ दिखाया। मैं उनकी सूरत नहीं देखना चाहती।

बजाय यह मसल है कि झूठ बात का भी विश्वास दिला देती है। छोटी सरकार ने जो कुछ कहा वह तो सच-सच था। भला उसका असर क्यों न होता। अगर उसने गजरा लिये हुए जाते न देखा होता तो भाभज की बातों को अवश्य बनावट समझती। फिर भी यह ऐसी भोली नहीं थी कि उसी वक्त अमृतराय और पूर्णा को कोसने लगती और यह समझ लेती कि उन दोनों में कुछ साँठ-गाँठ है। वह अपनी चारपाई पर जाकर लेट गयी और मुँह लपेट कर कुछ सोचने लगी।

प्रेमा को तो पलंग पर लेटकर भाभज की बातों को तौलने दीजिए और हम मरदाने में चलें। यह एक बहुत सजा हुआ लम्बा-चौड़ा दीवान-खाना है। जमीन पर मिर्जापुरी खूबसूरत कालीनें बिछी हुई हैं। भाँति-भाँति की गद्देदार कुर्सियाँ लगी हुई हैं। दीवारें उत्तम चित्रों से भूषित हैं। पंखा झला जा रहा है। मुंशी बदरीप्रसाद एक आरामकुर्सी पर बैठे ऐनक लगाये एक अखबार पढ़ रहे हैं। उनके दाहने-बायें की कुर्सियों पर कई और महाशय रईस बैठे हुए हैं। यह सामने की तरफ मुन्शी गुलजारीलाल हैं और उनके बगल में बाबू दाननाथ हैं। दाहिनी तरफ बाबू कमलाप्रसाद मुंशी झम्मनलाल से कुछ काना-फूसी कर रहे हैं। बायीं ओर दो-तीन और आदमी हैं जिनको हम नहीं पहचानते। कई मिनट तक मुन्शी बदरीप्रसाद अखबार पढ़ते रहे। आखिर उन्होंने सर उठाया और सभा की तरफ देखकर बड़ी गम्भीरता से बोले—बाबू अमृतराय के लेख अब बड़े ही निन्दित होते जाते हैं।

गुलजारीलाल—क्या आज फिर कुछ जहर उगला?

बदरीप्रसाद—कुछ न पूछिए, आज तो उन्होंने खुली-खुली गालियाँ दी हैं। हमसे तो अब यह बर्दाश्त नहीं होता।

गुलजारी—आखिर कोई कहाँ तक बर्दाश्त करे। मैंने तो इस अखबार का पढ़ना तक छोड़ दिया।

झम्मनलाल—भैया आपने अपनी समझ में बड़ा भारी काम किया। अभी आपका धर्म यह है कि इन लेखों को काटिए, उनका उत्तर दीजिए।

मैं आजकल एक कवित रच रहा हूँ उसमें मैं इसको ऐसा बनाता हूँ कि यह भी क्या याद करेंगे।

कमलाप्रसाद—बाबू मधुरराय ऐसे बखरोंके आदमी नहीं हैं कि आपके कवित्त कविताई से डर जायें। वह जिस ढंग से लिखते हैं उसे भी वे लिखते हैं।

ब्रजमल —हम भी आते थी वे उनके पीछे पड़ जायँगे। फिर देखें वह कैसे शहर में मुँह दिखाते हैं। यहाँ तो पुलिस तक से उनको डरा भगा के बदनाम कर दूँ।

कमला०—(और डेकर) यह कौन सी बहादुरी है। अगर आप लोग उनसे विरोध मोल लिया चाहते हैं तो धीर समझ कर कीजिए। उनके जैसा ही बनिए, उनको तरह से निकालिए, उनका जवाब लिखिए उनकी तरह देहातों में जा जाकर व्याख्यान दीजिए तब आपके मन कबेला। कई दिन हुए मैं उनसे एक बार दर्शन के लिए गया था कि एक गाँव में मैंने यह बात हजार आदमियों को बैठे देखी। मैं समझा बैठ हैं। मगर जब एक आदमी से पूछा तो मालूम हुआ कि बाबू मधुरराय का व्याख्यान था। और यह काम करके वहीं नहीं रहते कारिन्दे में कई होनहार लड़के उनके सहायक हो गये हैं और वह तो आप तौल सभी जानते हैं कि इधर कई महीने से उनको कलकत्ता बनामुख का रहा है।

बुलाकी —आप तो सलाह इस तरह देते हैं मानो आप गुरू कुछ न करेंगे।

कमला —न मैं इस काम में आपका शरीक नहीं हो सकता। मुझे मधुरराय के इस निकलने से मेल है, विरोध लिखना बिगाड़ है।

बदरीप्रसाद —(मुसकर) कहना कभी तुमको समझ न आयेगी। ऐसी बातें मुँह से मत निकाला करो।

ब्रजमल —(कमलाप्रसाद से) क्या आप लिखावट जाने के लिए तैयार हैं?

कमला —मैं इसमें कोई हानि नहीं समझता।

गुलजारी — (हँसकर) यह नये बिगड़े हैं। इनको अभी अस्पताल की हवा खिलाइए।

बदरीप्रसाद — (झल्लाकर) बच्चा तुम मेरे सामने से हट जाओ। मुझे रंज होता है।

कमलाप्रसाद को भी गुस्सा आ गया। वह उठकर जाने लगे कि दो-तीन आदमियों ने मनाया और फिर कुर्सी पर लाकर बिठा दिया। इसी बीच में मिस्टर शर्मा की सवारी आयी। आप वही उत्साही पुरुष हैं जिन्होंने अमृतराय को पक्की सहायता का वादा किया था। इनको देखते ही लोगों ने बड़े आदर से कुर्सी पर बिठा दिया। मिस्टर शर्मा उस शहर में मिउनिसिपैल्टी के सेक्रेटरी थे।

गुलजारी — कहिए पंडित जी क्या खबर है?

शर्मा — (मूँछों पर हाथ फेरकर) यह ताजा खबर लाया हूँ कि आप लोग सुनकर फड़क जायँगे। बाबू अमृतराय ने दरिया के किनारे वाली हरी-भरी जमीन के लिए दरखास्त की है। सुनता हूँ वहाँ एक अनाथालय बनवायेंगे।

बदरीप्रसाद — ऐसा कदापि नहीं हो सकता। कमलाप्रसाद! तुम आज उसी जमीन के लिए हमारी तरफ से कमेटी में दरखास्त पेश कर दो। हम वहाँ ठाकुरद्वारा और धर्मशाला बनवायेंगे।

शर्मा — आज अमृतराय साहब के बँगले पर गये थे। वहाँ बहुत देर तक बातचीत होती रही। साहब ने मेरे सामने मुसकराकर कहा — अमृतराय मैं देखूँगा कि जमीन तुमको मिले।

गुलजारीलाल ने सर हिलाकर कहा — अमृतराय बड़े भाग के आदमी हैं। मालूम होता है, साहब को पहले ही से उन्होंने अपने ढब पर लगा लिया है।

मिस्टर शर्मा — जनाब आपको मालूम नहीं अंग्रेजों से उनका कितना मेलजोल है। हमको अंग्रेज मेम्बरों से कोई आशा नहीं रखना चाहिए। यह सब के सब अमृतराय का पक्ष करेंगे।

बदरीप्रसाद — (जोर देकर) जहाँ तक मेरा बस चलेगा मैं यह जमीन

मैं आजकल एक कवित्त रच रहा हूँ जिसमें मैंने इसको ऐसा बनाया है कि वह भी क्या याद करेंगे।

कमलाप्रसाद—बाबू मथुरादास ऐसे आदमी नहीं हैं कि आपके कवित्त बनाने से डर जायें। वह जिस काम में लिपटते हैं बाद ही से लिपटते हैं।

मंगल —हम भी बातें की थी उनसे पीछे पड़ जायेंगे। फिर ऐसे वह कैसे शहर में मुँह दिखाते हैं। कहीं तो छुट्टी मिल के उनको घर से बहुत मैं बदनाम कर दूँ।

कमला —(और देखकर) यह कौन-सी बहादुरी है। अगर आप लोग उनसे विरोध मोल लिया चाहते हैं तो सोच-समझ कर कीजिए। उनके ऐबों को पकड़िए, उनकी शान में लिखिए, उनका बखान लिखिए, उनकी तरह बहादुरी से आ जाकर मुकाबला कीजिए तब जा के काम चलेगा। कई दिन हुए मैंने अपनी सवारी पर के बारे पाया था कि एक गाँव में मैंने वह बात कहा कि आदमियों को भेज दिया। कैसे उसका पैर है। मगर सब एक आदमी से पूछा तो मालूम हुआ कि बाबू कमलादत्त का आदमान था। और वह बात करने नहीं नहीं करते कालिज के नये होनहार लड़के उनके सहायक हो रहे हैं और वह भी सब लोग सभी जानते हैं कि शहर नये महीने से उनकी कलाल संस्थाएँ कर रही है।

पुजारी —अब तो सलाह इस तरह बैठे हैं जैसा आप गुरु हुए न करेंगे।

कमला०—न मैं इस काम में आपका शरीक नहीं हो सकता। मुझे मथुरादास के सब सिपाही से मेल है, सिवाय सिपाही विवाह के।

बदरीप्रसाद—(चपककर) बच्चा कभी तुमको समझ न आयेगी। ऐसी बातें मुँह से मत निकाला करो।

मंगल —(कमलाप्रसाद से) क्या आप सिलावत जाने के लिए तैयार हैं?

कमला —मैं इसमें कोई हानि नहीं समझता।

गुलजारी० — (हँसकर) यह नये बिगड़े हैं। इनको अभी अस्पताल की हवा खिलाइए।

बदरीप्रसाद — (मुस्कराकर) अच्छा तुम मेरे सामने से हट जाओ। मुझे रंज होता है।

कमलाप्रसाद को भी गुस्सा आ गया। वह उठकर जाने लगे कि दो-तीन आदमियों ने मनाया और फिर कुर्सी पर लाकर बिठा दिया। इसी बीच में मिस्टर शर्मा की सवारी आयी। आप वही उत्साही पुरुष हैं जिन्होंने अमृतराय को अपनी सहायता का वादा किया था। इनको देखते ही लोगों ने बड़े आदर से कुर्सी पर बिठा दिया। मिस्टर शर्मा उस शहर में मिउनिसिपैलिटी के सेक्रेटरी थे।

गुलजारी — कहिए पंडित जी क्या खबर है?

शर्मा — (मूँछों पर हाथ फेरकर) वह ताजा खबर लाया हूँ कि आप लोग सुनकर फड़क जायेंगे। बाबू अमृतराय ने दरिया के किनारे वाली हरी भरी जमीन के लिए दरख्वास्त की है। सुनता हूँ वहाँ एक अनाथालय बनवायेंगे।

बदरीप्रसाद — ऐसा कदापि नहीं हो सकता। कमलाप्रसाद! तुम आज उसी जमीन के लिए हमारी तरफ से कमेटी में दरख्वास्त पेश कर दो। हम वहाँ ठाकुरद्वारा और धर्मशाला बनवायेंगे।

शर्मा — आज अमृतराय साहब के बँगले पर गये थे। वहाँ बहुत देर तक बातचीत होती रही। साहब ने मेरे सामने मुसकराकर कहा — अमृतराय मैं देखूँगा कि जमीन तुमको मिले।

गुलजारीलाल ने सर हिलाकर कहा — अमृतराय बड़े चाल के आदमी हैं। मालूम होता है साहब को पहले ही से उन्होंने अपने ढंग पर लगा लिया है।

मिस्टर शर्मा — जनाब आपको मालूम नहीं अंग्रेजों से उनका कितना मेलजोल है। हमको अंग्रेज मेम्बरों से कोई आशा नहीं रखना चाहिए। वह सब के सब अमृतराय का पक्ष करेंगे।

बदरीप्रसाद — (जोर देकर) जहाँ तक मेरा बस चलेगा मैं यह जमीन

ही इंजीनियर ने उसको शाप कर अनाथालय का नक्शा बनाना आरम्भ कर दिया।

साहब और अमृतराय के चले जाने पर यहाँ तो बातें होने लगीं—

अमृत०—यार हमको तो इस कोठी के आस पास ही के कोई ... काम किया।

गुलजारी —अजब आप पाँव ही को ठौ रहे हैं यहाँ तो एक हजार पर पानी फिर गया। मुझी की तो ही बातें ... ही पक्की पायेंगे। यहाँ तो कोई रायबहादुरी को भी नहीं पूछता।

कमला —बड़े शोक की बात है कि आप लोग ऐसे शुभ काम में सहायता देकर पछताते हैं। अमृतराय को देखिए कि उन्होंने अपना एक लाख बेचकर दस हजार रुपया भी दिया और उस पर रोज खुद कमर कस कर रहे हैं।

मुंशी बदरीप्रसाद—अमृतराय बड़ा उत्साही आदमी है। मेरे बाप इसको जाना। बच्चा कमलाप्रसाद! तुम आज शाम को उनके यहाँ जाकर हमारी ओर से धन्यवाद दे देना।

कमला —(मुँह फेरकर) आप कहीं न झगड़ा ... हाँ आपकी तो पक्की मिलेगी न?

कमला —(हँसकर) अगर आपका यह कवित्त तैयार हो तो जरा सुनाइए।

राजनाथ जी अब तक चुपचाप बैठे हुए थे बोले—अब आप उनकी निन्दा करने की जगह उनकी प्रशंसा कीजिए।

मिस्टर वर्मा—बच्चों की हुआ सो हुआ अब इसका विश्लेषण कीजिए। आप यह मालूम हो गया कि अमृतराय बनके हम सब पर भारी है।

कमला —आपने नहीं सुना सब को मजा अब होगी है।

आज से कभी मन्दिर न आऊँगी

बेचारी पूर्णा पंडाइन, चौबाइन, बिजरगाइन आदि के चले जाने के बाद रोने लगी। वह सोचती थी कि हाय! अब मैं ऐसी मनहूस समझी जाती हूँ कि किसी के साथ बैठ नहीं सकती। अब लोगों को मेरी सूरत काटने दौड़ती है। अभी नहीं मालूम क्या-क्या भोगना बदा है। या नारायण! तू ही मुझ दुखिया का बेड़ा पार लगा। मुझ पर न जाने क्या कुमति सवार थी कि सिर में एक ठेस लगवा लिया। वह निगोड़े बाल न होते तो काहे को आज इतनी फजीहत होती। इन्हीं बातों की सुधि करते करते जब पंडाइन की यह बात याद आ गयी कि बाबू अमृतराय का रोज रोज आना ठीक नहीं तब उसने सिर पर हाथ मारकर कहा — वह जब आप ही आप आते हैं तो मैं कैसे मना कर दूँ। मैं तो उनका दिया खाती हूँ। उनके सिवाय अब मेरी सुधि लेनेवाला कौन है। उनसे कैसे कह दूँ कि तुम मत आओ। और फिर उनके आने में हरज ही क्या है। बेचारे सीधे-सादे भले मनुष्य हैं। कुछ नंगे नहीं, छिछोरे नहीं। फिर उनके आने में क्या हरज है। जब वह और बड़े आदमियों के घर जाते हैं तब तो लोग उनको आँखों पर बिठाते हैं। मुझ भिखारिनी के दरवाजे पर आवें तो मैं कौन मुँह लेकर उनको भगा दूँ। नहीं नहीं मुझसे ऐसा कभी न होगा। अब तो मुझ पर विपत्ति आ ही पड़ी है। जिसके जी में जो आवे कहे।

इन विचारों से छुट्टी पाकर वह अपने नियमानुसार गंगा स्नान को चली। जब से पंडित जी का देहान्त हुआ था तब से वह प्रतिदिन गंगा नहाने जाया करती थी। मगर मुँह अँधेरे जाती और सूर्य निकलते निकलते

कोट करती। साथ इस दिन पूर्णा को नहाने के जाने से देर हो गई।
सोती हुई गली होगी कि रास्ते में सेठानी जी की बहू से भेंट हो गई।
इसका नाम रामकली था। यह बेचारी दो साल से रँडापा भोग रही थी।
आयु १६ अथवा १७ साल से अधिक न होगी। वह अति सुन्दरी सब
शिख से सुडौल थी। गात ऐसा कोमल था कि देखनेवाले देखते ही रह
जाते थे। जवानी की उमंग मुखड़े से झलक रही थी। अगर पूर्णा पके
हुए आम के समान पीली हो रही थी तो वह गुलाब के फूल की भाँति
खिली हुई थी। न बाल में तेल था न आँखों में काजल। न माँग में सेंदुर
न दाँतों पर मिस्सी। मगर आँखों में वह चंचलता थी
और होंठों पर वह मनभावनी लाली थी कि जिसके बनावटी सिंगार की
जरूरत न रही थी। वह मटकती इधर-उधर ताकती मुस्कराती चली
जा रही थी कि पूर्णा को देखते ही ठिठक गई और बड़े मनोहर भाव से
हँसकर बोली—आओ बहिन आओ। तुम तो आज बड़ी देर
कर रही हो।

पूर्णा को यह हँस-हँस की बात बुरी मालूम हुई। मगर उसने बड़ी
नर्मी से जवाब दिया—क्या करूँ बहिन। मुझसे तो और तेज नहीं चला
जाता।

रामकली—पूर्णा, तुम कल हमारे घर आना। कई बूढ़ियों के साथ तुम्हारा
मन बहलता था। बल्कि मुझे बताने से कभी तक भी नहीं भरता। मुझसे
न कहो बहिन यह सब ऐसा कुछ देखती हूँ कि जी बहलता है। नहीं
और अगर यही हाल रहा तो एक न एक दिन कलेजा फट जायगा। सच कहती हूँ
मालूम होता है कि विवाह क्या था कि स्वप्न में भी जीवन का सुख न पाया।
हुआ। मेरा मुँह तो उनको देखना नसीब न हुआ। अब तमाम औरतों को तरह तरह के सिंगार किये
उसका मुँह भी नहीं देखा। ... जब हँसी खुशी चलते फिरते देखती हूँ तो छाती पर साँप लोटने लगता है।
हँसी खुशी ... देखती हूँ तो ...
जिसको क्या हो गई घर भर की लौंडी बना दी गई। जो काम कोई न करे
वह मैं करूँ। उस पर रोज उठते-बैठते कोसना। सास गाली देती हैं। देखो गालियाँ मत
... मत सजाओ। बाल मत गूँथो ...

पान मत खाओ। एक दिन एक गुलाबी साड़ी पहन ली तो चुड़ैल मारने उठी थी। जी में तो आया कि सर के बाल नोच लें मगर विष का घूँट पी के रह गयी और बहू तो बहू, उसकी बेटियाँ और दूसरी बहुएँ मुझसे कभी काटती फिरती हैं। भोर के समय कोई मेरा मुँह नहीं देखता। अभी पड़ोस में एक ब्याह पड़ा था। सब की सब गहने से लद लद गाती-बजाती गयीं। एक मैं ही अभागिनी घर में पड़ी रोती रही। भला बहिन अब कहाँ तक कोई छाती पर पत्थर रख ले। आखिर हम भी तो आदमी हैं। हमारी भी तो जवानी है। दूसरों का राग रंग हँसी चुहल देख-देख अपने मन में भी भावना होती है। जब भूख लगे और खाना न मिले तो हार कर चोरी करनी पड़ती है।

यह कहकर रामकली ने पूर्णा का हाथ अपने हाथ में ले लिया और मुसकुरा-मुसकुरा कर धीरे धीरे एक गीत गुनगुनाने लगी। बेचारी पूर्णा दिल में कुढ़ रही थी कि इसके साथ क्यों आयी। रास्ते में हजारों आदमी मिले। कोई इनकी ओर आँखें फाड़ फाड़ घूरता था कोई इन पर बोलियाँ बोलता था। मगर पूर्णा सर को ऊपर न उठाती थी। हाँ रामकली मुसकुरा-मुसकुरा कर बड़ी चपलता से इधर-उधर ताकती आँखें मिलाती और छेड़-छाड़ का जवाब देती जाती थी। पूर्णा जब रास्ते में मर्दों को खड़े देखती तो कतरा के निकल जाती मगर रामकली बरबस उनके बीच में से घुसकर निकलती थी। इसी तरह चलते चलते दोनों नदी के तट पर पहुँचीं। आठ बज गया था। हजारों मर्द, स्त्रियाँ बच्चे नहा रहे थे। कोई पूजा कर रहा था। कोई सूर्य देवता को पानी दे रहा था। माली छोटी-छोटी डालियों में गुलाब बेला चमेली के फूल लिये नहानेवालों को दे रहे थे। चारों ओर जै गंगा! जै गंगा! का शब्द हो रहा था। नदी बाढ़ पर थी। उस मटमैले पानी में तैरते हुए फूल अति सुन्दर मालूम होते थे। रामकली को देखते ही एक पंडे ने कहा — इधर सेठानी जी इधर। पंडा जी महाराज पीताम्बर पहने तिलक-मुद्रा लगाये आसन मारे चन्दन रगड़ने में जुटे थे। रामकली ने उसके स्थान पर जाकर धोती और कमंडल रख दिया।

पंडा—(पूछकर) यह तुम्हारे साथ कौन है?

राम०—(आँखें मटकाकर) कोई होगी तुमसे मतलब। तुम कौन होते हो पूछनेवाले?

पंडा—जरा नाम सुन के कान खुश कर लें।

राम—यह मेरी बहन हैं। इनका नाम पूर्णा है।

पंडा—(हँसकर) ओहो हो। कैसा अच्छा नाम है। है भी तो पूर्ण चन्द्रमा के समान। धन्य भाग्य है कि ऐसे यजमान का दर्शन हुआ।

इतने में एक दूसरा पंडा काले काले दाँत निकाले कंधे पर कुछ रखे नशे में चूर, मुसक्या-मुसक्याकर का घूरा और इन दोनों अबलाओं की ओर घूर कर बोला—अरे रामदेई आज तेरे संग का रत्न बहुत बोला है।

रामदेई—तेरी बला काहे को बूझे है। प्रेम की सूझी जाती है अब जा के ऐसा बोला रह गया।

पंडा—तेरे भाग्य को क्या है। यह रतन (रामकली की तरफ देखकर) तो इसे पहले ही रंग देखा था। परन्तु यह सत्कामिनि (पूर्णा की तरफ इशारा करके) के सामने तो उसकी शोभा ही जाती रही।

पूर्णा तो यह नोक-झोंक सुन सुन कर झेंपी जाती थी। मगर रामकली का मुख खिला जाता था। तनिक मटका कर बोली—ऐसे कलमुँहों को बाँधे ही सत्कामिनि मिला करता है।

रामदेई—(पंडा से) अरे तू इन बातों का मर्म क्या जाने। ऐसों ही अपने घर में बहुत हैं। एक के गुलाम हैं तो इससे भी रत्न हैं।

पूर्णा मन में बहुत लज्जित थी कि इसके साथ कहाँ फँस गयी। जब तक वो बड़ा घाटे पर पहुँची होगी। रामकली से बोली—बहिन नहाना हो तो नहाओ, मुझको देर होती है। अगर तुमको देर हो तो मैं चली जाऊँ।

रामदेई—नहीं बहनजी। अभी तो बहुत सवेरा है। आनन्द पूर्वक स्नान करो।

पूर्णा ने चादर उतार कर धर दी और साड़ी लेकर नहाने के लिए उतरना चाहती थी कि यकायक बाबू अमृतराय एक सादा कुर्ता पहने,

धानी टोपी सर पर रक्खे हाथ में नापने का फीता लिये चंद ठीकेदारों के साथ आते दिखायी दिये। उनको देखते ही पूर्णा ने एक लंबी घूँघट निकाल ली और चाहा कि सीढ़ियों पर उतर जाऊँ। मगर लाज ने उसके पैरों को वहीं बाँध लिया। बाबू साहब को सीढ़ियों की लम्बाई चौड़ाई नापना था क्योंकि वह एक पक्का घाट बनवा रहे थे। वह पूर्णा के निकट ही खड़े हो गये। और कागज पेंसिल पर कुछ लिखने लगे। लिखते-लिखते जब उन्होंने कदम बढ़ाया तो पैर सीढ़ी के नीचे जा पड़ा। करीब था कि वह औंधे मुँह गिरें और चोट चपेट आ जाय कि पूर्णा ने झपट कर उनको सँभाल लिया। बाबू साहब ने चौंककर देखा तो पहिला हाथ एक सुन्दरी के कोमल हाथों में है। जब तक पूर्णा अपना घूँघट बढ़ावे वह उसको पहचान गये और बोले — प्यारी आज तुमने मेरी जान बचा ली।

पूर्णा ने इसका कुछ जवाब न दिया। इस समय न जाने क्यों उसका दिल जोर जोर से धड़क रहा था और आँखों में आँसू भरा आता था। 'हाय! नारायन जो कहीं वह आज गिर पड़ते तो क्या होता' यही उसका मन बेर बेर कहता। मैं भले संयोग से आ गयी थी। वह सिर नीचा किये गंगा की लहरों पर टिकटिकी लगाये यही बातें सोचती रही। जब तक बाबू साहब खड़े रहे, उसने उनकी ओर एक बेर भी न ताका। जब वह चले गये तो रामकली मुसकराती हुई आयी और बोली — बहिन आज तुमने बाबू साहब को गिरते गिरते बचा लिया। आज से तो वह और भी तुम्हारे पैरों पर सिर रक्खेंगे।

पूर्णा — (कड़ी निगाहों से देखकर) रामकली ऐसी बातें न करो। आदमी आदमी के काम आता है। अगर मैंने उनको जरा सँभाल लिया तो इसमें क्या बात अनोखी हो गयी।

रामकली — ए लो! तुम तो जरा सी बात पर खिसिया गयीं।

पूर्णा — अपनी अपनी रुचि है। मुझको ऐसी बातें नहीं भातीं।

रामकली — अच्छा अपराध क्षमा करो। अब सर्कार से दिल्लगी न करूँगी। चलो तुलसीदल ले लो।

पूर्णा — नहीं अब मैं यहाँ न ठहरूँगी। सूरज माथे पर आ गया।

रामकली—अब तक इधर-उधर की बहुत अच्छा है। घर पर तो अपने संस्कारों के सिवाय और कुछ नहीं।

अब दोनों नहाकर निकलीं तो फिर पंडों ने घेरना चाहा मगर गुन्नी एक दम भी न रुकी। आखिर रामकली ने भी उनका साथ छोड़ना उचित न समझा। दोनों थोड़ी दूर चली होंगी कि रामकली ने कहा—क्यों बहिन पूजा करके न चलोगी?

गुन्नी—नहीं बहन मुझे बहुत देर हो जायगी।

राम॰—आज तुम्हें चलना पड़ेगा। लौटकर देखो तो कैसी बिहार की जगह है। अगर दो-चार दिन भी आओ तो फिर बिना नित्य आये भी न मानो।

गुन्नी—तुम आज मैं न मानोगी। जी नहीं मानता।

राम —चलो चलो बहुत झिझको मत। हम भी हम से तो कोई बाघ है।

रास्ते में एक सन्यासी की कुटिया पड़ी। फाटक के पहले पर सुफेद मोर हुए बने थे। बड़ पर भाँति भाँति के गमले मधुमालती की खूबसूरत लिखियाँ गुलाब की क्यारियाँ रंग-बिरंगे फूलों की बेलें छा रही थीं। सामने ही बड़े बड़े बालटेवार बाहिर बैठे हुए थे। मकानों में एक सन्यासी बड़ा भारी था। सन्यासी एक दरवाज़ा बना था। मस्त पर दोपहरी दरी बिछाकर बैठे थे। बगल में एक बैठा हुआ था। उसके सिर पर मोर के लोगों की लाड़ियाँ। कौन थे दोनों सुफेद पानी उठाकर पगड़ी बाँधे पर पान की सुहारी लगी। यह दोनों लियों को देखते ही बोला—ठकुरानी जी पान लाली आज।

रामकली ने उन रस से बाहर लपकना ही और फिर उनको एक अनुपम भाव से मुस्कुराते हुए नमस्ते में बोली—कभी प्रकार नहीं पाया।

गुन्नी—बाबी। बाबी। यह भी तो प्रताप ही है। सन्यासी के हाथ की और प्रसाद से बढ़कर होती है। यह बात तुम्हारे साथ कौन सनातन है?

राम —यह हमारी सखी है।

बन्तोली—बहुत अच्छा जोड़ा है। आज भाग्य का दर्शन हुआ।

रामकली दूकान पर ठमक गयी और शीशे में देख-देख अपने बाल सँवारने लगी। उधर पनवाड़ी ने चाँदी के वरक लपेटे हुए बीड़े फुरती से बनाये और रामकली की तरफ हाथ बढ़ाया। जब वह लेने को मुड़ी तो उसने अपना हाथ खींच लिया और हँसकर बोला—तुम्हारी सखी ले तो दें।

राम —मुँह बनवा आओ मुँह! (पान लेकर) लो सखी पान खाव।

पूर्णा—मैं न खाऊँगी।

राम —तुम्हारी क्या कोई सास बैठी है जो कोसेगी। मेरी तो सास मना करती है। मगर मैं उस पर भी प्रतिदिन खाती हूँ।

पूर्णा—तुम्हारी आदत होगी मैं पान नहीं खाती।

राम —आज मेरी खातिर से खाव। तुम्हें कसम है।

रामकली ने बहुत हठ की मगर पूर्णा ने गिलौरियाँ न लीं। पान खाना उसने सदा के लिए त्याग दिया था। इस समय तक धूप बहुत तेज हो गयी थी। रामकली से बोली—किधर है तुम्हारा मन्दिर? वहाँ चलते चलते तो साँझ हो जायगी।

राम —अगर ऐसे दिन कटा जाता तो फिर रोना काहे का था।

पूर्णा चुप हो गयी। उसको फिर बाबू अमृतराय के पैर फिसलने का ध्यान आ गया और फिर मन में यह प्रश्न किया कि कहीं आज वह गिर पड़ते तो क्या होता। इसी सोच में थी कि निदान रामकली ने कहा—लो सखी, आ गया मन्दिर।

पूर्णा ने चौंककर दाहिनी ओर जो देखा तो एक बहुत ऊँचा मन्दिर दिखायी दिया। दरवाजे पर दो बड़े बड़े पत्थर के शेर बने हुए थे। और सैकड़ों आदमी भीतर जाने के लिए धक्कम धक्का कर रहे थे। रामकली पूर्णा को इस मन्दिर में ले गयी। अन्दर जाकर क्या देखती है कि पक्का चौड़ा आँगन है जिसके सामने से एक अँधेरी और सँकरी गली देवी जी के धाम को गयी है। दाहिनी ओर एक बारादरी है जो अति उत्तम रीति पर सजी हुई है। यहाँ एक युवा पुरुष पीला रेशमी कोट पहने सर पर खूबसूरत

पुजारी रंग की गद्दी बैठे तकिया मसनद लगाये बैठा है। देवस्थान बना हुआ है। अगलबगल पानदान और नाना प्रकार की सुन्दर वस्तुओं से सारा कमरा सजित हो रहा है। उस युवा पुरुष के सामने एक सुन्दर कामिनी सिंगार किये विराज रही है। उसके इधर उधर तम्बूरा बजाते बैठे हुए स्वर मिला रहे हैं। ठेकुआ आदमी बैठे और तबले बजा रहे हैं। पुजारी ने एक तान छेड़ा तो चौंककर बोली—सखी यह तो तानपूरा-सा मालूम होता है। कुछ नहीं मुंह तो नहीं नहीं?

राम —(मुस्कराकर) चुप! ऐसा भी कोई कहता है। यहीं तो श्री जी का मंदिर है। यह राजवंशी के महल भी बैठे हैं। देखो तो कैसा रंगीला समाज है। राज कुमार हैं, हर कुछ भी यहाँ रामजी का नाम होता है।

इस बीच में एक ऊँचा आदमी आता दिखायी दिया। कोई ८० बरस का रहा था। गोरा चिट्टा बालों में कमी सी हुई मुंह पान से भरे, माथे पर त्रिपुंड लगाये बदन में बड़े बड़े दानों का रुद्राक्ष की माला पहने कंधे पर एक रेशमी दोपट्टा डाले बड़ी बड़ी और लाल आँखों से इधर उधर ताकता हुआ दोनों सिपाहियों के बगल बाजू बना हो गया। रामजी ने उसकी तरफ ध्यान से देखकर कहा— क्यों बाबा इसकदर? कुछ घबराये-घबराये नहीं बताया?

राम —तुम्हारी जागीर अब हाजिर है। पहले बताकर नाम तो लेवो। यह राजवंशी जागीर के पुजारी नहीं है। महल भी तैयार होते हैं। एक हजार रुपया इनाम में मुझे है।

रामजी ने यह सुनके ही पुजारी का हाथ पकड़ा और राजवंशी की ओर चली। बेचारी पुजारी जाना न चाहती थी। मगर वहाँ सबके सामने इन्कार करते भी बन न पड़ता था। जाकर एक किनारे खड़ी हो गयी। ठेकुआ बोलते जाती थी। एक से एक सुन्दर गहने पहने हुए। सब के सब थे जिनके एक से एक बढ़कर, उत्तम कपड़े पहने हुए। सब के सब एक ही से जिनसे मुझे रहते थे। आपस में बोलियाँ बोली जाती थीं और जिनकी बातें थीं। नहीं नहीं थे, नये औरतों थे। यह बेतरतीब पूजा को न भाया। उसका

हिम्मत न हुई कि भीड़ में घुसे। वह एक कोने में बाहर ही रुक गयी। मगर रामकली अन्दर घुसी और वहाँ कोई आध घण्टे तक उसने खूब गुलछर्रे उड़ाये। जब वह निकली तो पसीने में डूबी हुई थी। तमाम कपड़े मसल गये थे।

पूर्णा ने उसे देखते ही कहा—क्यों बहिन पूजा कर चुकीं? अब भी घर चलोगी या नहीं?

राम०—(मुस्कराकर) अरे, तुम बाहर खड़ी रह गयीं क्या? जरा अन्दर चलके देखो क्या बहार है? ईश्वर जाने कंचनी गाती क्या है दिल मसोस लेती है।

पूर्णा—दर्शन भी किया या इतनी देर केवल गाना ही सुनती रहीं।

राम —दर्शन करने आती है मेरी बला। यहाँ तो दिल बहलाने से काम है। दस आदमी देखे दस आदमियों से हँसी-दिल्लगी की, चलो मन आस हो गया। आज इन्द्रदत्त ने ऐसा उत्तम प्रसाद बनाया है कि तुमसे क्या बखान करूँ?

पूर्णा—क्या है चरणामृत?

राम —(हँसकर) हाँ चरणामृत में बूटी मिला दी गयी है।

पूर्णा—बूटी कैसी?

राम —इतना भी नहीं जानती हो, बूटी भंग को कहते हैं।

पूर्णा—ऐं! तुमने भंग पी ली!

राम —यही तो प्रताप है देवी जी का। इसके पीने में क्या हर्ज है। सभी पीते हैं। कहो तो तुमको भी पिलवाऊँ।

पूर्णा—नहीं बहिन मुझे क्षमा करो।

इधर यही बातें हो रही थीं कि दस पन्द्रह आदमी बारादरी से आकर इनके आसपास खड़े हो गये।

एक—(पूर्णा की तरफ घूरकर) अरे यारो यह तो कोई नया स्वरूप है।

दूसरा—जरा बच के चलो, बचकर।

इतने में किसी ने पूर्णा के कंधे में धीरे से एक ठोका दिया। अब वह

बेचारी बड़े फेर में पड़ी। जिधर देखती है आदमी ही आदमी दिखाई देते हैं। कोई इधर से हँसता है, कोई उधर से आवाज़ें कसता है। रामकली हैरान खड़ी है। कभी बाहर को खिसकती है, कभी दायें को सँभालती है। एक आदमी ने उससे पूछा — देहाती का यह कौन है?

रामकली — यह मेरी बहू है, यहाँ दर्शन करने को आयी थी।

दूसरा — इन्हें अवश्य लाया करो। भी हो। कैसा खिलता हुआ रंग है।

बारे किसी तरह इन आदमियों से छुटकारा हुआ। पूर्णा घर की ओर भागी और कान पकड़े कि आज से कभी मंदिर न आऊँगी।

कुछ और बातचीत

पूर्णा ने कान पकड़े कि अब मन्दिर कभी न जाऊँगी। ऐसे मन्दिरों पर दई का कोप भी नहीं पड़ता। उस दिन से वह सारे दिन घर ही पर बैठी रहती। समय काटना पहाड़ हो जाता। न किसी के यहाँ आना न जाना। न किसी से भेंट न मुलाक़ात। न कोई काम न धंधा। दिन कैसे कटे। पढ़ी लिखी तो अवश्य थी मगर पढ़े क्या। दो-चार किस्से-कहानी की पुरानी किताबें पंडित जी की सन्दूक में पड़ी हुई थीं मगर उनकी तरफ़ देखने को मन भी नहीं चाहता था। कोई ऐसा न था जो बाज़ार से उसके पढ़ने के लिए किताबें लाये। बिल्लो बेचारी दूसरे सौदे तो बाज़ार से लाती मगर वह किताबों का मोल क्या जाने। दो एक बार जी में आया कि कोई पुस्तक प्रेमा के घर से मँगवाये। मगर फिर कुछ समझकर चुप हो रही। बेल-बूटे बनाना उसको आते ही न थे कि उससे जी बहलाये हाँ सीना आता था। मगर सीये किसके कपड़े। नित्य इस तरह बेकाम बैठे रहने से वह हरदम कुछ उदास-सी रहा करती। हाँ कभी-कभी पंडाइन और चौबाइन अपने बेटे बापड़ों के साथ आकर कुछ सिखावन की बातें सुना जाती थीं। मगर जब कभी वह कहतीं कि बाबू अमृतराय का आना ठीक नहीं तो पूर्णा साफ़ साफ़ कह देती कि मैं उनको आने से नहीं रोक सकती और न कोई ऐसा बर्ताव कर सकती हूँ जिससे वह समझें कि मेरा आना इसको बुरा लगता है। सच तो यह है कि पूर्णा के हृदय में अब अमृतराय के लिए प्रेम का अङ्कुर जमने लगा था। यद्यपि वह अभी तक यही समझती थी कि अमृतराय यहाँ दया की राह से आया करते हैं। मगर नहीं मालूम क्यों वह उनके आने

ना एक एक दिन गिना करती। और जब इतवार आता तो सबेरे ही से उनके स्वागत की तैयारियाँ होने लगतीं। बिल्लो बड़े श्रम से सारा मकान साफ करती। कुर्सियाँ और तस्वीरों पर से छः दिन की जमी हुई धूल-मिट्टी दूर करती। पूर्णा खुद भी अच्छे और साफ कपड़े पहनती। अब उसके दिल में आप ही आप बनाव सिंगार करने की इच्छा होती थी। मगर दिल को रोकती। जब बाबू अमृतराय आ जाते तो उसका मलिन मुख कमल की तरह खिल जाता। उसकी प्यारी सूरत और भी अधिक प्यारी मालूम होने लगती। जब तक बाबू साहब रहते उसे ऐसा मालूम होता। वह इसी कोशिश में रहती कि ऐसी क्या बात करे जिससे वह प्रसन्न होकर घर को जावें। बाबू साहब भी पूर्णा की ऐसी बात न कहते जिससे पूर्णा दुःखित हो। बाबू साहब उसे कुछ उदास देखते तो वह कुछ दिलासा देते। जाहिर है कुछ देर और बैठते। इसी तरह कभी-कभी बाबू साहब बड़ी रात गये जाते। जब विदा हो सब उधर वह दरवाज़े पर खड़ी रहती। वह पूर्णा जी उनकी मन में कौन-सी बात खटकती। यह समय उसके नाज-नखरे की तरह था जो आँख में चुभती ही जिसका कारण नहीं है।

एक बात पूर्णा को अब मालूम होने लगा कि मेरे दिल में उनकी मुहब्बत समाती जाती है और उनका दिल भी मेरी मुहब्बत से खाली नहीं। क्या एक बार भी पूर्णा पहले से ज्यादा उदास रहने लगी। हाय! जी और मन! क्या एक बार प्रीति लगाने से मेरा जी नहीं भरा जो तू फिर यह रोग पाल रहा है। तुझे कुछ मालूम है कि इस रोग की औषध क्या है? जब तू यह जानता है तो फिर क्यों किस आशा पर यह स्नेह बढ़ा रहा है और बाव बढ़ाता। तुमको क्या करना मंजूर है? तुम क्या करने पर तुले हो? क्या तुम नहीं जानते कि यह अग्नि लगी तो फिर तुम्हारे जी में क्या है? मुझमें ऐसा कौन-सा गुण है। कहाँ की बड़ी सुन्दरी हूँ बुझाये न बुझेगी।

जो तुम प्रेमा प्यारी प्रेमा जो लगाये देते हो। वह बेर बेर मुझको बुलाती है। तुम्हीं बताओ, कौन मुँह लेकर उसके पास जाऊँ और तुम तो आग लगाकर दूर से तमाशा देखोगे। इसे बुझायेगा कौन? बेचारी पूर्णा इन्हीं विचारों में डूबी रहती। बहुत चाहती कि अमृतराय का खयाल न आने पावे मगर कुछ बस न चलता।

अपने दिल का परिचय उसको एक दिन यों मिला कि बाबू अमृतराय नियत समय पर नहीं आये। थोड़ी देर तक तो वह उनकी राह देखती रही मगर जब वह अब भी न आये तब तो उसका दिल कुछ मसोसने लगा। बड़ी व्याकुलता से दौड़ी हुई दरवाजे पर आयी और आध घण्टे तक कान लगाये खड़ी रही फिर भीतर आयी और मन मारकर बैठ गयी। चित्त की कुछ यही अवस्था होने लगी जो पंडित जी के दौरे पर जाने के वक्त हुआ करती। शंका हुई कि कहीं बीमार तो नहीं हो गये। महरी से कहा — बिल्लो जरा देखो तो बाबू साहब का जी कैसा है? नहीं मालूम क्यों मेरा दिल बैठा जाता है। बिल्लो लपकी हुई बाबू साहब के बँगले पर पहुँची तो ज्ञात हुआ कि वह आज दो-तीन नौकरों को साथ लेकर बाजार गये हुए हैं। अभी तक नहीं आये। पुराना बूढ़ा कहार आधी टाँगों तक धोती बाँधे सर हिलाता हुआ आया और कहने लगा — बेटा बड़ा खराब जमाना आया है। हजार का सउदा होय तो दुइ हजार का सउदा होय तो हमहीं लै आवत रहेन। आज खुद आप गये हैं। भला इतने बड़े आदमी का अस चाहत रहा। बाकी फिर उह अँग्रेजी जमाना आया है। अँग्रेजी पढ़ पढ़ के धरम न हो जाय तउन अचरज नाहीं। बिल्लो बूढ़े कहार के सर हिलाने पर हँसती हुई घर को लौटी। इधर जब से वह गयी थी पूर्णा की विचित्र दशा हो रही थी। विकल हो-होकर कभी भीतर जाती कभी बाहर आती। किसी तरह चैन ही न आता। जान पड़ता कि बिल्लो के आने में देर हो रही है, कि इतने में जूते की आवाज सुनायी दी। वह दौड़ कर द्वार पर आयी और बाबू साहब को टहलते हुए पाया तो मानो उसको कोई धन मिल गया। झटपट भीतर से किवाड़ खोल दिये। कुर्सी रख दी और चौखट पर सर नीचा करके खड़ी हो गयी।

कमलाप्रसाद—बिल्लो कहीं गयी है क्या?

पूर्णा—(काँपते हुए) हाँ आप ही के यहाँ तो गयी है।

कमल०—मेरे यहाँ कब गयी? क्या कुछ जरूरत थी?

पूर्णा—आपके आने में विलम्ब हुआ तो मैंने समझा शायद आज भी न आवें। उसको देखने के लिए भेजा।

कमल०—(प्यार से देखकर) बीमारी चाहे कैसी ही हो वह मुझे यहाँ आने से नहीं रोक सकती। जरा बाजार चला गया था। वहाँ देर हो गयी।

यह कहकर उन्होंने एक बड़े जोर से पुकारा 'दुलाई' अन्दर आओ और दो आदमी कमरे में दाखिल हुए। एक के हाथ में एक बन्डल था और दूसरे के हाथ में तह किये हुए कपड़े। सब सामान चौकी पर रख दिया गया। बाबू साहब बोले—पूर्णा मुझे पूरी आशा है कि तुम यह दो चार मामूली चीजें लेकर मुझे कृतार्थ करोगी। (हँसकर) यह तेल है बालों का फुलेल है।

पूर्णा [illegible]। यह क्या। यह तो फिर वही [illegible] वाली बनी हो। और इनके लिए आप ही बाजार गये थे। [illegible] कमलाप्रसाद। तुम्हारे लिए मैं जो [illegible] हूँ। मेरे दिल में जो है वह तुम भी जानती हो। मगर इसका [illegible]? [illegible] चीजों को [illegible] लाती थी। जब तक [illegible] की थी। मगर जब पहनने को कोई कपड़ा न था। उसने सोचा था कि अब की जब बाबू साहब के यहाँ से मासिक तनखाह मिलेगी तो दो मामूली साड़ियाँ लेगी। अब यह क्या आया। पहिले तो यह किसी बनारसी और रेशमी साड़ियों का ढेर लग जायगा। उसे यह क्या मालूम था कि बीच ही में भेद कर कि मेरा इस तरह इन चीजों पर [illegible] उचित नहीं है, वह अलग हट गयी और बोली—बाबू साहब। इस अनुग्रह के लिए मैं आपको धन्यवाद देती हूँ मगर यह भारी भारी जोड़े मेरे किस काम के। मेरे लिए मोटी सादी साड़ियाँ चाहिए। मैं इन्हें पहनूँगी तो कोई क्या कहेगा।

अमृतराय—तुमने ले लिया मेरी मेहनत ठिकाने लगी और मैं कुछ नहीं जानता।

इतने में बिल्लो पहुँची और कमरे में बाबू साहब को देखते ही निहाल हो गयी। जब चीजों पर दृष्टि पड़ी और इन चीजों को देखा तो बोली—क्या इनके लिए आप बाजार गये थे। बूढ़ा कहार रो रहा था कि मेरी दस्तूरी मारी गयी।

अमृतराय—(हँसी दबाकर) यह सब कहार मेरे नौकर हैं। मेरे लिए बाजार से चीजें लाते हैं। तुम्हारे सर्कार का मैं चाकर हूँ।

बिल्लो यह सुनकर मुसकुराती हुई भीतर चली गई। पूर्णा के कान में भी भनक पड़ गयी थी। बोली—उल्टी बात न कहिए। मैं तो खुद आपकी चेरियों की चेरी हूँ।

इसके बाद इधर-उधर की कुछ बातें हुईं। माघ-पूस के दिन थे सर्दी खूब पड़ रही थी। बाबू साहब देर तक न बैठ सके और आठ बजते बजते वह अपने घर को सिधारे। उनके चले जाने के बाद पूर्णा ने जो सन्दूक खोला तो दंग रह गयी। स्त्रियों के सिंगार की सब सामग्रियाँ मौजूद थीं और जो चीज थी सुन्दर और उत्तम थी। आइना कंघी सुगन्धित तेलों की शीशियाँ भाँति भाँति के इत्र हाथों के कंगन गले का चन्द्रहार, जड़ाऊ चूड़ियाँ एक रुपहला पानदान लिखने-पढ़ने के सामान से भरी एक सन्दूकची किस्से-कहानी की किताबें इनके अतिरिक्त और भी बहुत-सी चीजें बड़ी उत्तम रीति से सजाकर धरी हुई थीं। कपड़ों का बेठन खोला तो अच्छी से अच्छी साड़ियाँ दिखायी दीं। शर्बती धानी गुलाबी उन पर रेशम के बेल-बूटे बने हुए। चादरें भारी सुनहरे काम की। बिल्लो इन चीजों को देख फूली न समाती थी। बोली—बहू! यह सब चीजें तुम पहनोगी तो रानी हो जाओगी—रानी।

पूर्णा—(गिरी हुई आवाज में) कुछ भंग खा गयी हो क्या बिल्लो! मैं यह चीजें पहनूँगी तो जीती गड़ूँगी। चौबाइन और सेठानी ताने दे-देकर जान ले लेंगी।

बिल्लो—तो क्या हुआ? कोई दिल्लगी है। इसमें उसके बाप का क्या इजारा। कोई उससे कुछ माँगने जाता है।

मुन्नी ने महरी को आश्चर्य की आँखों से देखा। यही बिल्लो है जो कभी दो बरस पहले बीमारी और फ़ाक़ाकशी से सम्पति करती थी और मुझे टेर-टेर पहनने-ओढ़ने से तंग रहती थी। अचानक यह क्या कायापलट हो गयी।

बीबी—कुछ बताओ न। कहते भी तो लाज है।

बिल्लो—मैं यह सोचा ही करती हूँ कि इसलिए वह बातें पढ़ना करो। अब बाबू साहब बोली बेर के लिए पहल किया।

मुन्नी (झुँझलाकर)—वह किताब रटके मुझसे उनके सामने स्वीकार निकला जायगा। मुझे याद है, एक बेर क्या मैं करे बात भी लिये थे। मुझसे क्या कहूँ। जब दिन वह मेरी तरह ऐसा ताकते थे जैसे कोई किसी पर आफ़त करे। नहीं मालूम क्या बात है कि जब दिन से वह कब कभी मेरी ओर देखते हैं तो मेरी छाती धक-धक करने लगती है। मुझसे आँख-मूँदकर फिर ऐसी भूल न होगी।

बिल्लो—वह उनकी मरजी ऐसी ही है तो फिर क्या करोगी? यहीं बीबी के लिए कल वह बाजार गये थे। उनके नौकर-चाकर हैं मगर इन्हें लाकर लाये। तुम उनको न पहचानोगी तो वह किस से क्या कहें।

मुन्नी—(आँखों में आँसू भरकर) बिल्लो! बाबू नामुराद नहीं मालूम क्या करनेवाले हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि क्या करूँ। वह मुझसे दिन दिन अधिक प्रेम बढ़ाते जाते हैं और मैं उनसे दिन को क्या बातें करूँ, मुझसे कहते नहीं बनता। न जाने ईश्वर को क्या मंज़ूर है।

बिल्लो ने इसका कुछ जवाब न दिया। मुन्नी ने भी उस दिन खाना न बनाया। शाम ही से जाकर चारपाई पर पड़ रही। दूसरे दिन सुबह को उठकर उसने वह किताबें पढ़नी शुरू कीं जो बाबू साहब लाये थे। ज्यों-ज्यों वह पढ़ती उसको ऐसा मालूम होता कि कोई बैठी ही दुख की कहानी कह रहा है। इसके पढ़ने में जो जी लगा तो दूसरी बातों की सुध जाती रही। सारा दुपहरा उसने पढ़ने ही में काटा। आखिर फिर दरबार का दिन

आया। दिन निकलते ही बिल्लो ने हँसकर कहा—आज बाबू साहब के आने का दिन है।

पूर्णा—(अनजान बनकर) फिर?

बिल्लो—आज तुमको जरूर जरूर गहने पहनने पड़ेंगे।

पूर्णा—(दबी आवाज से) आज तो मेरे सर में पीड़ा हो रही है।

बिल्लो—नौज तुम्हारे बैरी का सर दर्द करे। इस बहाने से पीछा न छूटेगा।

पूर्णा—और जो किसी ने मुझे ताना दिया तो तुम जानना।

बिल्लो—ताना कौन रांड देगी।

सबेरे ही से बिल्लो ने पूर्णा का बनाव-सिंगार करना शुरू किया। महीनों से सर न मला गया था। आज सुगन्धित मसाले से मला गया तेल डाला गया कंघी की गयी बाल गूँथे गये और जब तीसरे पहर को पूर्णा ने गुलाबी कुर्ती पहनकर उस पर रेशमी काम की धानी साड़ी पहनी गले में हार और हाथों में कंगन सजाये तो सुन्दरता की मूर्ति मालूम होने लगी। आज तक कभी उसने ऐसे रत्न-जटित गहने और बहुमूल्य कपड़े न पहने थे। और न कभी ऐसी सुघर मालूम हुई थी। वह अपने मुखारविन्द को आप देख देख कुछ प्रसन्न भी होती थी कुछ लजाती भी थी और कुछ सोच भी करती थी। जब सांझ हुई तो पूर्णा कुछ उदास हो गयी। तिस पर भी उसकी आँखे दरवाजे पर लगी हुई थीं और वह चौंक चौंक कर ताकती थी कि कहीं अमृतराय तो नहीं आ गये। पाँच बजते बजते और दिनों से सबेरे बाबू अमृतराय आये। कमरे में बैठे बिल्लो से कुशलानन्द पूछा और ललचायी हुई आँखों से अन्दर के दरवाजे की तरफ ताकने लगे। मगर वहाँ पूर्णा न थी कोई दस मिनट तक तो उन्होंने चुपचाप उसकी राह देखी मगर जब अब भी न दिखायी दी तो बिल्लो से पूछा—क्यों महरी आज तुम्हारी सर्कार कहाँ है?

बिल्लो—(मुसकुराकर) घर ही में तो हैं।

अमृत—तो आयीं क्यों नहीं। क्या आज कुछ नाराज हैं क्या?

बिल्लो—(हँसकर) उनका मन जाने।

मधुर —ज़रा आकर लिटा जाओ। मगर मालूम हो तो बताकर समझाऊँ।

वह मुस्कराकर लिल्ली हँसती हुई बाहर गई और पूर्णा से बोली—बहू उठोगी या वह आप ही मनाने आते हैं।

पूर्णा—लिल्ली तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ, जाकर कह दो, बीमार हैं।

लिल्ली—बीमारी का बहाना करोगी तो वह डाक्टर को लेके चले आवेंगे।

पूर्णा—अच्छा कह दो, सो रही है।

लिल्ली—तो क्या वह जगाने न आयेंगे?

पूर्णा—अच्छा लिल्ली तुम ही कोई बहाना कर दो जिससे मुझे जाना न पड़े।

लिल्ली—मैं जाकर कहे देती हूँ कि वह आपको बुलाती हैं।

पूर्णा को कोई बहाना न मिला। वह उठी और कमरे के द्वार पर जाकर घूँघट निकाले [illegible] एक हाथ में [illegible] लिये दरवाजे पर आकर खड़ी हो गयी। मधुरदास ने देखा तो [illegible] आ गये। [illegible] एक [illegible] तो वह इस तरह [illegible] बैठे—[illegible] है।

पूर्णा—(लजाती हुई) आप कुशल से हैं?

मधुर —(खिड़की खिलाड़ी से हँसकर) अब तक तो कुशल से था, मगर अब कुशल नहीं नज़र आती।

पूर्णा समझ गयी मधुरदास की दबी बातों का आशय जैसे तैसे वह बोली से निकल ही गयी थी। बोली—आपने किसे का क्या इलाज,

मधुर —क्या किसी की आज है?

पूर्णा ने लजाकर मुँह फेर लिया। बाबू साहब हँसने लगे और पूर्णा को तरह प्यार की निगाहों से देखा। उनकी रसिक बातें उसको बहुत कुछ काल तक और देखी ही रहा यहाँ कहाँ होती रहीं। पूर्णा को इस बात की सुधि भी न थी कि मेरा इस तरह बोलना-चालना मेरे लिए उचित नहीं है। उसको इस समय न बदनामी का डर था न पड़ोसियों का भय। बातों ही बातों

में उसने मुसकुराकर अमृतराय से पूछा—आपको आजकल प्रेमा का कुछ समाचार मिला है?

अमृत—नहीं पूर्णा मुझे इधर उनकी कुछ खबर नहीं मिली। हाँ इतना जानता हूँ कि बाबू दाननाथ से ब्याह की बातचीत हो रही है।

पूर्णा—बाबू दाननाथ तो आपके मित्र हैं?

अमृत—मित्र भी हैं और प्रेमा के योग्य भी हैं।

पूर्णा—यह तो मैं न मानूँगी। उनका जोड़ है तो आप ही से है। हाँ आपका ब्याह भी तो कहीं ठहरा था?

अमृत—हाँ कुछ बातचीत तो हो रही थी।

पूर्णा—कब तक होने की आशा है?

अमृत—देखें अब कब भाग्य जागता है। मैं तो बहुत जल्दी मचा रहा हूँ।

पूर्णा—तो क्या उधर ही से खिंचाव है। आश्चर्य की बात है।

अमृत—नहीं पूर्णा मैं जरा भाग्यहीन हूँ। अभी तक सिवाय बातचीत होने के और कोई बात तय नहीं हुई।

पूर्णा—(मुसकुराकर) मुझे अवश्य नेवता दीजिएगा।

अमृत—तुम्हारे ही हाथों में तो सब कुछ है। अगर तुम चाहो तो मेरे सर सेहरा बहुत जल्द बँध जाय।

पूर्णा चौंक होकर अमृतराय की ओर देखने लगी। उनका आशय अब की बार भी वह न समझी। बोली—मेरी तरफ से आप निश्चिन्त रहिए। मुझसे जहाँ तक हो सकेगा उठा न रखूँगी।

अमृत—इन बातों को याद रखना पूर्णा ऐसा न हो भूल जाओ तो मेरे सब अरमान मिट्टी में मिल जायँ।

यह कहकर बाबू अमृतराय उठे और चलते समय पूर्णा की ओर देखा। उसकी आँखें डबडबायी हुई थीं मानो विनय कर रही थीं कि जरा देर और बैठिए। मगर अमृतराय को कोई जरूरी काम था धीरे से उठ खड़े हुए और बोले—जी तो नहीं चाहता कि यहाँ से जाऊँ। मगर आज कुछ काम ही ऐसा आ पड़ा है। यह कहा और चल दिये। पूर्णा खड़ी रोती रह गई।

नवाँ अध्याय

तुम सचमुच आतुर हो

नौ बजे रात का समय है। पूर्णा बैठे-बैठे करते में बालकनी पर बैठी हुई करवटें बदल रही है और सोच रही है आखिर वह मुझसे क्या चाहते हैं? मैं तो उनसे कह चुकी कि जहाँ तक मुझसे हो सकेगा आपका कार्य सिद्ध करने में कोई बात उठा न रखूँगी। फिर वह मुझसे कितना प्रेम बढ़ाते हैं। क्यों मेरे सर पर पाप की गठरी लादते हैं। मैं उनकी इस मोहनी सूरत को देखकर बेबस हुई जाती हूँ।

मैं कैसे दिल को समझाऊँ? वह तो प्रेम रस पीकर मतवाला हो रहा है। ऐसा कौन होगा जो उनकी चातुरी बातें सुनकर रीझ न जाय? हाय कैसा कोमल स्वभाव है। आँखें कैसी रस से भरी हैं। मानो हृदय में घुसी जाती हैं।

आज वह और दिनों से अधिक प्रसन्न थे। कैसा वह हँसकर मेरी ओर ताकते थे। आज उन्होंने मुझे दो-तीन बार प्यारी पूर्णा कहा। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या करने वाले हैं? नारायण। वह मुझसे क्या चाहते हैं। इस मोहब्बत का अन्त क्या होगा।

यही सोचते-सोचते जब उसका ध्यान परिणाम की ओर गया तो मारे डर के पसीना आ गया। आप ही आप बोल उठी।

न न। मुझसे ऐसा न होगा। अगर यही व्यवहार उनका रहा तो मेरे लिए सिवाय जान दे देने के और कोई उपाय नहीं है। मैं ज़हर खाकर सो रहूँगी। नहीं नहीं मैं भी कैसी पागल हो गयी हूँ। क्या वह कोई ऐसे वैसे आदमी हैं। ऐसा सज्जन पुरुष भी संसार में न होगा।

मगर फिर यह प्रेम मुझसे क्यों छिपाते हैं। क्या मेरी परीक्षा लिया चाहते हैं। बाबू साहब! ईश्वर के लिए ऐसा न करना। मैं तुम्हारी परीक्षा में पूरी न उतरूंगी।

पूर्णा इसी उधेड़-बुन में पड़ी थी कि नींद आ गयी। सवेरा हुआ। अभी नहाने जाने की तैयारी कर रही थी कि बाबू अमृतराय के आदमी ने आकर बिल्लो को जोर से पुकारा और उसे एक बंद लिफाफा और एक छोटी सी सन्दूकची देकर अपनी राह लगा। बिल्लो ने तुरन्त आकर पूर्णा को यह चीजें दिखायीं।

पूर्णा ने कांपते हुए हाथों से खत लिया। खोला तो यह लिखा था —

'प्राणप्यारी से अधिक प्यारी पूर्णा!

'जिस दिन से मैंने तुमको पहले पहल देखा है उसी दिन से तुम्हारे रसीले नैनों के तीर का घायल हो रहा हूँ और अब घाव ऐसा दुखदायी हो गया है कि सहा नहीं जाता। मैंने इस प्रेम की आग को बहुत दबाया। मगर अब वह जलन असह्य हो गयी है। पूर्णा! विश्वास मानो, मैं तुमको सच्चे दिल से प्यार करता हूँ। तुम मेरे हृदय कमल के कोष की मालिक हो। उठते-बैठते तुम्हारा मुसकुराता हुआ चित्र आंखों के सामने फिरा करता है। क्या तुम मुझ पर दया न करोगी? मुझ पर तरस न खाओगी? प्यारी पूर्णा! मेरी विनय मान जाओ। मुझको अपना दास अपना सेवक बना लो। मैं तुमसे कोई अनुचित बात नहीं चाहता। नारायण! कदापि नहीं। मैं तुमसे शास्त्रीय रीति पर विवाह करना चाहता हूँ। ऐसा विवाह तुमको अनोखा मालूम होगा। तुम समझोगी यह धोखे की बात है। मगर सत्य मानो अब इस देश में ऐसे विवाह कहीं-कहीं होने लगे हैं। मैं तुम्हारे विरह में मर जाना पसंद करूँगा मगर तुमको धोखा न दूंगा।

'पूर्णा! नहीं मत करो। मरी पिछली बातों को याद करो। अभी कल ही जब मैंने कहा कि 'तुम चाहो तो मेरे सर बहुत जल्द सेहरा बंध सकता है। तब तुमने कहा था कि मैं भर शक्ति कोई बात उठा न रखूंगी। अब अपना वादा पूरा करो। देखो मुकर 'मत जाना।

इस पत्र के साथ मैं एक बहुत कंगन भेजता हूँ। शाम को मैं तुम्हारे दर्शन को आऊँगा। अगर यह कंगन तुम्हारी कलाई पर दिखाई दिया तो समझ जाऊँगा कि मेरी विनय मान ली गयी। अगर नहीं तो फिर तुम्हें मुँह न दिखाऊँगा।

तुम्हारी सेवा का अभिलाषी
कमलाप्रसाद।

पूर्णा ने बड़े गौर से इस पत्र को पढ़ा और सोच के अथाह समुद्र में गोते खाने लगी। अब यह गुत्थी खुली। महाशय ने यहाँ बैठकर यह पाखंड रचा। इस धूर्तता को देखो कि मुझसे बैठे-बैठे कहते हैं कि तुम्हारे ही ऊपर मेरा विवाह ठीक करने का बोझ है। मैं भोली क्या जानूँ कि इनके मन में क्या बात समायी है। मुझसे विवाह का नाम लेते उनको लाज नहीं आती। अगर सुहागिन बनना भाग में बदा होता तो विधवा काहे को होती। मैं अब इनको क्या जवाब दूँ। अगर किसी दूसरे ने यह बातें लिखी होतीं तो उसका कभी मुँह न देखती। मैं क्या प्रेमा से कम ही हूँ? ऐसी बातें लिखते हैं, विवाह करेंगे। क्या उनसे सुन्दर हूँ? फिर यह क्या समझकर मुझसे विवाह करने चाहते हैं? वह मन समझते होंगे कि मैं उनका दर्शन पाया करूँ। यह मुझे अपने पर रख्खा चाहते हैं। मगर ऐसा मुझसे कदापि न होगा। मैं तो रहता ही चाहती हूँ कि कभी कभी उनकी मोहनी मूरत का दर्शन पाया करूँ। कभी उनकी रसीली बतियाँ सुना करूँ और उनका कुशल आनन्द सुना करूँ। बस। उनकी पत्नी बनने की मेरे जोग में नहीं है। क्या हमदर्द हूँ कि उनकी सूरत मन बसी है। मैं इसी पर उनका ध्यान हुआ करता है। पर मोह के मन में आकर मुझसे ऐसा भारी पाप करते करते बाल बचे हैं। मगर इसमें उन बेचारे का दोष नहीं है। वह भी अपने न किया जायगा। नहीं मालूम क्यों मुझ अभागिनी में उनका प्रेम बस गया। दिन में हरि हुए हैं। नहीं मालूम क्यों सुख मनाती थी मैं उनका प्रेम कम न हो सकी। इस सहृदय देवता का पद कम कर दैवेंगी उनको लड़की देने में अपनी बहनों न हो सकी। मगर ईश्वर को न जाने क्या मंजूर था कि उनकी प्रीति मुझसे लगा दी। जाय। आज ही सांझ को वह आवेंगे। मेरी कलाई पर कंगन न देखेंगे तो

दिल में क्या कहेंगे? कहीं आना-जाना त्याग दें तो मैं बिन मारे मर जाऊँ। अगर उनका चित्त जरा भी मेरी ओर से मोटा हुआ तो अवश्य जहर खा लूँगी। अगर उनके मन में जरा भी मैल आया जरा भी निगाह बदली तो मेरा जीना कठिन है।

बिल्लो पूर्णा के मुखड़े का चढ़ाव-उतार बड़े गौर से देख रही थी। जब वह खत पढ़ चुकी तो उसने पूछा—क्या लिखा है बहू?

पूर्णा—(मलिन स्वर में) क्या बताऊँ क्या लिखा है?

बिल्लो—क्यों कुशल तो है?

पूर्णा—हाँ सब कुशल ही है। बाबू साहब ने आज नया स्वाँग रचा।

बिल्लो—(अचंभे से) वह क्या?

पूर्णा—लिखते हैं कि मुझसे

उससे और कुछ न कहा गया। बिल्लो समझ गयी। मगर वहीं तक पहुँची जहाँ तक उसकी बुद्धि ने मदद की। वह अमृतराय की बढ़ती हुई मुहब्बत को देख-देखकर दिल में समझे बैठी हुई थी कि वह एक न एक दिन पूर्णा को अपने घर अवश्य डालेंगे। पूर्णा उनको प्यार करती है उन पर जान देती है। वह पहले बहुत हिचकिचायगी मगर अन्त में मान ही जायगी। उसने सैकड़ों रईसों को देखा था कि बाम्नों कहारियों महाराजिनों को घर डाल लिया था। अब की भी ऐसा ही होगा। उसे इसमें कोई बात अनोखी नहीं मालूम होती थी कि बाबू साहब का प्रेम सच्चा है मगर बेचारे सिवाय इसके और कर ही क्या सकते हैं कि पूर्णा को घर डाल लें। देखा चाहिए कि वह मानती है या नहीं। अगर मान गयी तो जब तक जियेंगी, सुख भोगेंगी। मैं भी उनकी सेवा में एक टुकड़ा रोटी पाया करूँगी और जो कहीं इनकार किया तो किसी का निबाह न होगा। बाबू साहब ही का सहारा ठहरा। जब वही मुँह मोड़ बैठे तो फिर कौन किसको पूछता है।

इस तरह ऊँच-नीच सोचकर उसने पूर्णा से पूछा—तुम क्या जवाब दोगी?

पूर्णा—जवाब! ऐसी बातों का भी भला कहीं जवाब होता है। भला विधवाओं का कहीं ब्याह हुआ है और वह भी ब्राह्मण का क्षत्रिय से।

इस तरह की बात कहानियों में उन किताबों में पढ़ी थीं जो वह मुझे दे गये हैं। मगर ऐसी बात कहीं सुनने नहीं देखने में आयी।

सिल्लो समझी थी कि बाबू साहब उसको कर डालनेवाले हैं। अब ब्याह का नाम सुना तो घबरा कर बोली — क्या ब्याह करने को कहते हैं?

पूर्णा — हाँ।

सिल्लो — तुमसे?

पूर्णा — यही तो आश्चर्य है।

सिल्लो — अचरज का अचरज है। भला ऐसा कहीं हुआ है। बाल पक गये मगर ऐसा ब्याह नहीं देखा।

पूर्णा — सिल्लो, यह सब बहाना है। उनका मतलब मैं समझ गयी।

सिल्लो — यह तो बुरी बात है।

पूर्णा — ऐसा मुझसे न होगा। मैं जान दे दूँगी पर ऐसा न करूँगी।

सिल्लो — बहू, उनका इसमें कुछ दोष नहीं है। वह बेचारे तो अपने दिल से हारे हुए हैं। क्या करें।

पूर्णा — हाँ सिल्लो, उनको नहीं मालूम क्यों मुझसे कुछ मुहब्बत हो गयी है और मेरे दिल का हाल तो तुमसे छिपा नहीं। मगर वह मेरी जान माँगें तो मैं खुशी से दे दूँगी। ईश्वर जानता है, उनके जरा से इशारे पर मैं अपने को निछावर कर सकती हूँ। मगर जो बात वह चाहते हैं मुझसे न होगी। उसको सोचती हूँ तो मेरा कलेजा काँपने लगता है।

सिल्लो — हाँ, बात तो ऐसी ही है, सुना

पूर्णा — मगर क्या महात्माओं में ऐसा कभी होता है? नहीं। हाँ नीच जातियों में बनाते होंगे सब कुछ लगता है।

सिल्लो — बहू, बड़ा तो सब है। मगर तुम इनकार करोगी तो उनका दिल टूट जायगा।

पूर्णा — यही डर तो मुझे भी मारे डालता है। मगर इनकार न करूँ तो क्या करूँ। यह तो मैं भी जानती हूँ कि वह मुँह-सब ब्याह कर लेंगे। ब्याह क्या करेंगे ब्याह का नाम करेंगे। मगर सोचो तो दुनिया क्या कहेगी। कौन मुँह से बदनाम कर रहे हैं, तब तो न जाने और भी क्या-क्या कहेंगे

जायेंगे। मैं उनको मुँह दिखाने योग्य नहीं रहूँगी। बस यही एक उपाय है कि जान दे दूँ। न रहे बाँस न बजे बाँसुरी। उनको दो-चार दिन तक रंज रहेगा आखिर भूल जायेंगे। मेरी तो इज्जत बच जायगी।

बिल्लो — (बात पलट कर) इस सन्दूकचे में क्या है?

पूर्णा — खोल कर देखो।

बिल्लो ने जो उसे खोला तो एक कीमती कंगन रुई मखमल में लपेट कर धरा था और सन्दूक में से संदल की सुगन्ध आ रही थी। बिल्लो ने उसको निकाल लिया और चाहा कि पूर्णा के हाथ में पहनाय कि उसने हाथ खींच लिया और आँखों में आँसू भर कर बोली — मत बिल्लो, इसे मत पहनाओ। सन्दूक में बंद करके रख दो।

बिल्लो — जरा पहनो तो देखो कैसा अच्छा मालूम होता है।

पूर्णा — कैसे पहनूँ। यह तो इस बात का सूचक हो जायगा कि मुझ उनकी बात मंजूर है।

बिल्लो — क्या यह भी इस चीठी में लिखा है?

पूर्णा — हाँ लिखा है कि मैं आज शाम को आऊँगा और अगर कलाई पर कंगन देखूँगा तो समझ जाऊँगा कि मेरी बात मंजूर है।

बिल्लो — क्या आज ही शाम को आएँगे?

पूर्णा — हाँ।

यह कहकर पूर्णा ने सिर नीचा कर लिया। नहाने कौन जाता है। खाने-पीने की किसको सुध है। दोपहर तक चुपचाप बैठी सोचा की। मगर दिल ने कोई बात निर्णय न की। हाँ, ज्यों-ज्यों शाम का समय निकट आता था त्यों-त्यों उसका दिल धड़कता जाता था कि उनके सामने कैसे आऊँगी। वह मेरी कलाई पर कंगन न देखेंगे तो क्या कहेंगे? कहीं रूठ कर चले न जायँ? वह कहीं रिसा गए तो उनको कैसे मनाऊँगी? मगर तबियत का कायदा है कि जब कोई बात उसको अति लौलीन करनेवाली होती है तो थोड़ी देर के बाद वह उससे भागने लगती है। पूर्णा से अब सोचा भी न जाता था। माथे पर हाथ धरे मौन साधे चिन्ता की चित्र बनी दीवार की ओर ताक रही थी। बिल्लो भी मन मारे बैठी हुई थी। तीन बजे होंगे कि यकायक

ने ऊँ॰ किया। आँखों से आँसू भी बहने लग गये। बिल्लो ने कहा—बहू
हम बोलती हूँ चलो चलो बिलवें उनकी भी आखिरी ही बात।
यह कहकर उसने नाम से उठती हुई पूर्णा का हाथ पकड़ कर उठाया।
और वह घूँघट निकाल कर, आँसू पोंछती हुई सवति कमरे की तरफ चली।
बिल्लो ने देखा कि उसके हाथों में कम्प नहीं है। वह सचमुच उठा आयी
और पूर्णा का हाथ पकड़ कर चाहती थी कि कमरे लिया है। मगर पूर्णा ने
हाथ झटक कर छुड़ा लिया और दम भी रुक के ठेलके में भीतरी दरवाजे
पर जाके वहीं रो रही थी। उसकी दोनों आँखें लाल थीं और गाले आँसुओं
की रेखाएँ गालों पर बनी हुई थीं। पूर्णा ने घूँघट उठाकर सब रस से भरी
हुई आँखों से उसकी ओर ताका। दोनों की आँखें चार हुईं। अमृतराय केवल
होकर बढ़े। झिझकती हुई पूर्णा का हाथ पकड़ लिया और बड़ी दीनता से
बोले—पूर्णा! ईश्वर के लिए मुझ पर दया करो।

उनके मुँह से और कुछ न निकला। कलेजा न कहा तैं गया और वह
सर नीचा किये हुए बयान के दरियाव में बहे हो गये। बेचारी पूर्णा का
पैंरे उनके हाथ से छूट गया। उनके रोते रोते कलेजा पर अमृतराय के कम
पर रख दिया। कुछ कहना चाहा मगर मुँह से आवाज न निकली। अमृत
राय जान गये कि अब देवी प्रसन्न हो गयी। उन्होंने आँखों से इशारे से
बिल्लो से कमरा सँवरवाया। पूर्णा को मारे से कुर्सी पर बिठा दिया। वह
जरा भी न झिझकी। उनके हाथों से कमल निकाले पूर्णा ने जरा भी हाथ
न खींचा। तब अमृतराय ने साहस करके उनके हाथों को चूम लिया और
उनकी आँखें प्रेम से मग्न होकर जगमगाने लगीं। रोती हुई पूर्णा ने मोहब्बत
भरी निगाहों से उनकी ओर देखा और बोली—प्यारे अमृतराय! तुम
सचमुच आदमी हो।

दसवाँ अध्याय

विवाह हो गया

यह आँखों देखी बात है कि बहुत करके झूठी और बे-सिर-पैर की बातें आप ही आप फैल जाया करती हैं। तो भला जिस बात में सच्चाई लेशमात्र भी मिली हो उसको फैलते कितनी देर लगती है। चारों ओर यही चर्चा थी कि अमृतराय उस विधवा ब्राह्मणी के घर बहुत आया-जाया करते हैं। सारे शहर के लोग कसम खाखा कर कहते थे कि इन दोनों में कुछ साँठ-गाँठ जरूर है। कुछ दिनों से पंडाइन और चौबाइन आदि ने भी पूर्णा के बनाव-चुनाव पर नाक भौं चढ़ाना छोड़ दिया था। क्योंकि उनके विचार में अब वह ऐसे बन्धनों की बाधी न थी। जो लोग विद्वान् थे और हिन्दुस्तान के दूसरे देशों के हाल जानते थे उनको इस बात की बड़ी चिन्ता थी कि कहीं यह दोनों नियोग न कर लें। हजारों आदमी इस घात में थे कि अगर कभी रात को अमृतराय पूर्णा की ओर जाते पकड़ जायें तो फिर लौट कर घर न जाने पावें। अगर कोई अभी तक अमृतराय की नीयत की सफाई पर विश्वास रखता था तो वह प्रेमा थी। वह बेचारी विरहाग्नि में जलते जलते कांटा हो गई थी मगर अभी तक उनकी मुहब्बत उसके दिल में वैसी ही बनी हुई था। उसके दिल में कोई बैठा हुआ कह रहा था कि तेरा विवाह उनसे अवश्य होगा। इसी आशा पर उसके जीवन का आधार था। वह उन लोगों में थी जो एक ही बार दिल का सौदा चुकाते हैं।

आज पूर्णा से वचन लेकर बाबू साहब बंगले पर पहुँचने भी न पाये थे कि यह खबर एक कान से दूसरे कान फैलने लगी और शाम होते होते सारे शहर में यही बात गूँजने लगी। जो कोई सुनता उसे पहले तो विश्वास

र के लिए उन्हें सब में शाप किया। कस्बे के अधिक बड़का उनको
गुर्गों के बारे में था कि कहीं यह सब गुट उठे न कोई हानि पहुँचायें।
उन्हीं सब कस्बे पहिला ईंगाई पर सवार होकर कप्तान मजिस्ट्रेट के
मेला में उपस्थित हुए और उनमें पूरा पूरा बन्दोबस्त कहा। बाबू साहब
का कस्बों में बहुत मान था। इसलिए नहीं कि वह जुलाहों के या
अफसरों की पूजा किया करते थे किन्तु इसलिए कि वह अपनी मर्यादा
रखना आप जानते थे। साहब ने उनका बड़ा आदर किया। उनकी बातें
बड़े ध्यान से सुनीं। धार्मिक सुधार की आवश्यकता को माना और
पुलिस के सुपरिन्टेन्डेन्ट को लिखा कि आप बाबू अमृतराव की रक्षा के
वास्ते एक गारद रवाना कीजिए और स्वयं ठहर कर देखिए कि मारपीट खून
खराबा न होने पाये। कोई हठी हठी तौल लिक्खाड़ियों का एक भारी बदनाम आदमी गुर्गों के
साहब के मकान पर पहुँच गया जिसके लिए भेजे गये।
मकान की हिफ़ाज़त करने के लिए बाबू साहब ऐसा ऐसा प्रबन्ध कर रहे थे।
शहरवालों ने जब देखा कि मुंशी स्टेशनमास्टर अपने महाजनों को लेकर
है तो और भी सम्भालें।
मजिस्ट्रेट के पास पहुँचे और पुकारें मचाईं कि अगर यह विवाह ठीक न
किया गया तो शहर में बड़ा उपद्रव होगा और बलवा हो जाने का डर
है। अगर साहब समझते हैं कि यह लोग बिलकुल कर अमृतराव को हानि
पहुँचाना चाहते हैं। मुंशी जी ने कहा कि अगर किसी आदमी की जाति-
विवाह से भिन्न डालना नियम के विरुद्ध समझती है। तब तक कि उन
काम से किसी दूसरे मनुष्य को कोई दुःख न हो। यह इतना था जवाब
पाकर मुंशी जी बहुत लज्जित हुए। वहाँ से जब चुपकर मकान पर आये
और अपने महाजनों के साथ बैठकर फैसला किया कि अभी ही बारात
निकले। उसी दम पचास आदमी उस पर हुए नहीं। पुलिसवालों की भी
खबर है और कमलाराव को भी इतने-घमंडी होकर पर है।
बाबू अमृतराव के लिए यह समय बहुत नाजुक था। मगर वह
देश का हितैषी तन मन धन से इस सुधार के काम में लगा हुआ था।
विवाह का दिन आज से एक सप्ताह पीछे नियत किया गया। क्योंकि

ज्यादा विलम्ब करना उचित न था और यह सात दिन बाबू साहब ने ऐसी हैरानी में काटे कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। प्रतिदिन वह दो कांस्टेबिलों के साथ पिस्तौलों की जोड़ी लगाये दो बेर पूर्णा के मकान पर आते। वह बेचारी मारे डर के मरी जाती थी। वह अपने को बार-बार कोसती कि मैंने क्यों उनको आशा दिलाकर यह जोखिम मोल ली। अगर इन दुष्टों ने कहीं उन्हें कोई हानि पहुँचाई तो वह मेरी ही नादानी का फल होगा। यद्यपि उसकी रक्षा के लिए कई सिपाही नियत थे मगर रात-रात भर उसकी आँखों में नींद न आती। पत्ता भी खड़कता तो चौंककर उठ बैठती। जब बाबू साहब सबेरे आकर उसको ढारस देते तो जाकर उसके जान में जान आती।

अमृतराय ने चिट्ठियाँ तो इधर-उधर भेज ही दी थीं। विवाह के तीन चार दिन पहले से मेहमान आने लगे। कोई मुम्बई से आता था कोई मदरास से कोई पंजाब से और कोई बंगाल से। बनारस में सामाजिक सुधार के विरोधियों का बड़ा जोर था और सारे भारतवर्ष के रिफ़ार्मरों के जी से लगी हुई थी कि चाहे जो हो बनारस में सुधार के चमत्कार फैलाने का ऐसा अपूर्व समय हाथ से न जाने देना चाहिए। वह इतनी दूर दूर से इसीलिए आते थे कि सब काशी की भूमि में रिफ़ार्म की पताका अवश्य गाड़ दें। वह जानते थे कि अगर इस शहर में यह विवाह हो तो फिर इस सूबे के दूसरे शहरों के रिफ़ार्मरों के लिए रास्ता खुल जायगा। अमृतराय मेहमानों की आवभगत में लगे हुए थे। और उनके उत्साही चेले साफ़-सुथरे कपड़े पहने स्टेशन पर जा-जाकर आदरपूर्वक लाते और उन्हें सजे हुए कमरों में ठहराते थे। विवाह के दिन तक यहाँ कोई डेढ़ सौ मेहमान जमा हो गये। अगर कोई मनुष्य सारे आर्यावर्त की सभ्यता स्वतन्त्रता उदारता और देशभक्ति को एकत्रित देखना चाहता था तो इस समय बाबू अमृतराय के मकान पर देख सकता था। बनारस के पुरानी लकीर पीटनेवाले लोग इन तैयारियों और ऐसे प्रतिष्ठित मेहमानों को देख-देख दाँतों उँगली दबाते। मुंशी बदरीप्रसाद और उनके सहायकों ने कई बेर धूम धाम से जल्से किये और हर बेर यही बात तय हुई कि

चाहे जो हो मास्टर शहर की जाय। विवाह के पहले शाम को बाबू अमरनाथ अपने साथियों को लेकर पूर्णा के मकान पर पहुँचे और वहाँ उनको बरातियों के आदर-सम्मान का प्रबन्ध करने के लिए ठहरा दिया। इसके बाद पूर्णा के पास गये। उनको देखते ही उसकी आँखों से आँसू भर आये।

अमृत०—(पास से बैठकर) प्यारी पूर्णा रोओ मत। ईश्वर चाहेगा तो कोई हमारा बाल भी बाँका न कर सकेगा। तुम कोई ऐसा काम नहीं कर रही है जिसको समझदार आदमी बुरा कह सकें। कल जो बरात यहाँ आयेगी वैसी आज तक इस शहर में किसी के दरवाजे पर न आयी होगी।

पूर्णा—मगर मैं क्या करूँ। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि कल जरूर मारपीट होगी। चारों ओर से यह खबर सुन सुन मेरा जी आधा हो रहा है। इस समय भी मुहल्ले की कई यहाँ जमा हैं।

अमृत—प्यारी तुम इन बातों को जरा भी ध्यान में न लाओ। मुझे तो ऐसे बकते महीनों से हो रहे हैं और बका करेंगे। इनका क्या डर। तुम दिल को मजबूत रक्खो। बस यह रात और बीच है। कल प्यारी पूर्णा मेरे घर पर होगी। अहा! वह मेरे लिए कैसे आनन्द का समय होगा।

पूर्णा यह सुनकर अपना सर झुका गयी। बाबू साहब को प्यार की निगाहों से देखा और जब चलने लगे तो उनके गले से लिपट कर बोली—बचे, अकेले इन दुष्टों से बचे रहना।

अमृतराय ने उसे छाती से लगा लिया और समझा-बुझाकर अपने मकान को रवाना हुए।

पहर रात गये पूर्णा के मकान पर कई पंडित रेशमी जामा पहने गले में फूलों का हार डाले आये और विधिपूर्वक लक्ष्मी की पूजा करने लगे। पूर्णा सोलहों सिंगार किये बैठी हुई थी। चारों तरफ लैम्प की रोशनी से दिन के समान प्रकाश हो रहा था। कान्स्टेबिल दरवाजे पर टह थे। दरवाजे का मैदान साफ किया जा रहा था और शामि

किया जा रहा था। कुर्सियाँ लगायी जा रही थीं। फर्श बिछाया गया गमले सजाये गये। सारी रात इन्हीं तैयारियों में कटी और सबेरा होते ही बरात अमृतराय के घर से चली।

बरात क्या थी सभ्यता और स्वाधीनता की चलती-फिरती तसवीर थी। न बाजे का धड़ धड़ पड़ पड़ न बिगुलों की पों पों पों पों, न पालकियों का झुर्मुट, न सजे हुए घोड़ों की चिल्लपों, न मस्त हाथियों का रेलपेल न सोटे-बल्लमबरदारों की कतार, न फुलवाड़ी न बगीचे बल्कि भले मानुषों की एक मंडली थी जो धीरे धीरे कदम बढ़ाती चली जा रही थी। दोनों तरफ वर्दी पुलिस के आदमी वर्दियाँ डाटे सोटे लिये खड़े थे। सड़क के इधर उधर झुंड के झुंड आदमी लम्बी लम्बी लाठियाँ लिये एकत्र थे और बरात की ओर देख देख दांत पीसते थे। मगर पुलिस का वह रोब था कि किसी को चूँ करने का भी साहस नहीं होता था। बरातियों से पचास कदम की दूरी पर रिजर्व पुलिस के सवार हथियारों से लैस घोड़ों पर रान पटरी जमाये भाले चमकाते और घोड़ों को उछालते चले जाते थे। तिस पर भी सबको यह खटका लगा हुआ था कि कहीं पुलिस के भय का वह तिलिस्म टूट न जाय। यद्यपि बरातियों के चेहरे से घबराहट लेशमात्र भी न पायी जाती थी तथापि दिल सबके धड़क रहे थे। जरा भी खटपट होती तो सबके कान खड़े हो जाते। एक बेर दुष्टों ने सचमुच धावा कर ही दिया। चारों ओर हलचल मच गयी। मगर उसी दम पुलिस ने भी डबल मार्च किया और दम की दम में कई फसादियों की मुश्कें कस लीं। फिर किसी को उपद्रव मचाने का साहस न हुआ। सारे किसी तरह घंटे भर में बरात पूर्णा के मकान पर पहुँची। यहाँ पहले ही से बरातियों के शुभागमन का सामान किया गया था। आँगन में फर्श लगा हुआ था। कुर्सियाँ धरी हुई थीं और बीचोंबीच में कई पूज्य ब्राह्मण हवनकुण्ड के किनारे बैठकर आहुति दे रहे थे। हवन की सुगन्ध चारों ओर उड़ रही थी। उस पर मंत्रों के मीठे मीठे मध्यम और मनोहर स्वर जब कान में आते तो दिल आप ही आप उछलने लगता। जब सब बराती बैठ गये तब उनके माथे पर केसर और चन्दन मला गया। उनके गलों में हार डाले गये और

बाबू अमरराय पर सब बारातियों ने पुष्पों की वर्षा की। इसके पीछे वर मकान के भीतर गया और वहाँ विधिपूर्वक विवाह हुआ। न गीत गाये गये न गाली गलौज की नौबत आयी न बेकार का ऊधम मचा। भीतर तो शादी हो रही थी बाहर हजारों आदमी लाठियाँ और डंडे लिए कुछ मचा रहे थे। पुलिसवाले उनको रोके हुए मकान के सीढ़ियें खड़े थे। इसी बीच में पुलिस का कप्तान भी आ पहुँचा। कप्तान आते ही हुक्म दिया कि भीड़ हटा दी जाय। और उसी दम पुलिसवालों ने सोंटे से मार मार कर इस भीड़ को हटाना शुरू किया। कभी पुलिस ने डराने के लिए बन्दूकों की दो-चार बारें हवा में फैर कर दीं। अब क्या था चारों ओर भगदड़ मच गयी। कोई एक पर एक गिरने लगे। मगर ठीक उसी समय ठाकुर बीरेन्दर सिंह हाथ में पिस्तौल लिये … लाला को कोहनी … दिखायी दिये। उनकी मूँछें खड़ी थीं। आँखों से अंगारे बरस रहे थे। उनको देखते ही वह लोग भी फिर-फिर हो रहे थे फिर इकट्ठा होने लगे। कैसे इधर को देखकर भागती हुई सेना बस वक्त के। देखते ही देखते हजार आदमी से अधिक इकट्ठे हो गये। और तलवार के धनी ठाकुर ने एक बार कड़क कर कहा — मैं पुलिस की को। वहीं खड़े रहो … किसी की … सबक … रहा। … एक दम … और सब के सब … उठाये हुए आगे की बढ़े। वहाँ पुलिसवाले भी डटे … चारों ओर भयानक सन्नाटा छाया हुआ था। मालूम होता था कि अब कोई दम में लहू की नदी बहा चाहती है। कप्तान ने जब इस बात को अपने ऊपर आते देखा तो अपने सिपाहियों को ललकारा और कहा … मैदान में आकर सवारों को उभारने लगा कि एकाएक पिस्तौल की आवाज आयी और कप्तान की टोपी जमीन पर गिर पड़ी। मगर बाल बाँका न हुआ। कप्तान ने देख लिया था कि यह पिस्तौल बीरेन्दर सिंह ने भर दी है। उसने भी झट अपनी बन्दूक सँभाली और निशाना … था कि धाँय से आवाज हुई और बीरेन्दर सिंह चारों खाने चित्त जमीन पर आ रहा। उनके गिरते ही उनके हिमायती हट गये। वे भेड़ों की भाँति

भागने लगे। जिसकी जिधर सींग समाई चल निकला। कोई आध घंटे में वहाँ चिड़िया का पूत भी न दिखायी दिया।

बाहर तो यह उपद्रव मचा था भीतर दुल्हा-दुल्हिन मारे डर के सूखे जाते थे। बाबू अमृतराय भी दम दम की खबर मँगाते और थर थर काँपती हुई पूर्णा को ढारस देते। वह बेचारी रो रही थी कि मुझ अभागिनी के लिए माथा पिटौवल हो रही है कि इतने में बन्दूक की आवाज कान में आयी। अरे!!! यह क्या हो गया। पूर्णा मारे डर के अमृतराय के गले से लिपट गयी। उसी दम एक आदमी ने आकर कहा — बाबू साहब गजब हो गया। कप्तान साहब के गोली लग गई। अभी उसकी बात भी पूरी न हुई थी कि फिर बन्दूक छूटी। या नारायण अब की किसकी जान गई। अमृतराय घबराकर उठे कि जरा बाहर जाकर देखें। मगर पूर्णा से हाथ न छुड़ा सके। इतने में एक आदमी ने फिर आकर कहा — बाबू साहब! ठाकुर ढेर हो गये। कप्तान ने गोली मार दी।

आध घंटे में मैदान साफ हो गया और अब यहाँ से बरात की बिदाई की ठहरी। पूर्णा और बिल्लो एक सेजगाड़ी में बिठाई गईं और जिस सज-धज से बरात आयी थी उसी तरह वापस हुई। अब की किसी को सर उठाने का साहस नहीं हुआ। इसमें सन्देह नहीं कि इधर-उधर झुंड के झुंड आदमी जमा थे और इस मंडली को क्रोध की निगाहों से देख रहे थे। कभी कभी कोई मनचला जवान एकाध पत्थर भी चला देता था। कभी तालियाँ बजायी जाती थीं। मुँह चिढ़ाया जाता था। मगर इन शरारतों से ऐसे दिल के पीछे आदमियों की गम्भीरता में क्या विघ्न पड़ सकता था। कोई आध घंटे में बरात ठिकाने पर पहुँची। दुल्हिन उतारी गयी और बरातियों की जान में जान आयी। अमृतराय की खुशी का क्या पूछना। वह दौड़-दौड़ सबसे हाथ मिलाते फिरते थे। आँखें खिली जाती थीं। ज्योंही दुल्हिन उस कमरे में पहुँची जो स्वयं आप ही दुल्हिन की तरह सजा हुआ था तो अमृतराय ने आकर कहा — प्यारी, लो, हम कुशल से पहुँच गये। यँ, तुम तो रो रही हो   यह कहते हुए उन्होंने रूमाल से उसके आँसू पोंछे और उसे गले से लगाया।

प्रेम रस की माती पूर्णा ने अमृतराय का हाथ पकड़ लिया और बोली—आप तो आज ऐसे प्रसन्न चित्त हैं मानो कोई राज मिल गया है।

अमृत—(मिस्टाकर) कोई झूठ है। जिसे एसी रानी मिले उसे राज की क्या परवाह।

आज का दिन बड़े आनन्द से कटा। दूसरे दिन बरातियों के बिदा होने की आज्ञा थी। मगर अमृतराय की यह सलाह हुई कि लाला धनुषधारीलाल कम से कम एक बार उनको अपने व्याख्यान से कृतार्थ करें। यह सलाह उनको पसन्द आयी। अमृतराय ने अपने कमरे में एक बड़ा शामियाना खड़ा करवाया और बड़े उत्साह से सभा हुई। वह धुआँधार व्याख्यान हुआ कि सामाजिक सुधार का जौहर उनके दिलों में बैठ गया। फिर तो दो दो जलसे और भी हुए और दोनों धूमधाम के साथ। सारा शहर टूटा पड़ता था। इनकी कार्रवाइयों का असर हुआ। दोनों हुईं अमृतराय के इस जलसे के बाद दो विधवा विवाह और हुए। एक पूर्णा के साथ गया। बजाही बहुवली थे। और दुलहिनें थीं। चौथे दिन सब बरातियों ने रुखसती बिदा हुए। पूर्णा महाशयनी रामकली थी। मगर बरातियों के आग्रह से मजबूर होकर उनके बहुत कड़ी शादी किये थी। और लाला धनुषधारीलाल ने दो तीन दिन मुलाकात करती ही गयी। और बाबू की सिखा दी। उसे बराबर सती की शिक्षा दी।

शादी के चौथे दिन बाद पूर्णा बैठी हुई थी कि एक औरत ने आकर उसको एक बंद लिफाफा दिया। पढ़ा तो प्रेमा का प्रेम-पत्र था। उसमें बड़े मुबारकबादी दी थी और बाबू अमृतराय की वह तस्वीर जो कमरों से उनके गले का हार हो रही थी पूर्णा के लिए भेज दी थी। उस पत्र की आखिरी सतरें यह थीं—

सखी तुम बड़ी भाग्यवती हो। ईश्वर सदा तुम्हारा सोहाग कायम रखे। तुम्हारे पति की तसवीर तुम्हारे पास भेजती हूँ। इसे मेरी यादगार समझना। तुम जानती हो कि मैं इसको जान से ज्यादा प्यारी समझती थी। मगर अब मैं इस योग्य नहीं कि इसे अपने पास रख सकूँ। अब यह

तुमको मुबारक हो। प्यारी मुझे भूलना मत। अपने प्यारे पति को मेरी ओर से धन्यवाद देना।

तुम्हारी अभागिनी सखी—
प्रेमा'

अफसोस! आज के पन्द्रहवें दिन बेचारी प्रेमा बाबू दाननाथ के गले बाँध दी गयी। बड़े धूमधाम से बरात निकली। हजारों रुपया लुटा दिया गया। कई दिन तक सारा शहर मुंशी बदरीप्रसाद के दरवाजे पर नाच देखता रहा। लाखों का वारा-न्यारा हो गया। ब्याह के तीसरे ही दिन मुंशी जी परलोक को सिधारे। ईश्वर उनको स्वर्गवास दे।

ग्यारहवाँ अध्याय

विरोधियों का विरोध

मेहमानों के बिदा हो जाने के बाद यह आशा की जाती थी कि विरोधी लोग अब सिर न उठावेंगे। विशेष इसलिए कि ठाकुर जोरावर सिंह और मुंशी बदरीप्रसाद के मर जाने से उनका बल बहुत कम हो गया था। मगर यह आशा पूरी न हुई। एक सप्ताह भी न गुजरने पाया था और अभी मुश्किल से बैठने भी न पाये थे कि फिर वही धाँधलियाँ शुरू हो गयीं।

अमृतराय कमरे में बैठे हुए एक पत्र पढ़ रहे थे कि महराज सुक्खू ने आया और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। अमृतराय ने उनको देखा तो मुस्कराकर बोले—कैसे चले महराज?

महराज —हुजूर, जान बकसी होय तो कहें।

अमृत —बेधड़क कहो।

महराज —ऐसा न हो कि आप रिसहे हो जायँ।

अमृत —बात तो कहो।

महराज —हुजूर डर लगता है।

अमृत —क्या तनख्वाह बढ़वाना चाहते हो?

महराज —नाहीं सरकार।

अमृत —फिर क्या चाहते हो?

महराज —हुजूर, हमार इस्तीफा ले लिया जाय।

अमृत —क्या नौकरी छोड़ोगे?

महराज —हाँ सरकार। अब हमसे काम नहीं होता।

अमृत — तुम्हीं अभी तो मज़बूत हो। जी चाहे तो कुछ दिन आराम कर लो। मगर नौकरी क्यों छोड़ो।

महराज — नाहीं सर्कार, अब हम घर को जाइब।

अमृत॰ — अगर तुमको यहाँ कोई तकलीफ़ हो तो ठीक ठीक कह दो। अगर तनख्वाह कहीं और इससे ज्यादा मिलने की आशा हो तो वैसा कहो।

महराज — हुजूर, तनख्वाह जो आप देते हैं कोई क्या माई का लाल देगा?

अमृत॰ — फिर समझ में नहीं आता कि क्यों नौकरी छोड़ना चाहते हो?

महराज — अब सर्कार मैं आपसे क्या कहूँ।

यहाँ तो यह बातें हो रही थीं उधर चम्मन व रम्मन व झम्मन कहार और भगेलू व दुक्खी भारी आपस में बातें कर रहे थे।

भगेलू — चलो चलो जल्दी। नहीं तो कचहरी की बेला आ जैहै।

चम्मन — आगे आगे तुम चलो।

भगेलू — हमसे आगूँ न चला जैहै।

चम्मन — तब कौन आगूँ चलै।

भगेलू — हम केका बताई।

रम्मन — कोऊ न चलै आगूँ तो हम चलित है।

दुक्खी — तैं आगे चलैया तो पीछे कौन चलिहै।

भगेलू — हम एक बात कहित है। न कोई आगूँ चलै न कोई पीछूँ।

चम्मन — फिर कैसे चला जाय।

भगेलू — सब साथ साथ चलैं।

चम्मन — तुम्हार कपार।

भगेलू — साथ चलै माँ कौन हरज है।

झम्मन — तब सर्कार से बतियाये कौन?

भगेलू — दुक्खी का मुँह बतियाब आवत है।

दुक्खी—अरे राम रे! मैं उनके ताईं न छुऊँ। उनका तेज मैं मोका सुनाव ही आवत है।

मधेल—अच्छा कोई न बढ़ै तो हम ही आगे चलित है।

सब के सब चले। अब दरवाजे में पहुँचे तो मधेल रुक गया।

सम्मन—ठाढ़े काहे हो गये। चले चलो।

मधेल—अब हम न जावें। हुजूर तो कागद पढ़त हैं।

अमृतराय ने जो दरवाजे से इनको आपस में बातें करते सुना तो कमरे से बाहर निकल आये और हँस कर पूछा—कैसे चले मधेल?

मधेल का हियाव छूट गया। फिर गोंगा करके बोला—हजूर यह सब कहार आपसे कुछ कहने आये हैं।

अमृतराय—क्या कहते हैं? यह सब तो बोलते ही नहीं।

मधेल—(कहारों से) तुमको अपना कुछ कहना होय सरकार से कहो।

कहार मधेल के इस तरह निकल जाने पर दिल में बहुत सकपाये। सम्मन ने जरा तीखे होकर कहा—तुम काहे नाहीं कहत हो। तुम्हरे मुँह में जीभ नहीं है।

अमृत—हम समझ गये। शायद तुम लोग इनाम माँगने आये हो। कहारों से अब विनाय ही कहते के और कुछ न बन पड़ा। अमृतराय ने उसी दम पाँच रुपया मधेल के हाथ पर रख दिया। जब यह सब फिर अपनी कोठरी में आये तो यों बातें करने लगे—

सम्मन—कलेजा बड़ा चौड़ा है।

रम्मन—अब रोज लालच रहा कि जाय मरे का देई।

दुक्खी—यहाँ बात के ठकुर चौधरी करै काम।

मधेलू—इसे तो उनके सामने कुछ कहे न बना।

दुक्खी—तब काहे को यहाँ से आये भागे रहो।

इतने में सुखई कहार सबकी देखा लोलता हुआ आ पहुँचा। और इनको जमा देखकर बोला—का भया? सरकार का कहेन?

दुक्खी—सरकार के सामने जाय के सब गूँगे हो गये। कोई के मुख न निकली।

मगेलू — सुखई दादा ! तुम नियाव करौ अब सरकार हँसकर इनाम देने लागे तब कैसे कहा जात कि हम नौकरी छोड़स आये हैं।

सुखई — हम तो तुमसे पहले कह दीन कि यहाँ नौकरी छोड़ के सब बने पछतैहो। अस भलामानुष कहूँ न मिले।

मगेलू — दादा तुम बात लाख रुपया की कहत हौ।

चम्मन — एमाँ कौन झूठ है। अस मनई कहाँ मिले।

रम्मन — आज दस बरस रहत भये मुदा आधी बात कबहूँ नाहीं कहेन।

मगेलू — रीस तो उनके देह में छू नाहीं गै। जब बात करत हैं हँसकर।

चम्मन — भैया हमसे तो कोऊ कहत कि तुम बीस कलदार लेव और हमारे यहाँ चल के काम करो तो हम सरकार का छोड़ के कहूँ न जाइत। मुदा बिरादरी की बात ठहरी। हुक्का-पानी बन्द होइ गया तो फिर केहू के द्वारे बैठे।

रम्मन — यही डर तो जान मारे डालत है।

चम्मन — चौधरी आज कह गये हैं कि आज इनकर काम न छोड़ देहो तो टाट बाहर कर दीन जैहौ।

सुखई — हम एक बेर कह दीन कि पछतैहौ। जस मन में आवे करो।

आठ बजे रात को जब बाबू अमृतराय सैर करके आये तो कोई टमटम थामनेवाला न था। चारों ओर घूम घूम कर पुकारा। मगर किसी की आहट न पायी। महराज कहार, साईस सभी चल दिये। यहाँ तक कि जो साईस उनके साथ था वह भी न जाने कहाँ लोप हो गया। समझ गये कि दुष्टों ने छल किया। घोड़े को आप ही खोलने लगे कि सुखई कहार आता दिखायी दिया। उससे पूछा — यह सब के सब कहाँ चले गये?

सुखई — (खाँसकर) सब छोड़ गये। अब काम न करैंगे।

अमृत — तुम्हें कुछ मालूम है इन सभों ने क्यों छोड़ दिया।

पुष्पा — मालूम कोई नहीं। उनके बिरादरीवाले कहते हैं इनके यहाँ काम मत करो।

अमृतराय की समझ में पूरी बात आ गयी कि विरोधियों ने अपना कोई और बस न चलते देखकर अब यह ढंग रचा है। अगर यही तो क्या देखते हैं कि पूर्णा बैठी खाना पका रही है। और किसी इधर उधर और रही है। नौकरों पर खीज पीसकर रह गये। पूर्णा से बोले — आज तुमको बड़ा कष्ट उठाना पड़ा।

पूर्णा — (हँसकर) इसे आप कष्ट कहते हैं। यह तो मेरा सौभाग्य है। पत्नी के अधरों पर मन्द मुस्कान और आँखों में प्रेम देखकर बाबू साहब के बचे हुए तेवर बदल गये। मचलता हुआ मन ठहरा पर क्या और बैठे नाश्ते खाने का स्वाद पूछकर खिलखिलाके हँसता है और झुलाता हो जाता है उसी भाँति उस वक्त अमृतराय का दिल भी किलोलें करने लगा। आव देखा न ताव। कोई पलक भर पूरे पड़ते हुए स्वर्गों में बैठकर खुश बसे। पूर्णा वहीं हाँ करती ही रही। मगर कौन सुनता है। और उ बचे ने कमाकर बोले — मैं तुमको यह न करने दूँगा।

पूर्णा भी प्रीति के सबसे में बेसुध होकर बोली — मैं न मानूँगी।

अमृत — अगर हाथों में छाले पड़ें तो मैं जुरमाना ले लूँगा।

पूर्णा — मैं उन छालों को फूल समझूँगी। जुरमाना क्यों देने लगी।

अमृत — और जो सिर में धमक उमक हुई तो तुम जानना।

पूर्णा — वाह। ऐसे सस्ते न छूटोगे। बनकर देखना पड़ेगा।

अमृत — बदले की लड़ाई क्या मिलेगी।

पूर्णा — (हँसकर) भर पेट भोजन करा दूँगी।

अमृत — कुछ और न मिलेगा?

पूर्णा — ठंडा पानी भी पी लेना।

अमृत — (गिड़गिड़ाकर) कुछ और मिलना चाहिए।

पूर्णा — बस अब कुछ न मिलेगा।

यहाँ अभी यही बातें हो रही थीं कि बाबू प्राणनाथ और बाबू जीवन नाथ आये। यह दोनों काश्मीरी थे और कालिज में शिक्षा पाते थे। अमृत

राय के पक्षपातियों में ऐसा उत्साही और कोई न था जैसे यह दोनों युवक थे। बाबू साहब का अब तक जो कुछ खर्च हुआ था वह इन्हीं परोपकारियों के परिश्रम का फल था। और ये दोनों केवल जबानी बकवास बकनेवाले नहीं थे। बरन बाबू साहब की तरह यह दोनों भी सुधार का कुछ-कुछ कर्तव्य कर चुके थे। यही दोनों वीर थे जिन्होंने सहस्रों रुकावटों और बाधाओं को हटाकर विधवाओं से ब्याह किया था। पूर्णा की सखी रामकली ने अपनी मरजी से प्राणनाथ के साथ विवाह करना स्वीकार किया था। और लक्ष्मी के माँ-बाप जो आगरे के बड़े प्रतिष्ठित रईस थे जीवननाथ से उसका विवाह करने के लिए बनारस आये थे। ये दोनों अलग अलग मकान में रहते थे।

बाबू अमृतराय उनके आने की खबर पाते ही बाहर निकल आये और मुसकराकर पूछा — क्यों क्या खबर है?

जीवननाथ — यह आपके यहाँ सन्नाटा कैसा?

अमृत — कुछ न पूछो भाई।

जीवन — आखिर यह दरजन भर नौकर कहाँ समा गये।

अमृत — सब जहन्नुम चले गये। जातिवालों ने उन पर बिरादरी का दबाव डालकर यहाँ से निकलवा दिया।

प्राणनाथ ने ठट्ठा लगाकर कहा — लीजिए यहाँ भी वही रंग है।

अमृतराय — क्या तुम लोगों के यहाँ भी यही हाल है।

प्राण — जनाब इससे भी बदतर। कहार, महाराज सब छोड़ भागे। जिस कुएँ से पानी आता था वहाँ कई बदमाश लट्ठ लिए बैठे हैं कि कोई पानी भरने आवे तो उसकी गर्द झाड़ें।

जीवन — अभी यह तो कहो कुशल ही हुई कि पहले से पुलिस का प्रबन्ध कर लिया? नहीं तो हम अब तक शायद अस्पताल में होते।

अमृत — आखिर अब क्या किया जाय। नौकरों बिना कैसे काम चलेगा?

प्राण — मेरी तो राय है कि आप ही ठाकुर बनिए और आप ही चाकर।

जीवन —तुम तो मोटे-ताजे हो। तुम्हें ये सब सीख करके पानी भीख का सकते हो।

श्याम —और कौन कहे कि आप काम क्यों नहीं सीख सकते।

मधुप —अभी तक ऐसे ख्याल भी नहीं हो सके हैं। हाँ नौकर बनी है, अब तक इतने थोड़ा बहुत काम करो। काम इसके पर फिर अकेला हूँ यहाँ से दो-चार नौकर आ जायेंगे।

जीवन —यह तो आपने अच्छा इन्तजाम किया। हमारा काम कैसे चले।

मधुप —हम लोग ही यहाँ रह जायें। स्वागत।

जीवन —यह तो ठीक नहीं। और फिर यहाँ रहना क्या अच्छा है?

मधुप —अच्छा तो यहाँ रहना है कि आप बैठे एक दरबार जाइये मेल से रह सकते हैं।

जीवन —अभी हालत से भी तो उतावले न कीजिये।

मधुप —वह दिन से रहा है। मैं तैर कह चुका हूँ कि इतने भी बदलता है। वह अब दुखकर कहीं न कमायेंगे।

जीवन —अच्छा करते वहाँ तो ठीक था।

श्याम —आप भी जानते हैं कि पसन्दकर। वहाँ ठीक हूँ वह ठीक था। मनमानी जाहीं तो सभी नौकर के बनो। दोनों मालिकों को यहाँ लाकर बैठा दो। नहीं तो आप ठीक किया करो।

मधुप —और क्या ठीक तो रहते हैं। तब ख्याल आपकी तो फिर कुछ बनाये न बनेगी।

जीवन —अच्छा जैसी आपकी मर्जी।

दोनों युवक खलासा दे गये। जीवन मोटा और गाड़ी जोतकर ले गये। इधर अमरराय ने आकर पूना में यह समाचार कहा। वह तुरन्त ही प्रसन्न हो गये और इन मेहमानों के लिए नाना प्रकार सजाने लगे। बाबू साहब ने गुलाई का मदद से दो कमरे साफ कराये। उनमें मेज कुर्सियाँ और दूसरी जरूरत की चीजें रखवा दीं। कोई भी बात ऐसी न रह गई कि मेहमानों को पूछनी। पूना उनसे बड़े प्यार से मिले और चौड़ी हो गए।

तीनों सखियाँ बुलबुल की तरह चहकने लगीं। रामकली पहले जरा झेंपी। मगर पूर्णा की दो चार बातों ने उसका हिजाब भी खोल दिया।

थोड़ी देर में भोजन तैयार हो गया। और तीनों आदमी रसोई पर गये। इधर चार-पाँच बरस से अमृतराय दाल-भात खाना भूल गये थे। काश्मीरी बावरची तरह तरह के सालन अनेक प्रकार के मांस खिलाया करता था और यद्यपि जल्दी में पूर्णा सिवाय सादे खानों के और कुछ न बना सकी थी मगर सबने इसकी बड़ी प्रशंसा की। जीवननाथ और प्राणनाथ दोनों काश्मीरी ही थे मगर वह भी कहते थे कि रोटी-दाल ऐसी स्वादिष्ट हमने कभी नहीं खाई।

रात तो इस तरह कटी। दूसरे दिन पूर्णा ने बिल्लो से कहा कि जरा बाजार से सौदा लाओ तो आज मेहमानों को अच्छी अच्छी चीजें खिलाऊँ। बिल्लो ने आकर सुखई से हुक्म लगाया। और सुखई एक टोकरा लेकर बाजार चले। वह आज कोई तीस बरस से एक ही बनिये से सौदा लिया करते थे। बनिया एक ही चालाक था। बुड्ढे को खूब दस्तूरी देता मगर सौदा रुपये में बारह आने से कभी अधिक न देता। इसी तरह इस घूरे साहु ने सब रईसों को फाँसा रक्खा था। सुखई ने उसकी दुकान पर पहुँचते ही टोकरा पटक दिया और तिपाई पर बैठकर बोला — लाव घूरे, कुछ सौदा सुलुफ तो दो। मगर देरी न लगे।

और हर बेर तो घूरे हँसकर सुखई को तमाखू पिलाता और तुरन्त उसके हुक्म की तामील करने लगता। मगर आज उसने उसको और बड़ी रुखाई से देखकर कहा — आगे जाव। हमारे यहाँ सौदा नहीं है।

सुखई — जरा आदमी देख के बात करो। हमें पहचानते नहीं क्या?

घूरे — आगे जाव। बहुत टें-टें न करो।

सुखई — कुछ भाँग-बूटी तो नहीं खा गये क्या? अरे हम सुखई हैं।

घूरे — अभी तुम लाट हो तो क्या। चलो अपना रास्ता देखो।

सुखई — क्या तुम जानते हो हमें दूसरे दुकान पर दस्तूरी न मिलेगी? अभी तुम्हारे सामने दो आना रुपया लेकर दिखा देता हूँ।

यहाँ—तुम होते तो जानते कि नहीं। दूकान से हटकर बात करो। बेचारा सुनाई जाकर भी इस सफाई पर आश्चर्य करता हुआ दूसरी दूकान पर गया। वहाँ भी वही जवाब मिला। तीसरी दूकान पर पहुँचा। वहाँ भी वही फटकार मिली। फिर तो उसने सारा बाजार छान डाला। मगर कहीं ठौर न मिला। किसी ने उसे दूकान पर खड़ा तक होने न दिया। आखिर थक मारकर अपना सा मुँह लिये लौट आया और सब समाचार कहे। मगर नमक-मसाले बिना कैसे काम चले। किसी ने कहा अब तो ये बाकी हैं। वे कैसे कोई सौदा नहीं देगा। मगर वह इतने से क्यों ही बाहर निकला कि एक आदमी उसे इधर उधर टहलता दिखाई दिया। किसी को देखते ही वह उसके साथ हो लिया और बिना किये दूकान पर किसी गाँव वह भी मजदूरी की तरह माल लेता रहा। आखिर किसी की बहुत दौड़-धूप करके हाथ मुनाफे लौट आयी। बेचारी बूढ़ी के हाथ कर लाके पकवान बनाकर धर दिये।

बाबू बलदेवदयाल ने जब देखा कि मोटी लोग इसी तरह पीछे पड़े रहे तो वहीं एक लाला कपूरचन्द को तार दिया कि आप इनके यहाँ पर रोजगार विवक्षरार भेज दीजिए। लाला साहब पहुँचे तो उनसे हुए थे कि बताएँ मैं कुछ लोग जिनका कसब मनाने मौजूद है। तार पाते ही उन्होंने अपने हाथ के फौरन नौकरों को बुलाकर रवाना किया। जिनमें एक कायस्थ सरदार भी था। दूसरे दिन वह सब आ पहुँचे। सब के सब बंगाली थे जो न तो किरानी के दूकान से और जिनको टाट बाबू किये जाने का भरोसा था। विदेशियों ने उनके भी काम चलने चाहे। मगर कुछ रोज न चला। मोदी की लालसा से इतना मोटा किया भी कई महीनों को काफी था।

जब लोगों ने देखा कि इस तरकीबों से बलदेवदयाल को कुछ हानि न पहुँची तो और ही चाल चले। उनके मुहर्रिरों को बहकाना शुरू किया कि वह तो बेगार ही करते हैं। लाहौरी के शव छोड़कर जाते हैं। उनको किसी ज़ालिम के पास से छुटकारा नहीं है। एक भिखारी आदमी से किसने लिया है। उसका मुँह देखना उसके सम्बन्ध करना भी पाप है।

विरुद्ध है। मुवक्किलों में बहुधा करके देहातों के राजपूत ठाकुर और मुख्तार थे जो या तो अविद्या की कालकोठरी में पड़े हुए थे या नये जमाने के चमत्कार ने उन्हें चौंधिया दिया था। उन्होंने जब यह उलट पलट बातें सुनीं तब वे बहुत बिगड़े बहुत झल्लाये और उसी दम कसम खाई कि अब चाहे जो हो इस अधर्मी को कभी मुकदमा न देंगे। राम! राम! इसको वेदशास्त्र का तनिक विचार नहीं। गया कि चट एक राँड़ को घर में बैठाल लिया। छी! छी! अपना लोक-परलोक दोनों बिगाड़ दिया। ऐसा ही था तो हिन्दू के घर में काहे को जन्म लिया था। किसी चोर-चंडाल के घर जनमे होते। बाप दादे का नाम मिटा दिया। ऐसी ही बातें कोई दो सप्ताह तक उनके मुवक्किलों में फैलीं। जिसका परिणाम यह हुआ कि बाबू अमृतराय का रंग फीका पड़ने लगा। जहाँ मारे मुकदमों के साँस लेने का अवकाश न मिलता था वहाँ अब दिन भर हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने की नौबत आ गयी। यहाँ तक कि तीसरा सप्ताह कोरा बीत गया और उनको एक भी अच्छा मुकदमा न मिला।

जज साहब एक बंगाली बाबू थे। अमृतराय के परिश्रम और योग्यता उत्साह और चपलता ने जज साहब की आँखों में उन्हें बड़ी प्रशंसा दे रक्खी थी। वह अमृतराय की बढ़ती हुई वकालत को देख देख समझ गये थे कि थोड़े ही दिनों में यह सब वकीलों का सभापति हो जायगा। मगर जब तीन हफ्ते से उनकी सूरत न दिखायी दी तब उनको आश्चर्य हुआ। सरिश्तेदार से पूछा कि आजकल बाबू अमृतराय कहाँ हैं। सरिश्तेदार साहब जाति के मुसलमान और बड़े सच्चे साफ आदमी थे। उन्होंने सारा व्यौरा जो सुना था कह सुनाया। जज साहब सुनते ही समझ गये कि बेचारे अमृतराय सामाजिक कामों में अग्रगण्य बनने का फल भोग रहे हैं। दूसरे दिन उन्होंने खुद अमृतराय को इजलास पर बुलवाया और देहाती जमींदारों के सामने उनसे बहुत देर तक इधर-उधर की बातें कीं। अमृतराय भी हँस हँस उनकी बातों का जवाब दिया किये। इस बीच में कई वकील और बैरिस्टर जज साहब को दिखाने के लिए कागज-पत्र लाये मगर साहब ने किसी की ओर ध्यान नहीं दिया। जब वह चले तो साहब

मैं कुर्सी से उठकर उनसे हाथ मिलाया और वह और से बोले—बहुत अच्छा बाबू साहब! जैसा आप सोचता है इस मुकदमे में वैसा ही होगा।

जब कचहरी बरखास्त हुई तो उन वकीलों में जिनके मुकदमे आज पेश थे वो बातें होने लगीं।

ठाकुर साहब—(मुस्की मारे मूँछ ऐंठ करी किये थोड़ा-सा कदम हाथ में लिये) आप जब साहब अनूपराय से खूब खूब बतियाय रहे।

मिश्र जी—(फिर मुँह से टोंका लगाते मुँह में तम्बाकू दबाये और कंधे पर अँगोछा रखे) खूब बतियाय रहा मानो कोउ अपने मित्र से बतियावै।

ठाकुर—अनूपराय बड़ हँस हँस खुसी हिलावत रहा।

मिश्र जी—बड़े खानदानी का सब मामला जानत होत है।

ठाकुर—सब तो बोली बतियाय रहे सब तनुक कछ वकील आवै बाकी बाहेर कोउ को और तनिक नाहीं तातिन।

मिश्र जी—हुआ कहे रहत है हुजूर मुकदिमा उनहीं के राय से चले। मुला रहीं कि नाहीं जब अनूपराय कहे जात तो अब साहब कहेन कि सब मुकदमे में वैसा ही होगा।

ठाकुर—मुला काहे नाहीं बाकी फिर आप कहौ।

मिश्र—ठिला तो हम कहिन है कि सब वकील सिरकी पर में नाहीं ना।

ठाकुर—सब बहस करत है मानों जिह्वा पर सरस्वती बैठी होय। बलकर बरसवती करिया काम कोउ नाहीं है।

मिश्र—मुला लिखाई होय गया। ठीक से ब्याह निबाहिस।

ठाकुर—पहले तो कोई मरा है। मगर उनका वकील किहे होय तो बाकी बस के कोख जावत।

दूसरे दिन दोनों में बातें हुई और दिन में बड़ी पड़ने पड़ते दोनों अनूप राय के पास गये और उनसे मकदमे का कुछ ब्यौरा बयान किया। साहब ने पहले ही समझ लिया था कि इस मुकदमे में कुछ जान नहीं है तिस पर भी उन्होंने मुकदमा ले लिया और दूसरे दिन ऐसी योग्यता से

बहस की कि दूसरी ओर के वकील मुख्तियार सबके मुँह ताक के रह गये। और आखिर जीत का सेहरा भी उन्हीं के सिर रहा। जज साहब उनकी बात की वक्तृता पर ऐसे प्रसन्न हुए कि उन्होंने हँसकर धन्यवाद दिया और हाथ मिलाया। बस अब क्या था। एक तो अमृतराय यों ही प्रसिद्ध थे उस पर जज साहब का यह बर्ताव और भी सोने में सोहागा हो गया। वह बँगले पर पहुँचकर चैन से बैठने भी न पाये थे कि मुवक्किलों के दल के दल आने लगे और दस बजे रात तक यही तांता लगा रहा। दूसरे दिन से उनकी वकालत पहले से भी अधिक चमक उठी।

द्रोहियों ने जब देखा कि हमारी यह चाल भी उलटी पड़ी तो और भी दाँत पीसने लगे। अब मुंशी बदरीप्रसाद तो थे ही नहीं कि उन्हें सीधी चालें बताते। और न ठाकुर थे कि कुछ बाहुबल का चमत्कार दिखाते। बाबू कमलाप्रसाद अपने पिता के सामने ही से इन बातों से अलग हो गये थे। इसलिए द्रोहियों ने अपना और कुछ बस न देखकर पंडित भृगुदत्त का द्वार खटखटाया और उनसे कर जोड़कर कहा कि महाराज! कृपा सिन्धु! अब भारतवर्ष में महा उत्पात और घोर पाप हो रहा है। अब आप ही चाहो तो उसका उद्धार हो सकता है। सिवाय आपके अब इस नौका को पार लगानेवाला इस संसार में कोई नहीं। महाराज! अगर इस समय पूरा बल न लगाया तो फिर इस नगर के वासी कहीं मुँह दिखाने के योग्य नहीं रहेंगे। कृपा के परमात्मा और धर्म के पोखरा ने जब अपने जजमानों को ऐसी दीनता से स्तुति करते देखा तो दाँत निकालकर बोले—आप लोग चीन हैं चीन घबरायें मत। आप देखा करें कि भृगुदत्त क्या करते हैं।

सेठ धूनीमल—महाराज! कुछ ऐसा यत्न कीजिए कि इस दुष्ट का सत्यानाश हो जाय। कोई नाम लेवा न बचे।

कई आदमी—हाँ महाराज! इस घड़ी तो यही चाहिए।

भृगुदत्त—यही चाहिए तो यही लेना। सर्वथा नाश न कर दूँ तो ब्राह्मण नहीं। आज के सातवें दिन उसका नाश हो जायगा।

सेठ जी—द्रव्य जो लगे बेखटके कोठी से मँगा लेना।

पुरुषोत्तम — इसके कहने की कोई आवश्यकता नहीं। केवल पाँच ही ब्राह्मण का प्रतिदिन भोजन होगा।

बाबू दीनानाथ — तो कहिए तो कोई हलवाई क्या किया जाय। रामी हलवाई थे और लड्डू बहुत अच्छे बनाता है।

पुरुषोत्तम — जी पूजा में कराईका उसमें पैसा ज्यादा अधिक है। हाँ जितनी अधिक रकमों का दान ही उतना ही कार्य सिद्ध हो जाता है।

इस पर पंडित जी के एक बेटे ने कहा— गुरु जी! आप तो आपने व्यास का पाठ होते समय कहा था कि वेदों के साथ यही मिला दिया जाय तो उसमें कुछ दोष नहीं रहता।

पुरुषोत्तम — (हँसकर) हाँ हाँ अब स्मरण हुआ। मनु जी ने इस श्लोक में इस बात का प्रमाण दिया है।

दीनानाथ — (मुस्कराकर) महाराज। बेटा तो बड़ा तेज है।

सेठ जी — यह अपने गुरु जी से भी आगे बढ़ जायगा। पृथिवी वाली उस दिन

पुरुषोत्तम — अब तो इसको एक सभा में हो अर संस्कृत परीक्षा में लिख दिया।

बेटा — मैं अपने मन से बोला ही उठा। मगर अनजान हम बोलकर उठा न बैठे तो अपनी बेट कर और ना के उठना।

दीनानाथ — अजी न हो सके। बैठे गुरु बैठ बेटा।

सेठ जी — महाराज अब इनको आज्ञा दीजिए। आप हलवाई का जायगा। सुनील जी भी उनके साथ को रहेंगे। जी भी हो भी न। आप को सुनील जी से कहना होता। मगर बात तब है कि आप भी इस विषय में बात करते हैं।

पंडित जी ने सिर का बहु हिलाकर कहा — इसमें आप कोई खटका न मानिए। एक सप्ताह में मगर गुरु का नाम न हो जाय तो नाम पुरुषोत्तम नहीं। अब आपको पूजन की विधि भी बता ही दूँ। सुनिए तांत्रिक विधा में एक मंत्र ऐसा है जिसके जपने से बैठे ही काम और होती है। मगर अब आदमी प्रतिदिन उसका पाठ करें तो आयु में दो पहर की हानि होगी। मगर जो आदमी पाठ करें तो इस लिए

की हानि होवी। यदि पाँच सौ पाठ नित्य हों तो हर दिन पाँच वर्ष आयु घटती है।

सेठ जी—महराज आपने इस घड़ी ऐसी बात कही कि हमारा चोला मस्त हो गया मस्त हो गया।

दीनानाथ—कृपासिन्धु आप धन्य हो। आप धन्य हो।

बहुत से आदमी—एक बार बोलो पंडित भृगुदत्त की जय।

बहुत से आदमी—एक बार बोलो—हुर्रों की हैं! हैं!!

इस तरह कोलाहल मचाते हुए यह लोग अपने अपने घरों को लौटे। उसी दिन रामो हलवाई पंडित जी के मकान पर आ डटा। पूजा-पाठ होने लगे। पाँच सौ मुस्टंड एकत्र हो गये और दोनों जून माल उड़ाने लगे। धीरे धीरे पाँच सौ से एक हजार नम्बर पहुँचा और पूजा-पाठ कौन करता है। सबेरे से भोजन का प्रबन्ध करते करते दोपहर हो जाता था। और दोपहर से भंग बूटी छानते रात हो जाती थी। हाँ पंडित भृगुदत्त का नाम सारे शहर में उजागर हो रहा था। चारों ओर उनकी बड़ाई गाई जा रही थी। सात दिन यही अंधाधुंध मचा रहा। यह सब कुछ हुआ। मगर बाबू अमृतराय का बाल भी बाँका न हो सका। कहीं चमार के सरापे डांगर मरते हैं! ऐसे आँख के अंधे और गाँठ के पूरे न फँसें तो भृगुदत्त ऐसे मुसों की बत्तीसियां कौन कराये। सेठ जी के आदमी तिल तिल पर अमृतराय के मकान की ओर दौड़ते थे कि देखें कुछ जंत्र मंत्र का फल हुआ कि नहीं। मगर सात दिन के बीतने पर कुछ फल हुआ तो यही कि अमृतराय की बकालत सदा से बढ़कर चमकी हुई थी।

उनके बदन में आग लग गयी। तीखी निगाहों से देखकर बोले — तुम्हारी आँखें हैं और तुम्हारे आँसू, जितना रोना चाहे रो लो। मगर मेरी आँखों में धूल मत झोंको। प्रेमा इस कठोर व्यंग्य को सुनकर चौंक पड़ी और बिना कुछ उत्तर दिये पति की ओर डबडबाई हुई आँखों से ताकने लगी। अमृतराय ने फिर कहा — क्या ताकती हो प्रेमा। मैं ऐसा मूर्ख नहीं हूँ जैसा तुम समझती हो। मैं भी आदमी हूँ और मैं भी आदमी पहचानता हूँ। मैं तुम्हारी एक एक बात को गौर से देखता हूँ मगर जितना ही देखता हूँ उतना ही चित्त को दुख होता है। क्योंकि तुम्हारा बर्ताव मेरे साथ धोखा है। यद्यपि तुमको यह सुनना अच्छा न मालूम होगा मगर हार कर कहना पड़ता है कि तुमको मुझसे लेशमात्र भी प्रेम नहीं है। मैंने अब तक इस विषय में जबान खोलने का साहस नहीं किया था और ईश्वर जानता है कि तुमसे किस कदर मुहब्बत करता हूँ। मगर मुहब्बत सब कुछ सह सकती है, स्वार्थ नहीं सह सकती और वह भी ऐसा स्वार्थ जो किसी दूसरे पुरुष के विरोध में उत्पन्न हुई हो। ऐसा कौन बेहया निर्लज्ज आदमी होगा जो यह देखे कि उसकी पत्नी किसी दूसरे के लिए वियोगिनी बनी हुई है और उसका लहू उबलने न लगे और उसके हृदय में क्रोध की ज्वाला भड़क न उठे। क्या तुम नहीं जानती हो कि वर्तमान के अनुसार स्त्री अपने पति के सिवाय किसी दूसरे मनुष्य की ओर कुदृष्टि देखने से भी पाप की भागी हो जाती है और उसका पतिव्रत भंग हो जाता है। प्रेमा! तुम एक बहुत ऊँचे घराने की बेटी हो और जिस घराने की तुम बहू हो वह भी इस शहर में किसी से हेठा नहीं। क्या तुम्हारे लिए यह शर्म की बात नहीं है कि तुम एक बाबाजी की पूजनेवाली रहो बाबुओं के गुण भी न समझी आदमी और वह कौन है जिसने तुम्हारा ऐसा निरादर किया? वही अमृतराय जिसके लिए तुम आठों पहर पड़ी सिसकती रहती हो। अगर उस दुष्ट के हृदय में तुम्हारा कुछ भी प्रेम होता तो वह तुम्हारे विवाह के बारम्बार कहने पर भी तुमको इस तरह दगा न करता। मैंने और भी बात है। इन्हीं आँखों से उसे तुम्हारी तस्वीर को देखते हुए देखा

है। क्या तुमको मेरी बातों का विश्वास नहीं आता? क्या अमृतराय के कर्तव्य से नहीं विदित होता है कि उनको तुम्हारी रत्ती भर भी परवाह नहीं है क्या उन्होंने डंके की चोट पर नहीं साबित कर दिया कि वह तुमको तुच्छ समझते हैं? माना कि कोई दिन ऐसा था कि वह विवाह करने की अभिलाषा रखते थे। पर अब तो वह बात नहीं रही। अब वह अमृतराय हैं जिसकी बदचलनी की सारे शहर में धूम मची हुई है। मगर शोक! और अति शोक की बात है कि तुम उसके लिए आँसू बहा-बहाकर अपने और मेरे खानदान के माथे कालिख का टीका लगाती हो।

दाननाथ मारे क्रोध के कांप रहे थे। चेहरा तमतमाया हुआ था। आँखों से चिनगारी निकल रही थी। बेचारी प्रेमा सिर नीचा किये हुए खड़ी रो रही थी। पति की एक एक बात उसके कलेजे के पार हुई जाती थी। आखिर न रहा गया। दाननाथ के पैरों पर गिर पड़ी और उन्हें गर्म-गर्म आँसू के बूँदों से भिगो दिया। दाननाथ ने पैर खसका लिया। प्रेमा को चारपाई पर बैठा दिया और बोले—प्रेमा रोओ मत। तुम्हारे रोने से मेरे दिल पर चोट लगती है। मैं तुमको रुलाना नहीं चाहता। परन्तु इन बातों को कहे बिना रह भी नहीं सकता। अगर यह रीति में रह गयी तो नतीजा बुरा पैदा करेगी। कान खोलकर सुनो। मैं तुमको प्राण से अधिक प्यार करता हूँ। तुमको आराम पहुँचाने के लिए मैं अपनी जान निछावर करने के लिए हाजिर हूँ। मगर तुमको सिवाय अपने किसी दूसरे का खयाल करते नहीं देख सकता। अब तक न जाने कैसे कैसे मैंने दिल को समझाया। मगर अब वह मेरे बस का नहीं। अब वह यह जलन नहीं सह सकता। मैं तुमको चेताये देता हूँ कि यह रोना धोना छोड़ो। यदि इस चेताने पर भी तुम मेरी बात न मानो तो फिर मुझे दोष मत देना। बस इतना कहे देता हूँ कि एक स्त्री के दो पति कदापि जीते नहीं रह सकते।

यह कहते हुए बाबू दाननाथ क्रोध में भरे बाहर चले आये। बेचारी प्रेमा को ऐसा मालूम हुआ कि मानो किसी ने कलेजे में छुरी मार दी। उसको आज तक किसी ने भूलकर भी कोई कड़ी बात नहीं सुनायी थी।

मंगलाचरण

उसकी भावना कभी कभी ताने दिया करती थी मगर वह ऐसे कठोर न
होते थे। वह घंटों रोती रही। इसके बाद उसने पति की सारी बातों
विचार करना शुरू किया और उसके कानों में यह शब्द गूंजने
एक स्त्री के दो पति कदापि नहीं रह सकते।
इसका क्या मतलब है ?

शोकदायक घटना

पूर्णा रामकली और लक्ष्मी तीनों बड़े आनन्द से हिल मिलकर रहने लगीं। उनका समय अब बातचीत हँसी दिल्लगी में कट जाता। चिन्ता की परछाईं भी न दिखायी देती। पूर्णा दो-तीन महीने में निखर कर ऐसी कोमलांगी हो गयी थी कि पहिचानी न जाती थी। रामकली भी खूब रंग-रूप निकाले थी। उसका निखार और यौवन पूर्णा को भी मात करता था। उसकी आँखों में अब वह चंचलता और मुख पर वह चपलता न थी जो पहले दिखायी देती थी। बल्कि अब वह अति सुकुमार कामिनी हो गयी थी। अच्छे संग में बैठते बैठते उसकी चाल-ढाल में गम्भीरता और धैर्य आ गया था। अब वह गंगा स्नान और मन्दिर का नाम भी न लेती। अगर कभी-कभी पूर्णा उसको छेड़ने के लिए पिछली बातें याद दिलाती तो वह नाक भी चढ़ा लेती रूठ जाती। मगर इन तीनों में लक्ष्मी का रूप निराला था। वह बड़े घर में पैदा हुई थी। उसके माँ-बाप ने उसे बड़े लाड़-प्यार से पाला था और उसको बड़ी उत्तम रीति पर शिक्षा दी थी। उसका कोमल गात उसकी मनोहर वाणी उसे अपनी सखियों में रानी की पदवी देती थी। वह गाने-बजाने में निपुण थी और अपनी सखियों को यह गुण सिखाया करती थी। इसी तरह पूर्णा को अनेक प्रकार के व्यंजन बनाने का व्यसन था। बेचारी रामकली के हाथों में यह सब गुण न थे। हाँ वह हँसोड़ थी और अपनी रसीली बातों से सखियों को हँसाया करती थी।

एक दिन शाम को तीनों सखियाँ बैठी बातचीत कर रही थीं कि पूर्णा

मैं मुस्कुराकर रामकली से पूछा — क्यों रम्मन आजकल मंदिर पूजा करने नहीं जाती हो।

रामकली ने हँसकर जवाब दिया — अब वहाँ जाने को जी नहीं चाहता। कमली रामकली का सब वृत्तान्त सुन चुकी थी। वह बोली — हाँ पूजा अब मंदिर काहे को जाओगी। अब तो हँसने-बोलने का सामान घर ही पर मौजूद है।

राम — (तिनक कर) तुमसे कौन बोलता है, जो तुम जहर उगलती। लेकिन इनको मना कर दो वह हमारी बातों में न बोला करें। नहीं तो अभी कुछ कह बैठूंगी तो रोती फिरेंगी।

पूर्णा — क्या लक्ष्मी (कमली) अभी को सब कहेगी।

कमली — (मुस्कुराकर) मैंने कुछ झूठ-मूठ कहा है? कहा था जो इनको ऐसा बुरा मालूम हुआ।

राम — ऐसी बात है तो इनको समझती है।

पूर्णा — कमली तुम हमारी बातों का बहुत ठिक किया करती हो। तुम्हारी कसम है वह मंदिर में जाती थी।

कमली — अब मैं कहती हूँ तो रोती काहे को है।

पूर्णा — अब वह बात उनकी कभी नहीं कहती तो तुम काहे को कहती हो। खबरदार, अब फिर मंदिर का नाम मत लेना।

कमली — अच्छा रम्मन (रामकली) हमें एक बात बता दो तो हम फिर तुम्हें कभी न छेड़ें — महन्त जी ने कल बैठे समय तुम्हारे कान क्या कहा। हमारा माला छुए को मूड़ बोले।

राम — (चिढ़क कर) सुना कमली हमसे अटपट करोगी तो ठीक न होगा। मैं जितना ही नरम होती हूँ तुम उतनी ही चढ़ी जाती हो।

पूर्णा — है तो। अच्छा क्यों नहीं बतातीं इसमें क्या हर्ज है।

राम — कुछ कहा होगा तुम कौन होती हो पूछनेवाली। क्या नानी बहन से छोटा बन के।

पूर्णा — अच्छा भाई मत बताओ, बिगड़ती काहे को हो।

लक्ष्मी—बताने की बात ही नहीं। बतला कैसे दें।

राम —कोई बात भी हो कि यों ही बतला दूँ।

पूर्णा—अच्छा यह बात जाने दो। बताओ उस तंबोली ने तुम्हें पान खिलाते समय क्या कहा था।

राम —फिर छेड़खानी की सूझी। मैं भी पते की बात कह दूँगी तो लजा जाओगी।

लक्ष्मी—तुम्हें हमारी कसम सखी जरूर कहो। यह हम लोगों की बातें तो पूछ लेती है अपनी बात एक नहीं कहती।

राम —क्यों सखी कहूँ? कहती हूँ बिगड़ना मत।

पूर्णा—कहो साँच को आँच क्या।

राम —उस दिन घाट पर तुमने किसे छाती से लिपटा लिया था।

पूर्णा—तुम्हारा सर।

लक्ष्मी—मैं समझ गयी। बाबू अमृतराय होंगे। क्यों है न?

यह तीनों सखियाँ इसी तरह हँस-बोल रही थीं कि एक बूढ़ी औरत ने आकर पूर्णा को आशीर्वाद दिया और उसके हाथ में एक खत रख दिया। पूर्णा ने अक्षर पहिचाने प्रेमा का पत्र था। उसमें यह लिखा था—

'प्यारी पूर्णा! तुमसे भेंट करने को बहुत जी चाहता है। मगर घर से बाहर पाँव निकालने की मजाल नहीं। इसलिए यह खत लिखती हूँ। मुझे तुमसे एक अति आवश्यक बात करनी है। जो पत्र में नहीं लिख सकती हूँ। अगर तुम बिल्लो को इस पत्र का जवाब देकर भेजो तो जबानी कह दूँगी। देखो देर मत करना। नहीं तो अनर्थ हो जायगा। आठ बजे के पहले बिल्लो यहाँ अवश्य आ जाय।

तुम्हारी सखी
प्रेमा'

खत पढ़ते ही पूर्णा का चित्त व्याकुल हो गया। चेहरे का रंग उड़ गया और अनेक प्रकार की शंकाएँ होने लगीं। या नारायण! अब क्या होनेवाला है। लिखती है देखो देर मत करना। नहीं तो अनर्थ हो जायगा। क्या बात है!!

मैं मुस्कुराकर रामकली से पूछा — क्यों रम्मन आजकल मंदिर पूजा करने नहीं जाती हो।

रामकली ने झेंपकर जवाब दिया — अब वहाँ जाने को जी नहीं चाहता। अभी रामकली का सब वृत्तान्त सुन चुकी थी। वह बोली — हाँ हुआ अब मंदिर काहे को जाओगी। अब तो हँसने-बोलने का सामान घर ही पर मौजूद है।

राम० — (खिसक कर) तुमसे कौन बोलता है, जो तुम बीच में बोलती हो। समझे। लेकिन इसकी सजा कर दो यह हमारी बातों में न बोला करे। नहीं तो अभी कुछ कह बैठूँगी तो रोती फिरेगी।

पूर्णा — क्या कल्लिनी (कल्ली) कहो जी भर कहो।

कल्ली — (मुस्कुराकर) मैंने कुछ कह बैठी हो कहा था जो इसको ऐसा बुरा मालूम हुआ।

राम — कैसी बात है कैसी समझती है।

पूर्णा — कल्लिनी तुम हमारी जानों को बहुत दिक किया करती हो। तुम्हारी बाबत भी यह मंदिर में आती थी।

कल्ली — अब यह कहती हूँ तो रोती काहे को हो।

पूर्णा — अब यह बात उसको अच्छी नहीं लगती तो तुम काहे को कहती हो। खबरदार, अब फिर मंदिर का नाम मत लेना।

कल्ली — अच्छा रम्मन (रामकली) हमें एक बात बता दो तो हम फिर तुम्हें कभी न छेड़ें — मन्दिर जाने के समय तुम्हारे साथ क्या कहा। हमारा माथा छू के कहो।

राम — (चिढ़ कर) तुम्हारी कल्लिनी इसमें मजाक करोगी तो ठीक न होगा। मैं जितना ही सहती हूँ उतना ही तुम चढ़ी जाती हो।

पूर्णा — है तो। उसका क्या नहीं बेचा इसमें क्या हर्ज है।

राम — कुछ कहा हुआ तुम कौन होती हो पूछनेवाली। कहीं जाती कहाँ से टोला भर में।

पूर्णा — अच्छा भाई मत बताओ, बिगड़ती काहे को हो।

लक्ष्मी—बताने की बात ही नहीं। बतला कैसे दें।

राम —कोई बात भी हो कि यों ही बतला दूं।

पूर्णा—अच्छा यह बात जाने दो। बताओ उस तंबोली ने तुम्हें पान खिलाते समय क्या कहा था।

राम —फिर छेड़खानी की सूझी। मैं भी पते की बात कह दूँगी तो लजा जाओगी।

लक्ष्मी—तुम्हें हमारी कसम सखी जरूर कहो। यह हम लोगों की बातें तो पूछ लेती हैं अपनी बातें एक नहीं कहतीं।

राम०—क्यों सखी कहूँ? कहती हूँ बिगड़ना मत।

पूर्णा—कहो साँच को आँच क्या।

राम०—उस दिन घाट पर तुमने किसे छाती से लिपटा लिया था।

पूर्णा—तुम्हारा सर।

लक्ष्मी—मैं समझ गयी। बाबू अमृतराय होंगे। क्यों है न?

यह तीनों सखियाँ इसी तरह हँस-बोल रही थीं कि एक बूढ़ी औरत ने आकर पूर्णा को आशीर्वाद दिया और उसके हाथ में एक खत रख दिया। पूर्णा ने अक्षर पहिचान प्रेमा का पत्र था। उसमें यह लिखा था—

'प्यारी पूर्णा! तुमसे भेंट करने को बहुत जी चाहता है। मगर यहाँ घर से बाहर पाँव निकालने की मजाल नहीं। इसलिए यह खत लिखती हूँ। मुझे तुमसे एक अति आवश्यक बात करनी है। जो पत्र में नहीं लिख सकती हूँ। अगर तुम बिल्लो को इस पत्र का जवाब देकर भेजो तो जबानी कह दूँगी। देखो देर मत करना। नहीं तो अनर्थ हो जायगा। आठ बजे के पहले बिल्लो यहाँ अवश्य आ जाय।

तुम्हारी सखी
प्रेमा'

खत पढ़ते ही पूर्णा का चित्त व्याकुल हो गया। चेहरे का रंग उड़ गया और अनेक प्रकार की शंकाएँ होने लगीं। या नारायण! अब क्या होनेवाला है। लिखती है देखो देर मत करना। नहीं तो अनर्थ हो जायगा। क्या बात है!!

अभी तक वह कचहरी से नहीं लौटे। रोज तो सात बजे तक आ जाया करते थे। इतनी देर तो इनको कभी नहीं लगती।

लक्ष्मी और रामकली ने जब उसको ऐसा व्याकुल देखा तो बढ़कर बोली—क्या बहिन कुशल तो है? इस समय तुमने क्या किया है?

पूर्णा—क्या बताऊँ क्या लिखा है। रामकली तुम जरा कमरे से जा के झांको तो आये या नहीं अभी।

रामकली ने आकर कहा—अभी नहीं आये।

लक्ष्मी—अभी कैसे आयेंगे? आज तो दोनों आदमी व्याख्यान देते रहे हैं। वहीं बनारस में बात बना। पूर्णा ने मना के मन का जवाब दिया और बिल्ली को लेकर खेल में दूर कर खेल दिया। आज बड़ा भी न बोला था कि बिल्ली कोई आती। एक बड़ा हुआ। बहुरूपा और पहरानी हुई। पूर्णा ने उसे देखते ही पकड़ कर पूछा—कहीं बिल्ली कुशल रही।

बिल्ली (भागा ठीककर) क्या कहूँ कुछ कहते नहीं बनता। न जाने अभी क्या होनेवाला है।

पूर्णा—क्या कहा? कुछ चिट्ठी-पत्री तो नहीं दिया?

बिल्ली—चिट्ठी कहाँ से देते। इनको अन्दर बुलाने लगती थी। देखते ही रोने लगीं और कहा—बिल्ली मैं क्या कहूँ मेरा जी यहाँ बिल्कुल नहीं लगता। मैं किसकी बाट पर करके रोया करती हूँ। वह (बाबूसाहब) कभी जब मुझे देखे तब ऐसे हैं तो बहुत समझाते हैं। एक दिन मुझे बहुत कहीं-कहीं सुनायी और बहुत समय तक धमका कर कहा—एक औरत की बी बाहरवाले बराबर बैठे नहीं रह सकते। यह कहकर बिल्ली चुप हो गयी। पूर्णा के समझ में पूरी बात न आयी। उसने कहा—चुप क्यों हो गयी। जल्दी कहो मेरा दम रुका हुआ है।

बिल्ली—इतना कहकर वह रोने लगीं। फिर मुझसे नवनीत बला के कान में कहा—बिल्ली, उसी दिन से मैं उनके ऊपर बैठते हुए देखती हूँ। वह लोग आदमियों को साथ लेकर रोज शाम को न जाने कहाँ जाते हैं। आज मैंने छिपकर उनकी बातचीत सुन लीं। बाबू की सब को बात बहुदुरगढ़ पर चोट करने की सलाह हुई है। अब मैं कैसे यह

मुआ है? हाथों के तोते उड़े हुए हैं। मुझ अभागिनी के कारण न जाने कौन कौन दुख उठायेगा।

बिल्लो की जबानी यह बातें सुनकर पूर्णा के पैर तले से मिट्टी निकल गयी। दाननाथ की तसवीर भयानक रूप धारण किये उनकी आँखों के सामने आकर खड़ी हो गयी।

वह उसी दम दौड़ी हुई बैठके में पहुँची। बाबू अमृतराय का वहाँ पता न था। उसने अपना माथा ठोंक बिल्लो से कहा—तुम जाकर आदमियों से कह दो। फाटक पर खड़े हो जायें। और खुद उसी जगह एक कुर्सी पर बैठकर गुनने लगी कि अब उनको कैसे खबर करें कि इतने में गाड़ी की खड़खड़ाहट सुनायी दी। पूर्णा का दिल बड़े जोर से धड़ धड़ करने लगा। वह लपक कर दरवाजे पर आयी और काँपती हुई आवाज से पुकार कर बोली—इतनी देर कहाँ लगायी। जल्दी आते क्यों नहीं।

अमृतराय जल्दी से उतरे और कमरे के अन्दर कदम रखते ही पूर्णा ऐसे लिपट गयी मानों उन्हें किसी के वार से बचा रही है और बोली—इतनी जल्दी क्यों आये अभी तो बहुत सवेरा है।

अमृत —प्यारी क्षमा करो। आज जरा देर हो गयी।

पूर्णा—चलिए रहने दीजिए। आप तो जाकर सैर-सपाटे करते हैं। यहाँ दूसरों की जान हलाकान होती है।

अमृत —क्या बतायें आज बात ही ऐसी आ पड़ी कि रुकना पड़ा। आज माफ़ करो। फिर ऐसी देर न होगी।

यह कहकर वह कपड़े उतारने लगे। मगर पूर्णा वहीं खड़ी रही जैसे कोई चौंकी हुई हरिणी। उसकी आँखें दरवाजे की तरफ लगी थीं। अचानक उसको किसी मनुष्य की परछाईं दरवाजे के सामने दिखायी पड़ी। और वह बिजली की तरह चमककर दरवाजा रोककर खड़ी हो गयी। देखा तो कहार था। जूता खोलने आ रहा था। बाबू साहब ने ध्यान से देखा तो पूर्णा कुछ घबरायी हुई दिखायी दी। बोले—प्यारी आज तुम कुछ घबरायी हुई हो।

पूर्णा—सामनेवाला दरवाजा बन्द करा दो।

अमृत —चलती ही रही है। हवा रुक जायगी।

पूर्णा—यहाँ न बैठने दूँगी। अमृत चलो।

अमृत —क्यों बात क्या है। इतने की कोई वजह नहीं।

पूर्णा—मेरा जी यहाँ नहीं लगता। अमृत चलो। यहाँ बावली में खूब ठंडी हवा आ रही होगी।

अमृतराय मन में मधुर सी बातें सोचते-सोचते पूर्णा के साथ बढ़े पर गये। चुनी हुई कम थी। कुर्सियाँ पड़ी हुई थीं। नौ बजे रात का समय था। चैत के दिन चाँदनी खूब छिटकी हुई। मन्द मन्द शीतल वायु बह रही थी। बगीचे के हरे भरे वृक्ष धीरे धीरे झूम-झूम कर अति कोमलपवन डोल रहे थे। चाँद चलता था कि आकाश के बीच की ज्योति इनकी बाहर इन चीजों पर चमकती है। दूर दूर के पुंजों पर ऐसे मनोहर चमक रही है मानों वह देवताओं के रमण करने के स्थान हैं। या वह सब स्वर्गिक के फूल हैं जिनकी छाया में अनुकूलता और उसकी लालिमा प्रकट किया करती थी और वहाँ सब सुन्दरी के सदृश जल के आकार ऐसा सुन्दर की रमणी के पत्ते पर प्रेम पाती लिखा था।

पूर्णा और अमृतराय कुर्सियों पर बैठ गये। ऐसे सुहावने एकांत के समय को जिसमें कि उनके दिलों पर आनन्द करता पूरा किया। अमृतराय ने पूर्णा के रसीले अधर चूमकर कहा—आज कैसी सुहावनी चाँदनी है।

पूर्णा—मेरा जी एक बात चाहता है कि मैं चिड़िया होती।

अमृतराय—तो क्या करती।

पूर्णा—तो उड़कर उस हरियाले पेड़ों पर जा बैठती।

अमृतराय—वहाँ क्या। देखो लगती कैसा अलाप रही है।

पूर्णा—इसकी कान्हा बाला मैंने कहीं नहीं सुना। कोयल की तरह कूकती है। सुनो कैसा गीत है। सुना।

कौनो सुधि कवि बिसरायो मइयाव।

अमृत —जी चाहता है उसे यहीं बुला लूँ।

पूर्णा—नहीं। यहाँ नहीं आयेगी। सुनो।

मंगलाचरण

मधुर स्वर हो गये और उसको बुद्ध मैं मैं प्यार किया। इसी से खिलौने से आकर कहा—चलिए रसोई तैयार है।

मधुरराय तो उधर भोजन पाने गये और पूर्णा ने इनकी आलमारी खोलकर पिस्तौल निकाल ली और उसे उलट-पुलट कर गौर से देखने लगी। जब मधुरराय अपने दोनों मित्रों के साथ भोजन पाकर लौटे और पूर्णा पिस्तौल लिये बैठा तो कौशलनाथ ने मुस्कुराकर पूछा—क्यों भाभी आज किसका शिकार होगा।

पूर्णा—इसे कैसे छोड़ते हैं, मुझे तो समझ ही में नहीं आता।

कौशल —भाभी मैं बता दूँ।

यह कहकर कौशलनाथ ने पिस्तौल हाथ में ली। उसमें गोली भरी और बताया कि घोड़े और एक पेंच के दबाने से निशाना लगा कर दो-तीन फैर किये। अब पूर्णा ने पिस्तौल हाथ में ली। गोली भरी और निशाना लगाकर घोड़ा दबाया मगर ठीक न पड़ा। दूसरा फैर किया। अब भी निशाना ठीक बैठा। तीसरा फैर किया। वह भी ठीक। पिस्तौल रख दी और मुस्कराते हुए चली गयी। मधुरराय ने पिस्तौल उठा लिया और कौशलनाथ से बोले—कुछ समझ में नहीं आता कि आज इनको पिस्तौल की धुन क्यों सवार है।

कौशल —पिस्तौल रखकर देख के छोड़ने को भी जी चाहा होगा।

कौशल —यही बात जब से मैं जानता हूँ। कुछ बचपना हुआ देख रहा हूँ।

मधुर —आपने कुछ पूछा नहीं।

कौशल —पूछा तो बहुत मगर अब कुछ बतलाती भी हैं तो कहके टाल गयीं।

मधुर —किसी शिकार में पिस्तौल की जरूरत पड़ी होगी। और क्या?

कमलनाथ—यही मैं भी समझता हूँ।

कौशल —शिकार इनके और हो ही क्या सकता है।

कुछ देर तक दोनों आदमी बैठे गप-शप करते रहे। जब रात बढ़ने

को आये तो लोग अपने अपने कमरों में विश्राम करने चले गये। बाबू साहब भी लेटे। दिन भर के थके थे। अखबार पढ़ते-पढ़ते सो गये। मगर बेचारी पूर्ना की आँखों में नींद कहाँ? वह बारह बजे तक एक कहानी पढ़ती रही। जब तमाम सोता पड़ गया और चारो तरफ सन्नाटा छा गया तो उसे अकेले डर मालूम होने लगा। डरते ही डरते उठी और चारों तरफ के दरवाजे बन्द कर लिये। मगर जवानी की नींद, बहुत रोकने पर भी एक झपकी आ ही गयी। आधी घड़ी भी न बीती थी कि भय में सोने के कारण उसे एक अति भयंकर स्वप्न दिखायी दिया। चौंक कर उठ बैठी हाथ-पाँव थर-थर काँपने लगे। दिल में धड़कन होने लगी। पति का हाथ पकड़कर चाहती थी कि जगा दे। मगर फिर यह समझकर कि इनकी प्यारी नींद उचट जायगी तो तकलीफ़ होगी उसका हाथ छोड़ दिया। अब इस समय उसकी जो अवस्था है वर्णन नहीं की जा सकती। चेहरा पीला हो रहा है डरी हुई निगाहों से इधर-उधर ताक रही है पत्ता भी खड़खड़ाता है तो चौंक पड़ती है। कभी अमृतराय के सिरहाने खड़ी होती [redacted], कभी पैताने। लैम्प की धुँधली रोशनी में वह सन्नाटा और भी भयानक मालूम हो रहा है। तसवीरें जो दीवारों से लटक रही हैं इस समय उसको घूरते हुए मालूम होती हैं। उसके सब रोंगटे खड़े हैं। पिस्तौल हाथ में लिये घबरा घबरा कर घड़ी की तरफ़ देख रही है। यकायक उसको ऐसा मालूम हुआ कि कमरे की छत दबी जाती है। फिर घड़ी की सुइयों को देखा। एक बज गया था इतने ही में उसको कई आदमियों के पाँव की आहट मालूम हुई। कलेजा बाँसों उछलने लगा। उसने पिस्तौल सम्हाली। वह समझ गयी कि जिन लोगों के आने का खटका था वह आ गये। तब भी उसको विश्वास था कि इस बन्द कमरे में कोई न आ सकेगा। वह कान लगाये पैरों की आहट ले रही थी कि अकस्मात् दरवाजे पर बड़े जोर से धक्का लगा और जब तक वह बाबू अमृतराय को जगाये कि मजबूत किवाड़ आप ही आप खुल गये और कई आदमी धड़धड़ाते हुए अन्दर घुस आये। पूर्ना ने पिस्तौल सर की। तड़ाक की आवाज हुई। कोई धम्म से गिर पड़ा फिर कुछ खट खट

मंगलाचरण

होने लगा। दो आवाज़ें पिस्तौल के छूटने की और हुईं। फिर धमाका हुआ। इतने में बाबू अमृतराय चिल्लाये—दौड़ो दौड़ो मदद, मदद। इस आवाज़ के सुनते ही दो आदमी उनकी तरफ़ लपके। मगर इतने में दरवाज़े पर कान्स्टेबल की टोपी नज़र आयी और प्राणनाथ और दीननाथ हाथों में सोटे लिए आ पहुँचे। और आते ही मगर दो के दोनों पकड़ लिए गए। अब कान्स्टेबल लेकर ज़मीन पर देखा तो दो लाशें दिखायी दीं। एक तो पूर्णा की लाश थी और दूसरी एक बदमाश की। एकाएक प्राणनाथ ने चिल्ला कर कहा—अरे!! यह तो बाबू दाननाथ हैं।

बाबू अमृतराय ने एक ठंडी साँस भरकर कहा—आज जब मैंने उनके हाथ में पिस्तौल देखा तभी से दिल में एक खटका सा लगा हुआ था। मगर यह नहीं जानता था कि ऐसी नापाक मनोकामना है।

प्राणनाथ—दाननाथ तो आपके मित्र थे।

अमृतराय—किसी समय में मित्र थे। अब तो शत्रु हैं।

* * *

पूर्णा को दुनिया से उठे दो वर्ष बीत गए हैं। साँझ का समय है। शीतल सुगन्धित दिन की सर्द सनसनाती हवा चल रही है। सूर्य की किरणें सुनहरी, खिड़की खिड़की से बाबू अमृतराय के सजे हुए कमरे में आती हैं। और पूर्णा के पूरे कद की तस्वीर के चेहरे को चूम चूम कर चली जाती हैं। उनकी लाली से सारा कमरा सुनहरा हो रहा है। रामकली और लक्ष्मी के चेहरे इस समय मारे आनन्द के गुलाब की तरह खिले हुए हैं। दोनों बहनें पास से हैं और जब वह खिड़की से बाहर निकलती हैं और सुनहरी किरनें उनके गुलाब-से मुखड़ों पर पड़ती हैं तो जान पड़ता है कि सूर्य आप बलैया ले रहा है। वह रह रहकर ऐसी चितवनों से ताकती हैं जैसे किसी की राह देख रही हैं। एकाएक रामकली ने खुश होकर कहा—लो वह रहे। आ गये। उनके कहने कैसे सुन्दर मालूम देते हैं। एक बड़ी सुन्दर फिटन चम-चम करती हुई फाटक के अंदर दाखिल होती है और बँगले के बरामदे में आकर रुकती है। बाबू अमृतराय उसमें से उतरते हैं। मगर अकेले नहीं। उनका एक हाथ प्रेमा के हाथ में है।

यद्यपि बाबू साहब का सुन्दर चेहरा कुछ पीला हो रहा है। मगर होंठों पर हल्की-सी मुस्कराहट झलक रही है और माथे पर केसर का टीका और गले में खूबसूरत हार और भी शोभा बढ़ा रहे हैं।

प्रेमा सुन्दरता की मूरत और जवानी की तसवीर हो रही है। जब हमने उसको पिछली बार देखा था तो चिन्ता और दुर्बलता के चिह्न मुखड़े से पाये जाते थे। मगर आज कुछ और ही मौसम है। मुखड़ा कुन्दन के समान दमक रहा है। बदन गदराया हुआ है। चोटी चोटी नाच रही है। उसकी चंचलता देखकर आश्चर्य होता है कि क्या यही पीले मुँह और उलझे बाल वाली प्रेमिन है। उसकी आँखों में इस समय एक घड़े का नशा समाया हुआ है। गुलाबी जमीन की हरे किनारेवाली बनारसी साड़ी और उन्नेे रंग की कलाइयों पर चुनी हुई जाकेट उस पर खिल रही है। उस पर गोरी गोरी कलाइयों में जड़ाऊ कड़े बालों में गुँथे हुए गुलाब के फूल माथे पर लाल रोरी की गोल बिंदी और पाँव में जरदोजी के काम के सुन्दर जूते और भी सोने में सुहागा हो रहे हैं। इस ढंग के सिंगार से बाबू साहब को विशेष करके लगाव है क्योंकि पूर्णा देवी की तसवीर भी ऐसे ही कपड़े पहिने दिखायी देती है और उसे देखकर कोई मुश्किल से कह सकता है कि प्रेमा ही की सूरत आइने में उतर कर ऐसा जौबन दिखा रही है।

अमृतराय ने प्रेमा को एक मखमली कुर्सी पर बिठा दिया और मुसकरा कर बोले — प्यारी प्रेमा आज मेरी जिन्दगी का सबसे मुबारक दिन है।

प्रेमा ने पूर्णा की तसवीर की तरफ मलिन चितवनों से देखकर कहा — हमारी जिन्दगी का क्यों नहीं कहते?

प्रेमा ने यह कहा ही था कि उसकी नजर एक लाल चीज पर जा पड़ी जो पूर्णा की तसवीर के नीचे एक खूबसूरत दीवारगीर पर धरी हुई थी। उसने लपककर उसे उठा लिया। और ऊपर का रेशमी गिलाफ़ हटाकर देखा तो पिस्तौल था।

बाबू अमृतराय ने गिरी हुई आवाज में कहा — यह प्यारी पूर्णा की निशानी है, इसी से उसने मेरी जान बचायी थी।

यह कहते-कहते उनकी आवाज काँपने लगी।

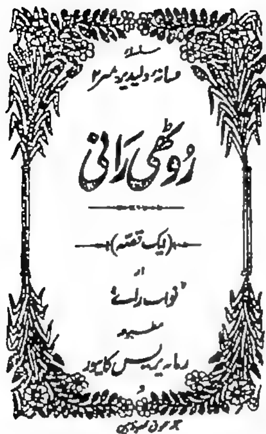
प्रभा ने मुँह घुमाकर उस लिफ़ाफ़े को चूम लिया और फिर वही लिफ़ाफ़ा के साथ उसी जगह पर रख दिया।

स्टेज में दूसरी खिड़की रोशन होती है। और उसमें से तीन युवक हँसते हुए उतरते हैं। तीनों को हम पहचानते हैं। एक तो बाबू श्रीनिवास हैं, दूसरे बाबू रामनाथ और तीसरे प्रेमा के भाई बाबू कमलाप्रसाद हैं।

कमलाप्रसाद को देखते ही प्रेमा कुर्सी से उठ खड़ी हुई और बालों से घूँघट निकाल कर सिर झुका लिया।

कमलाप्रसाद ने बहिन को मुस्कराकर छाती से लगा लिया और बोले — मैं तुमको सच्चे दिल से मुबारकबाद देता हूँ।

दोनों युवकों ने मुँह बनाकर कहा — अकेला बधाए बहना पी पीठा न छूटेगा।


سلسلہ
روٹھی رانی
(ایک قصہ)
از
نواب رائے
مطبوعہ
زمانہ پریس کانپور

रूठी रानी

शादी की तैयारी

उमादे जैसलमेर के रावल लोनकरन की बेटी थी जो सन् १५८९ ई में राजगद्दी पर सुशोभित था। बेटी के पैदा होने से पहले तो दिल जरा टूटा मगर जब उसके सौन्दर्य की खबर आयी तो आँसू पुँछ गये। थोड़े ही दिनों में उस लड़की के सौन्दर्य की धूम सारे राजपूताने में मच गयी। सखियाँ सोचती थीं कि देखें यह युवती किस भाग्यवान को मिलती है। वे उसके आगे देस-देश के राजों-महाराजाओं के गुणों का बखान किया करतीं और उसके जी की थाह लेतीं लेकिन उमादे अपने सौन्दर्य के गर्व में किसी को खयाल में न लाती थी। और सिर्फ अपने बाहरी गुणों पर उसे गर्व न था अपने दिल की मजबूती हौसले की बुलन्दी और उदारता में भी वह बेजोड़ थी। उसकी आदतें सारी दुनिया से निराली थीं। छुई-मुई की तरह जहाँ किसी ने उँगली दिखायी और वह कुम्हलायी। माँ कहती — बेटी पराये घर जाना है तुम्हारा निबाह क्योंकर होगा। बाप कहता — बेटा छोटी-छोटी बातों पर बुरा न मानना चाहिए। पर वह अपनी धुन में किसी की न सुनती थी। सबका जवाब उसके पास खामोशी थी। कोई कितना ही भूँके, जब वह किसी बात पर अड़ जाती तो अड़ी ही रहती थी।

आखिर लड़की शादी करने के काबिल हुई। रानी ने रावल से कहा कि बेखबर कैसे बैठे हो लड़की सयानी हुई, उसके लिए वर ढूँढ़ो बेटी के हाथों में मेंहदी रचाओ।

रावल ने जवाब दिया — जल्दी क्या है राजा लोगों में चर्चा हो गई है, आजकल में शादी के पैगाम आया चाहते हैं। अगर मैं अपनी

ज्योतिषी —सारे शहर में मेरे सिवा और है ही कौन। राजा-प्रजा
सब मुझी को पूछते हैं।

भारती —ज्योतिषी जी, शायद न हुजिएगा जिन कमलिनी की
कलियाँ आप कतराते हैं वह कितनी देर तक सुवासित रहती हैं?

ज्योतिषी —(चौंककर) है, यह तुमने क्या कहा। क्या मुझसे दिल्लगी
करती है?

भारती —नहीं ज्योतिषी जी दिल्लगी नहीं करती सचमुच कहती हूँ।

ज्योतिषी —इन बातों का जवाब मेरे पास नहीं। मेरा मतलब भी
कुछ तो साफ-साफ कहो।

भारती —कुछ नहीं आप अपने मुहूर्त को एक बार और जाँच लीजिए।

ज्योतिषी —कुछ कहती थी?

भारती —आप अपनी शास्त्र फिर से देख लीजिए तो कहूँ।

ज्योतिषी —बस हट हो, मुझे तो बस नहीं करते।

यह कहकर ज्योतिषी को बस्तर बखे गये मगर फिर हाथ-खिसकर
पोथी निकाली शास्त्र को खूब अच्छी तरह ओला और उँगलियों पर गिन
गिनकर बोले मुहूर्त में कोई दोष नहीं है।

भारती —(उदास स्वर में) तो फिर किस्मत ही फूटी होगी।

ज्योतिषी —(चौंककर) नहीं मैंने जनमपत्री देखकर मुहूर्त
निकाला था।

भारती —क्यों जनमपत्री भी देखी है। तुम्हारे मुहूर्त में तो कोई
भी भी दुख भोगना लिखा है।

ज्योतिषी —(तड़ को पूछकर) तो क्या राजकुमार रूप-रोग करते
रहते हैं?

भारती —हाँ रात भर महलों में बोती काटते हैं रहे, सब हाल हुई
है कि धाती के बजाय वेश्या में वहीं मर जायें।

ज्योतिषी —अरे, राम राम। ऐसे राजकुमार को धिक्कार है।

भारती —महाराज इस वक्त इन बातों को तो रहने दो मगर किसी
की कोई तदबीर हो तो बतलाओ।

ज्योतिषी — जब रावलजी ही को बेटी पर रहम नहीं आता तो मैं गरीब ब्राह्मण क्या कर सकता हूँ।

मारीली — इन्सान चाहे तो सब कुछ कर सकता है।

ज्योतिषी — तू ही बता मैं क्या करूँ?

मारीली — अच्छे ज्योतिषी हो! राजदरबारी होकर मुझसे पूछते हो कि मैं क्या करूँ।

ज्योतिषी — राजदरबारी होने से क्या होता है। तूने सुना नहीं गुरु गुरु विद्या और सिर सिर बुद्धि।

मारीली — तो फिर मेरी तो यही सलाह है कि राव मालदेव को सावधान कर देना चाहिए।

ज्योतिषी — हाँ ऐसा हो सकता है।

मारीली — तो क्या मैं बाई जी से जाकर कह दूँ कि तुम्हारा काम हो गया।

ज्योतिषी — हाँ ऐसा हो सकता है।

मारीली — जी हाँ?

ज्योतिषी — अच्छा मैं जाता हूँ।

शादी

दिन ढल गया। बाजार में छिड़काव हो गया। लोग बारात देखने के लिए घरों से उमड़े चले आते हैं। ज्योतिषी ने दरबार में जाकर रावल से कहा — अब अगवानी करने का समय पास आ गया है। अब सवारी की तैयारी का हुक्म दीजिए।

रावल — बहुत अच्छा। बारातवालों को भी इसकी खबर कर दो।

ज्योतिषी — हाँ खूब याद आया एक बात मुझे मारवाड़ के ज्योतिषियों से पूछनी है।

रावल — वह क्या?

ज्योतिषी — जन्मपत्री से तो नहीं पर बोलते नाम से राव जी को आज चौथा चन्द्रमा और आठवाँ सूरज है।

राघव—तो इससे क्या मुहूर्त तो आपने अलग्यपी ही निकाला है।

ज्योतिषी—महाराज पुकारने के नाम से भी यह हर्ष करते हैं। बीचा बच्चा और आठवां सूरज अनुकूल होता है। कोई यह बाछड़ी नहीं है, नहीं तो

राघव—(जी में) क्या बच्चा होता भी कोई बाछड़ी यह भी होता जाकि तीनों अनुकूल एक समय हो जाते। (प्रकट) बारबार क्या राज्य है। यहाँ ज्योतिषियों की कमी नहीं है। उन्होंने बनकर सब बातों को विचार किया होगा। आप कुछ न कहियेगा नहीं तो कहीं आगबाह कह ही जायगा।

ज्योतिषी—उन्हें बंधेल कर ऐसा मेरा धर्म है। मैं आपके खानदान का हित चाहनेवाला हूँ। मैं अभी जाकर उनसे कहता हूँ कि विपत्ति को काटने की कोई युक्ति कीजिए।

राघव—क्या युक्ति हो सकती है?

ज्योतिषी—यही दान-पुण्य आदि।

राघव—यह सब मैं अपनी तरफ से कर दूँगा। उनसे कहने की क्या जरूरत है।

ज्योतिषी—नहीं यह काम उन्हीं की तरफ से होना चाहिए।

राघव—क्या मेरी तरफ से होने में कुछ बुराई है?

ज्योतिषी—अपनी तरफ से तो तब दान कराया जाता जब कोई भी के यह अशुभ होते।

राघव—आज कई सौ का यह फैसा है।

ज्योतिषी—बहुत अच्छा बहुत गुण। फिर औरत के यहाँ का बच्चा या पुत्र होना अधिकतर उनके पति के यहाँ पर आधारित होता है। इसलिए बाईं जी का भी यही यह समझना चाहिए जो राज जी का है।

राघव—अच्छा तो मारन में हो जाए। देर न कीजिएगा यहाँ की काम है।

ज्योतिषी—(कुछ सोचकर) क्या और जाना।

रावल से हुक्म पाकर ज्योतिषी जी खुश-खुश वहाँ से चले। राव मालदेव जी को खबर हुई कि ज्योतिषी राजीजी आते हैं। राव जी ने कहा — उनका बड़े सम्मान से स्वागत करो। वे बड़े नामी ज्योतिषी हैं। वे क्या उनके बेटे चण्डी जी भी ज्योतिष विद्या के बड़े पण्डित हैं।

चोबदार और छड़ीदार दौड़े और ज्योतिषी जी को हाथों हाथ ले आये। ज्योतिषी जी आशीर्वाद देकर बैठ गये। राव जी ने कुशल-मंगल पूछकर कहा — आपने कैसे आने का कष्ट किया?

ज्योतिषी — (इधर-उधर देखकर) कुछ साइत बिचारनी है। यह सुनते ही लोग हट गये। ज्योतिषी जी राव साहब से दो-दो बातें करके चल दिये। राव जी को बड़ी चिन्ता हुई, फ़ौरन सरदारों को बुलाकर सलाह-मशविरा किया कि ऐसी हालत में क्या करना चाहिए।

इतने में नक्कारों की आवाज़ आयी चौतरफ़ा शोर मचने लगा कि रावल जी की सवारी आयी। तब राव जी भी सिर पर मौर और माथे पर सेहरा बाँधकर अपने डेरे से बाहर निकले और घोड़े की पूजा करके उस पर सवार हुए। बरात बड़ी कुछ दूर जाकर सब जुलूस थम गया। फ़र्श-फ़रूश तकिया-मसनद लगा दिये गये। रावल और राव दोनों अपने-अपने घोड़ों से उतरे और गले मिले। फिर निशान का हाथी आगे की तरफ़ बढ़ा और उसके साथ दोनों महाराजे क़िले की तरफ़ चले। दरवाज़े पर पहुँचकर रावल जी तो अन्दर तशरीफ़ ले गये और राव जी तोरण बाँधने की रस्म अदा करके पीछे पहुँचे। रनिवास में फिर दोनों मिलकर एक साथ मसनद पर बैठे।

राजमहल में शादी की तैयारी हो गयी। आख़िर राव जी को बुलाने आया। राव जी के साथ रावल जी भी उठे मगर राव के सरदारों ने उन्हें रोका कि आप हमें अकेला छोड़कर कहाँ जा रहे हैं। रावल जी ने झाँसा देकर चाहा कि यहाँ से चला जाऊँ, मगर कौन जाने देता है। राव के सरदारों ने उनका हाथ पकड़कर बीच में बिठा लिया। अब तो लेने के देने पड़ गये। आते थे राव को मारने, अब अपनी ही जान के लाले पड़

गये। उनके बराबर भी सब छिट्टी-छिट्टी शुरू गये। इसपर राम जी बैठके धीरे से टीनाव में दाखिल हो गये।

धमामी रवोंगों में पहुँचते ही उनके भी मां ने राम जी की आरती उतारी उनके माथे पर सही का टीका लगाया और भी से कहा कि ऐसे ही मेरा कलेजा ठंडा रहे। इसके बाद नाक दाँतकर अपना कुड़ुा उनके गले में डालकर उन्हें बंदरी में ले आयी।

बाह्मन वेद मंत्र बड़े मधुर स्वर से पढ़ने लगे। आग में आहुति पड़ी। हवन होने लगा। राम जी का हाथ उनके हाथ से मिलाया गया। उनके माथे हुई और राम जी पीछे-पीछे चले। तीन बार हवन कुंड के परिक्रमा की। तब औरतें यह गीत गाने लगीं—

पहली भौंरी बाबा दुलारी कुँवारी
दूजी भौंरी काका दुलारी कुँवारी
तीजी भौंरी बीरन दुलारी कुँवारी
चौथी भौंरी भई पराई

गीत का मतलब यह है कि बाप लड़की का पालन करता है। पहला है जब बाप से बड़े मिलता है, तो वह पूरा जब वह शादी के माथे पर बड़ी का टीका लगाती है। उसके बाद वेद और शास्त्र के अनुसार लड़की का विवाह होता है। उस वक्त तब पर बाबा नाना और बुआ का बहुत हक रहता है। बाबा का कुछ कहना ही या मसलन करती हो तो पहले कहे तब। मगर सकता है। नाना इसके बाद तक और बुआ तीसरे फेरे में लड़की पराई हो जाती है। फिर किसी का उस पर कोई हक बाकी नहीं रह जाता। इसलिए चौथे फेरे के पहले ही दूसरा दुल्हन के कानों का जाता है कि कैसे उस वक्त से वह उसका पति और स्वामी माना जाता है। इस गीत से यह भी प्रकट होता है कि दुआ का हक लड़की पर बहुत माना गया है।

---

१ कैसे घर की वों बराबर रखना होने के पहले गये हुए मिलती है कैसे ही बाद उनके माथे पर रही लगती है। पानी उसे अपनी लड़की का पति मान लेती है। मसलन है रही की बात सही।

चौथे फेरे में राव जी आगे हो गये और उमादे उनके पीछे चलने लगी। तब औरतों ने यह पिछला बंद गाकर अपना गीत पूरा किया —

चौथे फेरे बाई हुई रे परायी।

गीत सुनते ही माँ और बहनों के दिल भर आये। आँखों से आँसू टपकने लगे कि अब प्यारी उमादे परायी हो गयी। इस तरह यह शादी बैसाख सुदी तीन सम्वत् १५९१ की रात को अच्छी तरह सम्पन्न हुई।

रंग में भंग

शादी हो जाने के बाद लड़की अपने महल में चली गयी। बड़ी बूढ़ी औरतें इधर उधर खिसक गयीं। बहू की सहेलियाँ राव जी को उनके महल की तरफ़ ले चलीं। रास्ते में एक जगह गाना हो रहा था। कितनी ही चन्द्रबदनी सुन्दरियाँ सुहाग के गीत अलाप रही थीं। राव जी चलते चलते वहाँ फिसल पड़े। औरतों के गाने और रूप रंग ने उन पर जादू कर दिया। वहीं डट गये। खवासें दौड़ीं। एक ने चाँदनी दूसरी ने सोजनी और तीसरी ने तकिये लगा दिये। पाँच-सात सखियों ने मिलकर छोटा-सा शामियाना खड़ा कर दिया। राव जी लट्टू हो गये फिर क्या था वहीं बैठ गये। दो खवासें दायें-बायें मोरछल लेकर खड़ी हो गयीं दो चँवर हिलाने और पंखा झलने लगीं। गर्मियों की सुहानी रात। चाँदनी छिटकी हुई थी। ठण्डी हवा चल रही थी। भीनी भीनी खुशबू चारों तरफ़ फैली हुई थी और राव जी उस परिस्तान में इन्द्र बने परियों से चुहल और छेड़-छाड़ कर रहे थे। गाइनें चुप थीं और सामने कुछ फ़ासले पर चन्द नाचनेवालियाँ बनी-ठनी खड़ी इशारे का इन्तज़ार कर रही थीं।

कल्लोल करनेवालियों में से एक लड़की ने आगे बढ़कर राव जी को सलाम किया और सोजनी से कुछ हटकर बैठी और गानेवालियों को इशारा किया कि हाँ कुछ छेड़ो अभी मुँह क्या तकती हो।

बस तबले पर थाप पड़ी और गानेवालियाँ ऊँचे और मीठे सुरों में गाने लगीं —

मंगलाचरण

भर ला दे, सुघर कलाली
पीवनवाली म्हारों रै

इस लड़की ने भी वाल्मीकि के गाने के मशहूर भी पुरे के हुटे प्याले में लाल शराब भरकर हँसते हुए राम जी के सामने पेश की। उन्होंने बड़े चाव से लेकर उसका पी लिया और प्याला अप्सराओं में भरकर लौटा दिया। वाल्मीकि ने उठ कर सलाम किये और अपने गले के बहुत तोड़कर उसके मोती राम जी पर से निछावर करके नाचनेवालियों की तरफ फेंकने लगा। नाचने वाली के सुरों में गाने लगी।

बिरखा देखे बादल करे मोरो पपइयों मोर
बदरा लगा देखा लगा राजकुंवर राठौर

(वर्षा में पूरे वन में बादल पहाड़ों में मोरों, चिड़ियों में बादल और चिड़ियों में सेना उनका उठाया है। ऐसे ही सब राजकुमारों में राठौर का घराना सबसे ऊँचा है।)

वाल्मीकि ने फिर प्याला भरकर राम जी को दिया और गाने लगी—

लाल दियो रस भरो प्याला राखो मेन
थेरो गुम्हारा मन भरे सुख सरसे मन।

(प्याला दिया और लाने की वजह शराब लाल रखा जिससे तुम्हारा मन भरे और बदन खुश हो।)

लाल दियो प्याला लाल बीकानेर
लाल दियो लाहुना लो मयों ला केर

(शराब ही दिया प्याला है और शराब ही बीकानेर। है साहब कबूल कीजिए, इसका एक एक बूँद सौ-सौ रुपये का है।)

सोरठ तो दूहा भलो कपड़ा भलो सफेद
नारी तो नवली भली घोड़ा भलो कुमैत
भर ला ऐ सुघड़ कलाली।

(दोहों में दोहा कपड़ों में सफ़ेद कपड़ा औरतों में नवेली औरत और घोड़ों में कुमैत घोड़ा अच्छा होता है। ऐ छोकरी शराब ला।)

इन गाने-बजाने और तपस्वियों का व्रत भंग करनेवाली स्त्रियों के नाज-दिखाने ने राव जी का दिल छीन लिया। उस पर गानेवालियों का समवेत स्वर में तान लगाना और भी सितम ढा गया। राव जी ऐसे बेसुध और आनन्द की सुरा में ऐसे मस्त हुए कि अपनी नयी-नवेली दुल्हन को भूल गये जो उनकी प्रतीक्षा में अपनी बाँहें खोले खड़ी थी।

राव जी की राह देखते-देखते उमादे की नशीली आँखें झपकने लगीं। कितनी ही बाँदियाँ उनको बुलाने के लिए गयीं पर राव जी उन परियों के जमघट से न उठ सके, यहाँ तक कि रात बहुत कम बाकी रह गयी।

रानी ने जब देखा कि वह और किसी के बुलाने से नहीं आते हैं तो अपनी चपल सहेली भारमली से कहा कि अब राव जी को लाना तेरा ही काम है। उसने कहा कि राव जी इस वक्त आपे में नहीं हैं मुझे न भेजिए। मगर उमादे ने न माना और उसी को भेजा।

इधर शादी की महफ़िल भी सजी थी। गायनें तैयार बैठी थीं। शराब की बोतलें चुनी हुई थीं। गजक तश्तरियों में भरी हुई थी। सिर्फ़ राजा के आने की देर थी। रानी को यकीन हो गया कि भारमली गयी है तो राजा को जरूर ही खींच लायेगी। गानेवालियों को इशारा किया कि कुछ छेड़ो और वह मीठे सुरों में गाने लगीं—

महलाँ पधारो महाराज हो
चाक रा भारी महलाँ पधारो महाराज हो
कसरी जोहूँ सेजाँ बाट हो

(महाराज महलों में तशरीफ़ ले चलिए। ऐ शराब का नशा

मंगलाचरण

उजालेवाले महलों में चल। मैं बहुत देर से सेज पर तेरे इन्तज़ार में बेचैन हो रही हूँ।)

मोती महल के पुलकित गीत सुनकर उसके पुरुषार्थी और फिर मुस्कराकर बाँहें गर्दन पर डालीं। इस वक्त उसके यौवन के नशे में मस्त किए थी जो कंपित हो रही थी, बयान नहीं की जा सकती। जवानी बहकियाँ उस दम पर दौड़ती जाती थीं कि सेज उनका की जा नहीं रहे हैं। प्रेमिका इन्तज़ार में बेचैन हो रही थी। मालिकिनियों के गीत का दूसरा पद गाया —

मधुर पुलक परस नयो कछुरी झकोर
हरखर सब सखी और नव बेकलकर
बहुरी पवारी बहुरस हो।

(मधुर पुलक प्रभाव मारवाड़ काहिर, नमी हैरानर, मकोर और बेकलकर वह सब रस नारियों के हैं। वे महारस महलों में तबदील के बसिए।)

सब की बहकियों ने उसके पर से कुछ सखियाँ बोलकर करके मालकों को दी और उन्होंने दूर होकर यह दूसरा गीत शुरू किया —

तारे छबी रस पूरा छबी रस
मोती छबी है सब प्यारे सेज बैठो जानो।
रस मस्ती दूसरे रस

(ये तेरे रस जवानी के नये कहिए। उन तारों के सेज छूटी से और मोती मस्ती के जोश से भरी हुई हैं और प्यारे नज़र आकर बुन रहे।)

इतने में एक दरवाज़े ने कहा कि यहाँ तक भी नये में चूर बैठे हैं और सुराही और प्याले के गीत बजाने जा रहे हैं। यह सुनकर मालिकिनियों ने वहाँ भी गीत शुरू कर दिया कि उनके पर रस्म किये —

भर ला ऐ सुघड़ कलाली दारू दाखाँ री
सोने री भट्टी करूँ रूपे री घर नार
हाथ पियालो धन खड़ी पीयो राजकुमार

(ए सुघड़ साकी अंगूरी शराब भर ला। सोने की भट्टी और चाँदी का भाँडा बनाऊँ। रानी अपने हाथ में प्याला लिये खड़ी है राजकुमार तुम पियो।)

आम फले पतवार सों महू फले पतखोय
ताको रस साजन पिये लाज कहाँ ते होय

(आम पत्तियों के साथ फलता है और महुआ अपने पत्ते खोकर। उसका रस साजन पीता है फिर उसे लाज क्योंकर आये? जिस वक्त महुए के फूल लगते हैं सारे पत्ते झड़ जाते हैं। पत में श्लेष है। पत का मतलब पत्ता भी है और लाज भी। मतलब यह है कि शराब बेशर्म महुए से बनती है तो शराब पीनेवाला क्योंकर लाज निभा सकता है।)

महलों में पुकार पड़ी है और ऐ बेटे राजकुमार, तुमको आने की फुरसत नहीं।

इधर चंचल शोख भारीली कुछ इस अन्दाज से इठलाती लचकती बल खाती राव जी के पास पहुँची कि वह जवानी और शराब की मस्ती में उसी को रानी समझकर उसके साथ चल दिये। भारीली ने भी उन्हें वहाँ से हटा ले जाना ही ठीक समझा। मगर वह भी चुलबुली तबीयत की लड़की थी राव की नजर अपने ऊपर बेढब पड़ते देखकर लजा गयी। यह न कहा कि मैं रानी नहीं बाँदी हूँ है। बल्कि राव जी को धोखे में डालकर अपने घर ले गयी। रानी उमादे ने जब यह सुना तो सन्नाटे में आ गयी और उसकी गाइनें गाने लगीं—

भर ला ऐ सुघड़ कलाली
पहली तोकों कलाली हमारा मारो जी रे से भामिली
अब छे भालीभारी घर नार

संकलनवरण

(मन का है गुस्र करुली संगूरी सरव का। पहले तो करुली
उसकी प्रेमिका थी पर अब तो उस मालिकाइ की मरवाली हो गयी है।)

बिल्लियाँ मारे बिलाव मगर के रसियाँ
परदेसियाँ पर जानना बड़ी के सिलियाँ

(जैसलमेर देश में जब बिल्लियाँ लपकती हैं यह मगर ही मगर
बनी जाती है। ऐसे ही परदेसी साजन से मिलने का यकीन नहीं होता।)

गहरी ताती खुली ताती बड़ी कयाम
जाती ताती हाथों लिख सो लिख दे नाम

(मैं तो ही थी उनके लिए पर अब वह तांती हुई कयाम बनती है।
कोठी बंध दी गयी थी तब वह लिया है छिन-छिन करती है।)

उमरावों का बिलाव मगन राम जी की रस स्वामिनिष्ठा से ठगा पड़ गया। उसकी बनी हुई अनानी नहीं मानव दिन के क्या क्या उसने जीत मार रही थी क्या क्या होकर देता हो रहे थे उसने पति की स्वामी की क्या-क्या बेगारियाँ न की थीं गुराली और आला नाच और गाने बनाव गुलाम में कोई कसर न छोड़ी थी मगर अफ़सोस सब सामान धरा रह गया। वह झल्लाकर उठी नाकवालियों से कहा: गुम कोस काली और गुराली ने साथ उठाकर पटक दिए। वह बात की नाराजी के लिए उसने बहुत लेकर बजाया था और अब और दूसरे की हालत से अलगवा पड़ा था उसने थोपा दिया और वह नगाड़ा जा गया। वह क्षण की तबलाकार मुँह लपेटकर सो रही। महल में सन्नाटा छाया जमाना मुश्किल है। मगर रात उसके दिल में पैदा होते थे उनका बयान करना मगर रात मालदेव वहाँ न बहक जाते तो अब तक वहीं कमरा स्वप्न बना होता अपूरी मरात के और बनते होते सुहागे रातों में कमरा गूँजता होता—और प्रमी और प्रेमिका एक दूसरे के दर्शन के सदे होते। मगर यह बातें अब कहाँ। क्षोभ हुआ। रात भी का नशा उतरा। फिर होश की दशा समझे हुए थे उसे पता तो पानी का पड़ा और बिजली लिये आई

महल की तरफ जा रही है। समझ गये बड़ा धोखा हुआ। उसी वक्त घबराये हुए महल में गये। वहाँ का सन्नाटा महल की वीरानी और रानी की बेरुखी देखकर दिल बैठ गया बोले—

मान गुमानी कामिनी उमादे बड़ भाग
रूठी बैठी सेज में मालदेव पिया को त्याग।

(ऐ बड़े रुतबेवाली माननीय उमादे, तू जिद में आकर क्यों अपने पिया से रूठी सेज पर बैठी हुई है।)

राव जी को देखते ही वह उठ खड़ी हुई पर मुँह से कुछ न बोली। भवों की कमान को खींचकर, उसमें पलकों के तीर का निशाना लगाये हुए, हाथ मरोड़े मुँह मोड़े गोरी पी से रूठी बैठी है।

बन्दियाँ दूर-दूर चुप खड़ी थीं। भारमली का डर के मारे खून सूखा जाता था। पर गानेवालियाँ बन्द न हुईं। वे गाने लगीं—

ऐ शराब में मस्त महाराज!
तुम्हें शराब किसने पिलायी!

राव जी ने बहुत कहा कि मैं नशे में था इस वजह से ऐसी गलती हुई मगर रानी ने एक न सुनी। गानेवालियों ने भी राव के इशारे से बहुत से रूठे हुए को मनानेवाले गीत गाये मगर रानी पर कुछ असर न हुआ। इस झमेले में दिन बहुत चढ़ आया। आखिरकार राव जी यह सोचकर कि फिर मना लेंगे महल से बाहर निकल आये। उसी वक्त उनके सरदार भी रावल जी के पास आ डटे।

राव जी ने फिर महल के अन्दर जाकर अपनी बात झगड़े में डालना ठीक न समझा। बाहर ही से रुखसत की दरख्वास्त की। रावल जी भी यही चाहते थे कि भेद न खुले चुपचाप बिदाई हो जाय।

उमादे राव जी के साथ जाने को राजी नहीं होती थी। रानीजी भटियानी ने यह सुना तो उससे कहा कि कल तुम्हें राव जी की बात प्यारी

तो क्या बात यह प्यार आता रहा? उनकी बात अभी तक करते थे।
और इस बात सबसे का मौका नहीं है।
यह सुनकर रानी नर्म हुईं। फिर राजा को कमरे की ओर फिर
वन की मालकिनकी जो पत्नी को पति की पूजा करने की शिक्षा देता है।
माँ के पास गयी कुछ देर लक्ष्मी से बने फिरकर रोती रही फिर से
मुँह पानी लिया और चुपचाप मुख्याक में बैठ गयी।
राव जी ने कहीं से उनका देखी थी, मार्टलों को भी अलग एक रब से
किता लिया कैसा अपनी ठकुरी को अपने साथ ले गयी। क्योंकि भी
पहुँचाने के बहुत से साथ ही गये। उनके ईर्ष्या को भी पहले से रात के
समझकर से आ गये थे क्योंकि इन दोनों को डर था कि रावल जी कहीं
पीछे से उनकी मरम्मत न करें क्योंकि रावल जी को सौंख रहे गया था
कि इन्हीं बातों को मालिक से छिपाकर हाथ से गया।

रानी की हठ

रानी उसके अपनी जिद पर कायम रहीं। राव जी से न बोलती थीं।
न उनके अपने पास बैठने देती हैं। राव जी आते हैं तो वह उनका मुँह
देख के लज्जा करती हैं मगर फिर अलग कर बैठती हैं। उनके मातहत
अन्दाज और अलग सूरत ने राव जी को बहुत मोह लिया है। वह बहुत
चाहते हैं कि कुछ न हो तो वह जरा हँसकर बोल ही दें। मगर रानी
उनको बिलकुल खातिर में नहीं लातीं। इनके भाव ही दाव वह
मार्टलों से भी कुछ छिपी रहती है। मार्टलों अपनी मामूली काम किये
जाती है और बात बनाकर राव जी से हँस बोल भी लेती है।
राव जी समझते थे कि मार्टलों ही ने मेरी आज्ञा बनायी। वह उस [illegible]
कहती कि आप ही की बदौलत मेरी यह सावरती हो रही है। [illegible]
नाथ आपके हाथ है। अगर आपने मन मैला किया तो मैं [illegible]
रहूँगी। रानीजी क्योंकि ने भी कहा कि अगर मार्टलों [illegible]
बचाती तो भी देखा मैंने आपको जो है यह इसलिए न [illegible]
राव भी इतना तो जानते थे कि रावल जी को [illegible]

मुझे ज्योतिषी जी ने दी और ज्योतिषी जी को भारीली से इसका पता लगा मगर वह यह न जानते थे कि भारीली से कहनेवाला कौन था। उसका हाल तो जब मालूम होता कि रानी उमादे अपने मुँह से कुछ कहती। मगर वह तो भारीली राव जी और ज्योतिषी सबों से ऐसी खिंच गयी रही थी कि ज़बान ही न खोलती थी। उसका धर्म यह कहता कि तेरा यों रूठे रहना शोभा नहीं देता। मगर उसका दिल नहीं मानता था। वह जब तबीयत को दबाकर कुछ बातचीत करने की नियत करती तो कोई ख़याल पकड़ लेता। बेचारी अपने दिल से लाचार थी।

भारीली उमादे की इस ख़ामोशी से डरती रहती है कि कहीं मुझ पर बरस न पड़े। एक दिन दिल कड़ा करके वह उसके पैरों पर गिर पड़ी और गिड़गिड़ाकर कहने लगी कि बाई जी आप जो चाहें सोचें आपको अख़्तियार है। मगर मैंने तो उस वक़्त भी आपकी भलाई ही की थी जब आपने मुझे राव जी को लेने के लिए भेजा था क्योंकि महल से बाहर निकलते ही मुझे संदेह हुआ कि कोई आदमी बनावटी भेस में राव जी पर ताक लगाये हुए है। इसलिए मैंने उन्हें आपके महल में लाना ख़तरे से ख़ाली न समझा और अपने घर लिवा गयी। राव जी नशे में मतवाले हो रहे थे। रात भर सोते रहे और मैं कटार लिये खड़ी रही। जब उनकी नींद खुली और वह अपने होश में आये तो मैं आपकी ख़िदमत में हाज़िर हो गयी। अगर इसमें कुछ मेरी ख़ता हो तो आप माफ़ करें।

उमादे ने यह सब बातें सुन तो लीं पर मुँह से कुछ न बोली। भारीली खिसियानी होकर चली गयी।

बारात जोधपुर पहुँच गयी। दीवान और मंत्री बड़ी धूमधाम से अगवानी को आये। कोसों तक फ़ौज और तमाशाइयों का तांता लग गया। क़िले में पहुँचते ही रनिवास की तरफ़ से बाजों के साथ फूल-पत्तों से सजा हुआ एक कलसा आया। राव जी उसमें अशर्फ़ियाँ डालकर अन्दर चले गये। वहाँ उनकी माँ रानी पद्मा जी ने बेटे और बहू पर से अशर्फ़ियाँ निछावर कीं। बेटे और बहू ने उनके पैर चूमे। अन्दर जाकर देवी-देवताओं की पूजा की गयी और उमादे एक सजे हुए महल में उतारी गयी।

राव जी के और भी कई रानियाँ थीं और उनके बाल बच्चे भी थे। पटरानी मारवाड़ के राजा भीम की बेटी लाछकँवर थी। राव जी का बेटा बखतर राय इसी रानी से पैदा हुआ था। लाछे की रानी कछवाई इस रानियों में सुन्दर थी। उसने राव जी का मिजाज बिलकुल अपने काबू में कर रखा था। मगर जब से उसको मोहबर खबर मिली थी कि उमादे मुझसे सुन्दरता में कहीं बढ़कर है तब से उसकी छाती पर साँप लोट रहा था। डरती थी कि कहीं राजा साहब मुझे नजरों से गिराकर उसके के बस में न हो जायें। लेकिन जब बात उसने सुना कि वह यहाँ राव से रूठ गयी और यहाँ आकर भी नहीं मिलाप है तब उसकी जान में जान आयी।

माँ से रुखसत होकर राव जी कासी रानी कछवाई के महल में तशरीफ ले गये। उसने बड़ी खुशी से दौड़कर राव जी के पैर छुए और अपना मोतियों का जड़ाऊ हार तोड़कर उन पर मोती निछावर किये। यह उमादे के लिये होते और सलोनेपन से बहुत किस्म और नेक-सगुन से खुश हो रहे थे। रानी कछवाई ने इस मनमानपनी और हुलसाने को देखा। रानी के इस सुनकर कहीं हुए और उसे बात कहे तो एक दिन में भी कहानी सी मिल जायें। थी कि अगर बात करें तो एक दिन में भी कहानी सी बनी है।

राव जी—पटरानी क्या है, एक नाटा है।

कछवाई—(हँसकर) बाद आपके नहीं इज्जत की। नाटा नहीं हाँसे कहीं कहानी है।

राव जी—हाँ कहानी तो है मगर वक्त की बनी है। वक्त की बाबी सुनता।

कछवाई—ईश्वर ने सब दिया है तो कमाल क्यों न करें। क्या आपको वह बात भी न भायी।

राव जी—आखिर कमाल की भी कोई हद है।

कछवाई—भला जी एक बड़े घर की बेटी हो एक बड़े राव की रानी हो, नखरी दुलहन हो नौजवान हो, सुन्दर हो, उसके कमाल की क्या हद हो सकती है। मुझ जैसे गरीब घर की क्या कमाल करेगी।

राव जी — यह सब तुमने ठीक कहा। मगर उसका स्वभाव सचमुच बहुत कठोर और रूखा है। तुम उससे मिलकर खुश न होगी।

सरूपदेई — अच्छा तो आप तशरीफ़ ले चलिए, हम सब आपके साथ-साथ चलेंगे।

राव जी — (हँसकर) ठीक है, तुम्हारे साथ चलकर अपनी बेइज़्ज़ती कराऊँ!

सरूपदेई — (गर्म होकर) यह क्या उसका बाप भी आपकी बेइज़्ज़ती नहीं कर सकता।

राव जी — औरत चाहे तो पति को बहुत कुछ हीन कर सकती है। अगर तुम्हारे सामने वह मुझसे मुख़ातिब न हुई तो बतलाओ मेरी बेइज़्ज़ती हुई या नहीं?

सरूपदेई — जब आप इतनी-सी बात में अपनी बेइज़्ज़ती समझेंगे तो उसका घमण्ड क्योंकर मिटेगा और कौन मिटायेगा?

राव जी — हाँ यही देखना है।

उमादे और उसकी सौतिनें

रानी सरूपदेई ने सब रानियों से कहला भेजा कि महारानी से मिलने के लिए तैयारी कीजिए। दूसरे दिन सब रानियाँ बन-ठनकर बड़े ठस्से से उमादे के महल में आयीं। उमादे ने उठकर रानी लाछलदेई को सबसे ऊपर बिठाया और ज्यादातर उसी से बातचीत की बाकी सब रानियों से मामूली तौर पर मिली और बहुत कम बोली। इसलिए वह दिल में बहुत झुँझलायीं और उसकी शकल-सूरत को देखकर तो उनके दिलों पर दाग़ पड़ गये।

लौटने पर लाछलदेई तो अपने महल में चली गयी बाकी रानियाँ सरूपदेई के महल में जमा होकर मशविरा करने लगीं और बहुत दिमाग़ ख़र्च करने के बाद यह राय तय पायी कि उमादे तो रूठी ही है राव जी को भी जोड़-तोड़ लगाकर उससे नाराज़ करा देना चाहिए ताकि वह उसके महल में आना बिल्कुल छोड़ दें। क्योंकि अगर कभी उसने हँसकर राव जी की

तरह देख लिया तो वह उसी के हो जायेंगे। इसी से राम जी का सब

और पूछा—कहाँ मछली का कैसा है?

सरस्वती—है तो बहुत बड़ी पर सुनहरा बहुत है।

राम जी—तब भी पुतलियाँ भी सजती होंगी।

सरस्वती—हुँ इसे क्या की बात जब वह कल जाय।

राम जी—जिसे पुतलियाँ वाली होंगी वहीं पास जायगा।

सरस्वती—हो बात की एक बात तो कहीं है।

तब राम जी ने दूसरी रानियों से भी यह पूछा। रानी पार्वती ने कहा—महाराज वह बड़ी वर्णिका है। उसे बताकर हमें क्या भी तो को भी नहीं समझती।

रानी रानी हीरादेई ने कहलाया—महाराज कुछ न पूछिए उसने जिया वह उसको जानकर समझती है।

मझली रानी काशीदेई बोली—मैं तो जानकर बहुत पछताती। उसकी सी ऐसी लिपि छोटी न जाने कहाँ से लाती। उसकी आँखों में न जब है न बातचीत में लाज। मैं तो अपनी उसके पास न जाने दूँगी।

तीसरी रानी जाता ने कहा—वह तो मारे घमण्ड के मरी जाती है। न जाने की इज्जत है न बड़े की खातिर। ऐसी महारानी के पास कोई जाकर क्या करे।

चौथी रानी सुन्दर बोली—महाराज मैंने बहुत औरतें देखीं एक से एक सुन्दर मगर ऐसा फिरा हुआ मिजाज किसी का न देखा। न जाने उसके गोरे बदन में कौन सा भूत समा गया है।

रानी रामबाई ने कहलाया—मोटी बिल्ली है तो क्या लक्षण तो तो कोई के भी नहीं हैं। बड़े घर का बनी है नहीं तो सारा वनवा कर छूटा।

छोटी रानी गौरनदेई बोली—जवानी के नशे में दीवानी हो रही है। यह नहीं जानती जवानी सब पर आती है, कुछ उसी पर नहीं है। कल जवानी जाती रहेगी तो यह सब दिमाग खाक में मिल जायगा। यह सब अहकों की बातें सुन सुनकर राम जी को भी गुस्सा आ गया।

उन्होंने उमादे के यहाँ आना-जाना कम कर दिया। कभी आते भी तो उसे एक निगाह देखकर चले आते। उमादे भी सिर्फ़ उनके आदर के लिए खड़ी हो जाती कुछ बातचीत न करती।

राव जी के दो और महारानी रानियाँ भी उनसे यह उमादे के बारे में कुछ बातचीत न करते क्योंकि वह जानते थे कि उन्हें उमा की शिकायत नागवार गुज़रेगी। वह भी राव जी से कुछ न कहतीं पर जी में यही चाहतीं थीं कि अगर उनका उमा से मिलाप हो जाता तो बहुत अच्छा होता। एक दिन मौक़ा ढूँढ़कर उन्होंने कछवाही रानी लाछलदेई से कहा कि उमादे नादानी से अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मार रही हैं अभी कमसिन हैं सौतों के दाँव-पेंच को क्या जानें। अगर यही कैफ़ियत रही तो बेचारी की ज़िन्दगी अजीरन हो जायगी। आप देखती हैं कि अब राव जी भी उसके यहाँ कम जाते हैं। मगर उसकी अकड़ अभी तक ज्यों की त्यों है। राव जी को ऐसी बेरुख़ी न दिखलानी चाहिए। वह भी अभी मग़रूर है। अगर नादानी करे तो माफ़ी के क़ाबिल है। मगर राव जी अक़्लमन्द होकर क्यों रूठते हैं।

लाछलदेई बहुत नेक और समझदार औरत थी। उन्होंने वादा किया कि मैं राव जी से इसका ज़िक्र करूँगी। चुनांचे एक दिन शाम के वक़्त वह राव जी की ख़िदमत में हाज़िर हुई और इधर-उधर की बातचीत करते-करते पूछा — अपनी नयी रानी के पास आना-जाना क्यों कम कर दिया?

राव जी — मैं तो बराबर आता-जाता था मगर उसी ने रूठकर मज़ा किरकिरा कर दिया।

रानी लाछल — वह रूठी क्यों मुझे इसका भेद अब तक न खुला।

राव जी — भारीली की बदौलत।

लाछल — फिर आप भारीली को क्यों इतना मुँह लगाते हैं? वह उमा के बराबर की नहीं।

राव जी — इसमें मेरी क्या ख़ता है। उमादे ही ने उसे मेरे पास भेजा था।

काकस—ठीक है, मगर चाहिए कि भारतीय नारीत्व की जगह रहे और उमा उमा की जगह।

राम जी—मैं भी तो यही चाहता हूँ पर उमा नहीं मानती। उसके जी का कुछ हाल ही नहीं सूझता कि आखिर उसका क्या मंशा है। तुम जरा पता तो लगाओ।

काकस—बहुत अच्छा कोई मौका आने दीजिए।

रानी काकस ने यह सब बातें उमा से कहीं। उसने उनको अख्तियार किया मगर उसका कुछ नतीजा न निकला। हाँ उमा को यह मालूम हो गया कि यहाँ भी एक औरत ऐसी है जो मेरे दुख को समझ सकती है। अब से वह अक्सर काकस से मुलाकात करके उससे दिल बहलाती और उसे ऐसी बातें कहती। उसके कहने मुताबिक राम को भी बहुत प्यार करती थी।

समाज की कोशिशें

इसके बाद राम मालवेन्द्र(?) ने अपने राज्य के दौरा करना शुरू किया और घूमते हुए अजमेर आ पहुँचे। वहाँ कुछ दिनों तक किले में उनका मुकाम रहा जो किसी जमाने में अनिरुद्ध(?) और पृथ्वीराज जैसे मशहूर महाराजों के स्वर्णसिंहासन से सुशोभित होता था। राम जी को इस किले पर राज करने का बहुत गर्व था। एक रोज इतराकर अपनी चौहानी रानियों से कहने लगे—देखो यह अच्छी तरह देख लो। यह तुम्हारे पुरखों की राजधानी है।

चौहानी रानियों को यह भावनात्मक(?) वाक्य बहुत बुरा लगा। राम जी राठौर थे। भला चौहान किसी राठौर की जबान से ऐसी बात सुनकर बर्दाश्त कब कर सकता। रानी मालवाली(?) में मारी-प्यार(?) होता था मगर यह पुरानी यमुना(?) दिलों से बाहर न हुई थी। बुनाई(?) मियां बीबी में भी बहुत बार आपस में कभी कभी बातों की नोकझोंक हो जाती थी। रानियों ने जवाब दिया—आप हमारे मालिक हैं हम आपके मुँह नहीं लग सकते। मगर हमारे बड़े जैसे वे वहाँ आपके बड़े ही पूर आपको ही(?)

यह जवाब राव जी के सीने में तीर की तरह लगा क्योंकि यह रानी संयोगिता और पृथ्वीराज के स्वयम्बर की तरफ इशारा था। गुस्से में भरे हुए रनिवास से बाहर निकल आये। उस वक्त काली-काली घटाएँ छायी हुई थीं कुछ कुछ बूँदें पड़ रही थीं। राव जी की आँखों में नशा था दिल में गुस्सा और हाथ में खंजर। बाहर निकलते ही उन्होंने आवाज दी कौन हाजिर है।

ईसरदास चारण ने आगे बढ़कर मुजरा किया और बोला — हुजूर, बंदेदास हाजिर है।

राव जी — अभी आप जागते हैं? मुझे अन्दर नींद नहीं आयी जरा कोई कहानी तो कहो। मैं यहीं लेटूँगा। ठण्डी हवा है शायद नींद आ जाय।

ईसरदास — जो आज्ञा। बैठिए।

राव जी बैठ गये और ईसरदास कहानी कहने लगा। कहानी के बीच में उसने यह दोहा पढ़ा —

मारवाड़ नर नारी जैसलमेर
तोरी तो सिन्धी निरी करमल बीकानेर।

यानी मारवाड़ में मर्द जैसलमेर में औरतें सिंध में घोड़े और बीकानेर में ऊँट अच्छे होते हैं।

राव जी ने इस दोहे को सुनकर फ़रमाया — चारण जी बेशक जैसलमेर की औरतें बहुत अच्छी होती हैं पर मुझे तो वह जरा भी रास न आयीं।

ईसरदास — यह हुजूर क्या फ़रमाते हैं। जैसलमेर की अच्छी औरत उमादे तो

राव जी — (बात काटकर) अजी वह तो पहली ही रात ही से रूठी बैठी है।

ईसरदास — हुजूर गुस्ताखी माफ़ आपने उसे भी मामूली औरत समझा होगा। खैर चलिए बंदा अभी पेश कराये देता है।

रानी ने भी कबूल किया कि यह बड़ा सलीकेवाला आदमी है
क्या मजाल है, रानी की बातों में लगाकर कहीं पर ले जाये। उनके साथ
उमाने के महल की तरफ चले। अचानक चलते-चलते एक नये ओर
ईश्वरदास ने बोले—आप जाते तो हैं मगर वह तीसरी भी नहीं।
ईश्वरदास—हुजूर ने गाना है। मगर बाद तो एक बार कुएँ को
जगा सकता है। वह तो फिर भी सोता है।

दरवाजे पर पहुँचकर ईश्वरदास ने देखा कि वे राय जी को अपने पीछे लिए
लिया और उमाने से सकता देखा कि वे राय जी के पास जा के कुछ कहने के
लिए हाजिर हुआ हूँ। उसने झोल नई के बाद कहा—रानी की कुछ वजह ईश्वरदास ने
बड़े अदब से मुजरा अर्ज करने के बाद कहा—
उमाने ने कुछ जवाब न दिया। ईश्वरदास ने फिर कहा—मेरा
मुजरा कबूल हो। अब उसका भी जवाब न मिला तो राय जी ने ईश्वरदास के
कान में धीरे से कहा—देखो, मैं न कहता था कि यह न बोलेंगी।
बुरा बोले तो बोले मगर उनका तीसरा मेरे लिए मुश्किल है।

ईश्वरदास—रानी जी ये भी नाम हो के इससे का हूँ। क्योंकि
रानी की बातें भी सकता हूँ। अगर ऐसा न होता तो तुम देखतीं कि तुम्हारे
आगमन को कैसा अविनय करता। वह कौन-सी इस्लामियत है कि मैं तो
मुजरा करें कहता हूँ और तुम जवाब तक नहीं देतीं।

उमाने ने इसका भी कुछ जवाब न दिया।

ईश्वरदास ने फिर कहा—रानी जी आपसे मुजरा होता कि आपने
मुल्कों में एक रावल रहती थे। वह मुसलमानों के लड़ाई में काम आये थे।
उनकी रानी ने मालूम होता जी है कहा कि बाबा जी अगर रावल जी
का फिर का रो तो मैं सती हो जाऊँ। दोनों की लड़ाई के मैदान में गये मगर
कई हुए दिनों के ढेर में रावल जी का सिर पहचाना न जाता था। उस वक्त
दोनों जी ने बड़ी धूम-धूम की काम में लाकर रावल जी का शरीर करना
शुरू की और उनको सुनते ही रावल जी का सिर हँस पड़ा। दोनों की
कहे पहचानकर रानी के पास लाया। उसके बारे में अब तक एक दोहा
मशहूर है—

चारण हूँपि सेव्यो साहब दुर्जन साल
बरधातां सर धोस्यो गीता दोहाँ काल

यानी हौंपी चारण ने अपने मालिक दवाजी की सेवा की थी। इसलिए दवाजी का सर अपने वफ़ादार नौकर की ज़बान से अपनी तारीफ़ सुनकर हँस पड़ा। यह बात गीतों और दोहों में मशहूर है। सो बाई जी तुम भी उसी राव दवाजी के घराने की हो। वह मरकर बोला तुम जीती भी नहीं बोलतीं क्या तुम्हारी रगों में बुज़ुर्गों का खून नहीं दौड़ता?

उमादे — (जोश में आकर) बाबा जी मैं भी यही देखना चाहती थी कि देखूँ तुम्हारी ज़बान में कितनी ताक़त है। कहो क्या कहते हो और क्यों आये?

ईसरदास — तुम्हारी सखियें कहती हैं कि वह अमरबेल चन्द्रवंश में पैदा हुई, नूर भी चाँद की तरह रौशन है मगर चेहरे पर मैल अभी तक बाक़ी है। मैं यही पूछने आया हूँ कि वह मैल कैसा है और क्यों बाक़ी है?

उमादे — उन्हीं से क्यों न पूछ लिया!

ईसरदास — वह तो कुछ साफ़-साफ़ नहीं बतलातीं।

उमादे — मैं साफ़-साफ़ बतला दूँ।

ईसरदास — इससे बढ़कर क्या होगा।

उमादे — मुझमें यही मैल है कि मैं चाहती हूँ राव जी बीबी और बाँदी की पहचान रक्खें।

ईसरदास — अब ऐसा ही होगा। रानी रानी रहेगी और बाँदी बाँदी।

उमादे — तुम इसका पक्का क़ौल दे सकते हो?

ईसरदास — हाँ अभी।

उमादे — अच्छा हाथ बढ़ाओ।

ईसरदास ने राव जी का हाथ पकड़कर परदे में कर दिया।

उमा ने उसे देखकर कहा — आह यह तो वही सख्त हाथ है जिसने मेरे कंगन बाँधा।

ईसरदास — तो दूसरा हाथ कहाँ से आये!

यह सुनकर उमाने समझा बड़ी नर्मी और राय जी को दूसरा हुआ कि लेकर उठ गये। मगर ईश्वरदास वहीं समझ की तरह खड़ा रहा। सारी रात बीत गयी किन्तु निकल जाना सूरज की तरफ किरने उसके माथे पर पड़ती रहीं। उसकी आँखें उसके माथे से ढुलकी रहीं मगर उसका साहस वहीं खड़ा रहा। उसने एक बार से जाना दबाकर उसके लिए भेजा मगर उसने उसकी तरफ ताक उठाकर भी नहीं देखा। रहिमन कहला भेजा — नाई जी ने मेरा बात भी विश्वास न किया। मुझे उस पर बड़ा भरोसा था कि वह मेरी बात इतनी न टालेंगी। इसीलिए राय जी को अपने साथ लाया था। अब मुझे यहाँ लज्जा है। क्या नाई जी ने कभी बालों के बाँधी करने की बात नहीं सुनी? अब तक किसी सभा में सुन डाली हैं और राजपूत उनकी बात नहीं मानते तो वह अपनी सन्तान और बालक साथ रखने के लिए आत्महत्या कर लिया करते हैं। यह सुनके ही उनके बराबरी हुई उसके पास आयी और पूछा — क्या आप मुझ पर बाँधी करेंगे?

ईश्वरदास — जरूर करूँगा नहीं तो राय जी का कौन सा मुँह दिखाऊँगा।

उमाने — तो आपने मुझे वचन क्यों नहीं दिया?

ईश्वरदास — राजा रानी के कहने हैं, मैं कैसे जिम्मेदारी लेता। बीच में पड़नेवाले का काम सिर्फ बात पक्का कर देना है। जो मैं राय जी को आपके पास ले ही आया था।

उमाने — कहिए लाने से क्या फायदा हुआ?

ईश्वरदास — और तो कोई फायदा न हुआ हाँ मेरी जान के लाले पड़ गये।

उमाने — और वह बातें फिर होंगी। सब कुछ साफ हो जायेगा।

ईश्वरदास — मुझे अब हुक्म न आपसे में जाऊँगा।

उमाने चली गयी। थोड़ी देर के बाद भारती आयी और घबराहट से स्वर में बोली — बालक की जान क्या गजब कर रहे हैं, नाई जी ने अब तक कुछ नहीं खाया।

ईस्वरदास — वह शौक से भोजन करें, उन्हें किसने रोका है।

मारौती — भला ऐसा भी मुमकिन है कि चारण तो दरवाजे पर भूखा पड़े रहे और कोई राजपूत औरत खुद खाना खा ले।

ईस्वरदास — अगर बाई जी चारणों की इतनी इज्जत करती हैं तो उनकी बात क्यों नहीं मानतीं ?

मारौती — आप क्या कहते हैं ?

ईस्वरदास — मैं यही कहता हूँ कि बाई जी राव जी से यह शिकायत दूर कर दें।

इतने में उमा भी निकल आयी — राव जी भी कुछ करेंगे या नहीं !

ईस्वरदास — जो तुम कहोगी वह करेंगे। हाथ जोड़ने कहोगी हाथ जोड़ेंगे पैर पड़ने कहोगी पैर पड़ेंगे जैसे मानोगी मनायेंगे मैंने यह सब तय कर लिया है।

उमा — बाबा जी आप समझदार होकर ऐसी बातें कैसे मुँह से निकालते हैं। क्या मेरे खानदान की यही रीत है और मेरा यही धर्म है ? राव जी मेरे स्वामी हैं मैं उनकी लौंडी हूँ। भला मैं उनसे कह सकती हूँ कि आप ऐसा कीजिये वैसा कीजिये। मैं तो रूठने पर भी उनकी तरफ़ से दिल में बराबर मैल नहीं रखती और वह भी जैसी चाहिए मेरी इज्जत करते हैं। मेरा गर्व मेरा अभिमान उन्हीं के निभाने से निभ रहा है। वह चाहते तो दम के दम में मेरा घमण्ड दूर कर सकते थे। यह उन्हीं की कृपा है कि मैं अब तक जिन्दा हूँ। स्वाभिमान हाथ से खोकर मैं जिन्दा नहीं रह सकती।

ईस्वरदास — शाबाश बाई जी शाबाश सती स्त्रियों के यही लक्षण हैं।

उमादे — बाबा जी अभी से शाबाश न कीजिये जब यह धर्म आखिरी दम तक निभ जाये तो शाबाश कहिएगा।

ईस्वरदास — अच्छा तो तुम फिर क्या चाहती हो ?

उमा — कुछ नहीं तुम भोजन करो तो मैं भी कुछ खाऊँ।

ईस्वरदास — तुम जाओ खाना खाओ मैं तो तब खाऊँगा जब तुम मेरा कहना मान लोगी।

उमा — अच्छा कहो, कौन सी बात कहते हो।

ईश्वरदास — राय जी से कहना छोड़ दो।

उमा — राय जी अगर मेरी बात मानें तो मैं कह सकती हूँ मगर मेरा दिल उनसे अब न मिलेगा।

ईश्वरदास — मेरे कहने से मिलाना पड़ेगा।

थोड़ी देर तक उमा ई सोचती रही। फिर बोली — मेरा जी नहीं चाहता कि जो बात ठान लूँ उसे फिर तोड़ दूँ। यह मेरी आदत के बिल्कुल खिलाफ है। मगर आपकी जिद से लाचार हूँ। और आपकी बात मंजूर करती हूँ।

ईश्वरदास — (खुश होकर) वाह री तुमने मेरी लाज रख ली। यही वकील मगर राय जी तुमसे बाहर नहीं। जो कुछ तुम कहोगी वही करेंगे।

उमा — मैं उनसे कुछ नहीं कह सकती। उन्हें सब बातों का अख्तियार है। मगर हाँ अगर अपनी आदत के खिलाफ फिर कोई बात देखूँगी तो एक दम उनके यहाँ न ठहरूँगी।

ईश्वरदास — बहुत अच्छा यही सही। कहो तो राय जी को मैं भेजूँ। या अगर तुम कहना कबूल करो तो मुनासिब का इन्तजाम करूँ।

उमा — अभी नहीं रात को [illegible] लूँगी। आप अब जाना चाहें।

ईश्वरदास — पहले मैं राय जी को समझा दूँ [illegible]।

ईश्वरदास खुश-खुश राय जी की सेवा में उपस्थित हुआ और उनसे ये फिर से सारा समाचार उनके मुँह पर निकला दिया।

रानी फिर कठ गई

राय जी मारे खुशी के फूले नहीं समाते। अफसर के इन्तजार में पत्नियाँ मिल रही हैं। रातभर बनाया जा रहा है। गाने वालियाँ जमा हो रहीं। गाना हो रहा है। शराब का दौर चल रहा है। उनके को बुलाने के लिए मोटी पर मोटी भेजी जा रही है। मगर अभी तक रानी का बनाव सिंगार पूरा नहीं हुआ। वक्त में मोती गूँथे जा रहे हैं। चोटी

गूँथी जा रही है। प्रसाधिका उसे परी बना देने की कोशिशें कर रही है। उसका जी अभी तक राव जी की तरफ झुका नहीं है। सुहरातें अजब दामन खींच रही है जिस असमय भड़क रहा है। अभी तक भी पशोपेश में है कि जाऊँ या न जाऊँ। तबीयत किसी बात पर नहीं जमती। कैसे जाऊँ, कौन-सा मुँह लेकर जाऊँ कहीं वह यह न खयाल करने लगें कि आखिर झख मार के आयी। नहीं नहीं मेरा जाना मुनासिब नहीं। मगर बात हार चुकी हूँ। न जाऊँगी तो झूठी ठहरूँगी। वह इसी सोच-विचार में थी कि फिर बुलावा आया। उमा ने भारीली से कहा—तू जाकर कह दे आते-आते आयेंगी ऐसी क्या जल्दी है। भारीली यह सुनकर सहम गयी। काँपते हुए बोली—बाई जी क्या अंधेर करती हो। मुझे क्यों भेजती हो। क्या और खवासें नहीं हैं।

उमादे ने कहा—कोई हर्ज नहीं। यह जवाब देकर जल्दी से चली आना वहाँ ठहरना नहीं। तुझे फिर मेरे साथ चलना होगा।

लाचार होकर भारीली गयी। राव जी की नजर ज्यों ही उन पर पड़ी वह रानी को भूल गये। उसका हाथ पकड़कर बिठा लिया। वह बहुत कहती रही कि जो मैं कहने आयी हूँ उसे सुनिए और मुझे जाने दीजिए नहीं तो रंग में भंग पड़ जायगा। राव जी बोले कुछ नहीं होगा। तू मुठमूठ डरती है। महारानी ने तुझे मेरे दिलबहलाव ही के लिए भेजा है। जब तक वह न आयें तू यहीं रह फिर चली जाना।

राव जी शराब के नशे में चूर, भारीली से चिमटे जाते हैं अपनी धुन में न उसकी बात सुनते हैं न उसे जाने देते हैं यहाँ तक कि नाचने-गानेवालियाँ भी महफिल का रंग देखकर वहाँ से खिसक जाती हैं।

थोड़ी देर के बाद रानी उमादे बनाव सिंगार किये आयीं तो देखा राव जी भारीली को लिये [illegible] हैं। उसी दम उल्टे कदम वापस हुईं। जी में कहा अच्छा हुआ मैं भी यही चाहती थी कि मेरी आन हाथ से न जाने पाये।

उधर भारीली ने ज्योंही रानी को देखा घबराकर उठी और खिड़की से नीचे कूद पड़ी। वहाँ बाघा नाम का एक संतरी पहरे पर था। भेजर की

...कार झुककर चौंकता हुआ ऊपर को देखा तो मादोली भीगे को सिर रही है। लपककर उसे बचा लिया और उससे पूछो क्या—तू कौन है, परिवार की पटी है या इधर के बनाये को हुए!

मादोली ने उँगली होंठों पर रखकर कहा—चुप! अभी बात की और चाहता है तो कभी मुझे यहाँ से निकाल ले चल नहीं तो हम-तुम दोनों मारे जायेंगे।

बाबा ने कहा—मैं राव जी का नौकर हूँ बिना आज्ञा यहाँ से हिल नहीं सकता। पहरा पूरा कर लूँ, तब जो कुछ तू कहेगी वह करूँगा।

मादोली ने गिड़गिड़ाकर कहा—हठ मत कर, न मुझे मरने दे पर पूछना है, फिर कैसा होगा देखा जायगा।

बाबा का बेटा ईसरदास के पास ही था। बादल जी ने आँखों उसे देखा पहचान गये। तत्पर राव जी के पास पहुँचे। वह घबराये हुए बैठे थे। तब मका हिलने ही लगा था। ईसरदास को देखते ही बहुत उदास होकर बोले—अरे हाथी के तो दाँतों ही तोड़े उड़ गये।

ईसरदास—उनमें से एक तो उड़ जाते ही कालिख का उनका क्या कसूर। बाबा खिलाड़ी से फनलाइये उसे रक्षा हम जैसलमेर पहुँचा जायें। नहीं तो दूसरा धोखा कभी आपके हाथ न आयेगा।

राव जी—अगर आपकी यही मर्जी है तो बाबा से जो चाहे कर दीजिए।

ईसरदास ने उसी वक्त जाकर मादोली को एक डोली पर सवार कराके बाबा की हिफाजत से जैसलमेर की तरफ रवाना कर दिया और वापस आकर राव जी को सूचना दी।

राव जी—अब तो महाली की ठण्डी होगी?

ईसरदास—यह मैं नहीं कह सकता क्योंकि आप उनका मिजाज जानते हैं।

राव जी—अगर ऐसा है तो मैं उनके पास गया नहीं। आप जाकर कोशिश करें हो सके तो मना लाइए।

ईसरदास—अब उनका मनाना बहुत मुश्किल है, पर मैं जाता हूँ।

ईसरदास ने जाकर देखा राजमहल सूना पड़ा है और रानी बुर्ज में जा बैठी है। खवासों ने सफेद चाँदनी टाँगकर परदा कर दिया है, लौंडियाँ-बाँदियाँ पहरे पर हैं पर्दे के पास और दो रानियाँ नंगी तलवारें लिये खड़ी हैं।

ईसरदास की हिम्मत न हुई कि नजदीक जाये दूर ही से देखकर लौट आया और राव जी से सब माजरा सुनाया।

राव जी—(झुंझलाकर) क्या भट्टाणी जी बुर्ज में जा बैठीं? यह क्या हरकत की?

ईसरदास—शायद उस बुर्ज के भाग्य जागनेवाले थे। आज वहाँ वह रौनक है जो कभी पृथ्वीराज चौहान के तख्त को भी नसीब न हुई होगी। चाँदनी का पर्दा पड़ा है, नंगी तलवारों का पहरा है। मेरी तो वहाँ जाने की हिम्मत न पड़ी और क्या अर्ज करूँ।

राव जी—(आश्चर्य से) क्या सचमुच नंगी तलवारों का पहरा है?

ईसरदास—जीहाँ महाराज यकीन नहो तो खुद चलकर देख लीजिए।

राव जी—तब तो उनका मानना बिलकुल नामुमकिन है।

ईसरदास—हुजूर ठीक कहते हैं। रानी ने मुझसे पहले ही यह शर्त करवा ली थी। आपने बड़ा गजब किया कि ऐसे नाजुक मामले में उनके मिजाज के खिलाफ़ काम किया। जब एक बार ऐसी हरकत का बुरा नतीजा आपको हो चुका था तो दूसरी बार जरूर होशियार होना चाहिए था। रानी की तरफ से भी कुछ ग़लती हुई, उन्हें भारीली को ऐसे मौक़े पर भेजना मुनासिब न था। मगर जहाँ तक मेरा खयाल है आपकी तरफ़ से उनके दिल में संदेह था और सिर्फ़ आपकी परीक्षा के लिए उन्होंने भारीली को भेजा था।

राव जी—होनहार नहीं टलती। मैं भी बहुत पछताता हूँ। पहली बार भी भारीली ही की बदौलत बिगाड़ हुआ था।

ईसरदास—खैर वह तो किसी तरह से दूर हुई, बला टली।

राव जी—इसका भी मुझे अफ़सोस ही रहेगा। उस बेचारी की कोई खता न थी।

हैदरखान — (बात काटकर) क्यों तो महुली की दो-चार दिन तक महल आती नहीं दिखायी देती उनके लिए क्या इन्तजाम किया जाय।

राव जी — मैं तो कल चला जाऊँगा। मुझे बीकानेर पर चढ़ाई करनी है। यहाँ का जो कुछ इन्तजाम मुनासिब था पहले ही कर दिया गया है। हुमायूँ बादशाह के आने की खबर भी अब भी नहीं आयी। फिर बेकार वक्त क्यों बर्बाद करें। कुछ यहाँ रहो और उस दुर्ग के पास बातें नहीं करना है पहुँचे बाकी का पूरा पूरा बन्दोबस्त करो। अब बाकी जो का विचार करा बीमा हो तो उसका हुक्काकर जोधपुर के आना। मैं फिलहाल से कह दूँ यह सब इन्तजाम कर देगा।

राव जी यह कहकर दूसरे दिन अजमेर से रवाना हो गये। दीवान ने उनके हुक्म से राजगिर परगना उनकी उनके की जागीर में लिखकर पट्टा उनके पास भेज दिया। अब अजमेर में रानी की कमसकड़ी है। फिर बाद उसकी हवेली पर पहुँचे और इनाम का इन्तजाम करके देख साथ कमरे सजाय को हाजिर होता है। अजमेर का खुशबार देख रानी की हवेली पर मुजरे के लिए जाता है और उसी की सलाह और हुक्म से अपना काम करता है। उसके का नाम तब उसी रानी मशहूर हो गया है। वह उसे भी अब रूठी रानी का दूसे कहलाने लगा है और आज तक इसी नाम से मशहूर है।

जोधपुर पहुँचकर राव मालदेव ने सुना कि बंगाल में हुमायूँ और शेरशाह से लड़ाई छिड़ गयी और दिल्ली बादशाहत खाली पड़ा है। लिहाजा इस वक्त उन्होंने बीकानेर का ख्याल छोड़ दिया और पूरब की तरफ और पर्व और हिन्दुस्तान तक कब्जा करते चले गये। वहाँ से लौटकर सन् १५१२ में बीकानेर भी जीत लिया।

इस बीच शेरशाह हुमायूँ को हिन्द से भगाकर आगरे पहुँचा। उसके आते ही ये सब राजे राव-ठाकुर जिनके इलाके मालदेव ने दबा लिये थे बीकानेर की सरपरस्ती में शेरशाह के दरबार में फरियाद के लिए हाजिर हुए और उसे राव पर हमला करने के लिए आमादा करते थे। मालदेव

भी बेख़बर न था। अस्सी हज़ार सवार शेरशाह के मुक़ाबले के लिए इकट्ठा किये और ईश्वरदास को लिखा कि आप रूठी रानी को लेकर चले आइए और अजमेर के क़िले में पूरा बंदोबस्त करा दीजिए। रूठी रानी ने इस पर कहा — मुझे क्या डर पड़ा है। मैं राजपूत की बेटी हूँ। क़िले पर कोई भीड़ आयेगी तो मैं कुरमेती हाड़ी[1] की तरह लड़कर मरूँगी। राव जी को लिख दो यह क़िला मेरे भरोसे पर छोड़ दें और बाक़ी राज्य को बचाने का इन्तज़ाम करें।

राव जी ने जवाब दिया कि अजमेर में तो हम शेरशाह से लड़ेंगे, वहाँ रानी का रहना मुनासिब नहीं। अगर उन्हें ऐसी ही रजपूती दिखाने की इच्छा है तो जोधपुर का क़िला हाज़िर है। हम उसे बिल्कुल उन्हीं के भरोसे पर छोड़ देंगे। उनको बहुत जल्द लाओ।

ईश्वरदास ने तब रानी से कहा — बाई जी, महाराज को आपकी बात मंज़ूर है मगर अजमेर के बदले जोधपुर का क़िला आपको सौंपा जायगा आप वहीं तशरीफ़ ले चलिए। वह अपना घर है। अजमेर तो परायी जायदाद है, थोड़े ही दिनों से हमारे क़ब्ज़े में आया है। रानी ने कहा, बहुत ख़ूब, जो राव जी की मर्ज़ी हो अजमेर न सही जोधपुर सही। सवारी का इन्तज़ाम करो। अगर यह मौक़ा न आ जाता तो मैं यहाँ से हरगिज़ न जाती।

सौतिया डाह

ईश्वरदास ने अजमेर के हाकिम और क़िलेदार से लड़ाई की तैयारियों का इन्तज़ाम करने के लिए कहा। इसी बीच जोधपुर से उम्मेदें और दूसरी रानियों ने उसके पास एक बड़ी रिश्वत भेजी और प्रार्थना की कि जिस तरह मुमकिन हो इस बला को वहीं रहने दो, वह किसी तरह जोधपुर

---

१ कुरमेती हाड़ी महाराणा साँगा की रानी और उदयसिंह की माँ थी। जब गुजरात के बादशाह सुलतान बहादुर ने संवत् १५९१ में चित्तौड़ का क़िला घेरा तो कुरमेती बहत्तर हज़ार औरतों के साथ आबरू बचाने के लिए चिता बनाकर जल मरी।

... आने पाये। अजमेर से बदले युद्ध इसने आपसे यही बात कही थी और अब तक आपने इस बात का खयाल रक्खा है। अब भी वह तुम्हारे ही रोके रुक सकती है। दूसरा उसे कोई नहीं रोक सकता। आप राव जी को इस बाइए कि ऐसा हरगिज न करें। हम इस एहसान के लिए आपके बहुत एहसानमन्द होंगे। बादल जी रिश्वत पाकर सिपाहियों के फेर में पड़ गये। कहाँ तो राव देवड़ी की बहुत तारीफ किया करते थे कहाँ अब होने लगे कुछ और बेगानी में भी देर होने लगी।

एक और नया गुल खिला। हुमायूँ ने जो शेरशाह से शिकस्त खाकर सिंध भाग गया था अब सुना कि राव जी मारवाड़ की देवड़ी कर रहे हैं तो उसके पास अपना एक दूत यह संदेश देकर भेजा कि आप मेरे ऊपर [illegible]

सौंपा जाता। वह जादूगरनी है। जादूगरनी ने साठ कोस से वह मन्तर मारा कि जिसका उतार नहीं। जालिम दगाबाज ईश्वरदास भी अपनी तरफ आकर फिर उधर हो गया।

एक खवास ने रानी की यह बातचीत सुनकर कहा कि ईश्वरदास फूट गया तो क्या हुआ उसका चाचा आसा जी तो यहीं मौजूद है। उससे काम लीजिए। वह ईश्वरदास से बहुत ज्यादा होशियार है। रानियों को यह सलाह पसन्द आयी। झाली रानी ने इसी खवास को आसा जी के पास भेजा और कहलवाया कि तुम्हारा भतीजा वहाँ बैठे-बैठे बड़ी बेइन्साफी कर रहा है, हमें अब आपके सिवा कोई दूसरा नजर नहीं आता। आप ही हमारा काम कर सकते हैं। किसी तरह इस बला को रोकिये वर्ना हम कहीं के न रहेंगे। आसा ने कहा वह नालायक मेरे कहने में नहीं है। और जो कुछ हुक्म हो उसे बजा लाऊँ।

झाली रानी—भटियानी यहाँ हरगिज न आने पाये।

आसा जी—बहुत अच्छा ऐसा ही होगा। न आने पायेगी।

झाली रानी—न कैसे आयेगी वह तो चल दी है। कल-परसों तक आ पहुँचेगी।

आसा जी—आप खातिर जमा रखिये मैं उसे रास्ते में रोक दूँगा।

रानियों ने धन-दौलत से आसा जी को मालामाल कर दिया और कहा अगर आप हमारा काम कर देंगे तो हीरे-जवाहरात से आपका घर भर दिया जायगा।

आसा जी ने राव जी से यह बहाना किया कि एक जरूरी काम से घर जा रहा हूँ और इजाजत पाते ही अजमेर की तरफ चला। जब जोधपुर से पन्द्रह कोस पूरब को साला गाँव के करीब पहुँचा तो उसे दूर से निशान का हाथी दिखायी दिया और नक्कारे की आवाज कान में आयी। समझ गया कि रूठी रानी की सवारी आ रही है।

सवारी का दूर तक तांता लगा था। हाथी के पीछे ऊँटों का नौबत खाना था। उसके पीछे घोड़ों पर नक्कारा बज रहा था। परा और

पीछे लदे हुए ऊँट और फिर बैलों का झुंड हवा में लहराता दिखाई दिया। बड़े के पीछे कवच बहादुर राठौरों का एक रिसाला था फिर एक बन्दूक-चियों की कतार, उनके पीछे बांकेदार और उसके बाद ढाल-तलवारवाले राजपूत थे। उस और पीछे हटकर कोतल हाथी और पीछे घोड़े-गाड़ी में घूमते हुए वहाँ और उसके के सामान से लैस धीरे-धीरे चलते थे। उनके बाद नकीब और चोबदार सोने चांदी के डंडे लिये रास्ता साफ करते चलते थे। बाद ईश्वरदास जी भी पीछे पर धीरे थे हुशियार बनाये जनता को एक धीमे धीमे पहलेवाले घोड़े पर बढ़े बैठे थे। ज्यों ही उनकी नजर सामने बाबा आसा जी पर पड़ी कि वे उतरकर पुकार लिया और पूछा—आप यहाँ कहाँ! आसा जी बोले—माई जी का अभिवादन करने आया हूँ। दोनों वहीं खड़े होकर बातें करने लगे। जुलूस चलता चला गया।

तलवारों के पीछे एक अपार समुदाय स्त्रियों की आधी जो तीर-कमान और नगर लगाये हुए थी। वहाँ के कुटुम्ब से रानी उमादे का सुसज्जित सुखपाल था। उस पर बदी का पहरा गुलामी पड़ा था। जगह-जगह कमनोल जवाहरात और मणियाँ जड़े हुए थे जिन पर निगाह नहीं ठहरती थी। कहार मखमल और कमखाब के लिबास पहने हुए थे। इस सजे हुए सुखपाल के पीछे नंगी तलवारों का पहरा था। फिर कई जनानी सवारियाँ पालकियाँ, पीनसें और रथों में थीं। उनके बाद राठौरों का एक रिसाला और रिसाले के पीछे जुलूस के बाकी कोतल हाथी घोड़े और ऊँट थे। सबके पीछे फर्राशखाना तोशाखाना रसदखाना और फौज की दूसरी टुकड़ी बांदों की बाहिनी थी।

बाबा जी के हमराही कहते थे कि ऐसे आसा जी कैसे हम पुण्य-कर्म से चलती हुई रानी की सवारी को रोक दें जिसके कारण यूँ नहीं कर सकता। इसमें से कभी रानी का सुखपाल आसा जी के बराबर आ पहुँचा।

जोधपुर के निशान या तख्ते में चील की तस्वीर बनी होती है।
... कोली निशान है।

उसने बड़े अदब से चोबदार को आवाज़ देकर कहा—बाई जी से अर्ज करो कि आसा चारण मुजरा करता है और कुछ अर्ज भी किया चाहता है। इसके साथ ही यह दोहा पढ़ा—

मान रखे तो पीव तज पीव रखे तज मान
दोनों हाथी बाँधिये एकइ खतमो ठाम

यानी अगर मान रखना चाहती है तो पति को तज दे और पति को रखना चाहती है तो मान को तज दे क्योंकि एक ही थान में दो हाथी नहीं बाँधे जा सकते।

यह दोहा सुनते ही रूठी रानी का जोश फिर ताज़ा हो गया और दिल क़ाबू में न रहा। फ़ौरन हुक्म दिया कि अभी सवारी लौटे जो एक क़दम भी आगे रक्खे उसकी गर्दन उड़ा दी जायगी। सब लोग हैरत में आ गये कि यह क्या हुआ। यकायक यह कायापलट क्योंकर हुई। ईश्वरदास ने बहुत ज़ोर मारा हाथ जोड़े पैरों पड़ा सारी वाकशक्ति खर्च कर डाली मगर आसा जी के जादूभरे शब्दों के सामने उसकी कुछ न चली। सरदार सिरहदाकार बहुत-बहुत मारवू-मिन्नत करते रहे मगर उसने किसी की न सुनी। उसी कोसाना गाँव में डेरे डलवा दिये।

आसा जी को अभी तक संशय था कि कहीं लोगों के कहने-सुनने से रानी का इरादा फिर न पलट जाय। लिहाज़ा ज्योंही डेरे पर गये वह उनकी ड्योढ़ी पर हाज़िर हुआ और मुजरा करके कहा—बाई जी आपकी जितनी स्तुति की जाय थोड़ी है। आपने जो ठान ठानी है वह आप ही का काम है।

रानी—बाबा जी यह दोहा फिर पढ़िये। बहुत अच्छा और सच्चा है। मैं अपनी टेक कभी न छोड़ूगी।

आसा जी—(दोहा पढ़कर) बाई जी राजाओं में सच्चा मानी दुर्योधन हुआ। उसी कुल में आप हैं। रानियों में आपका-सा अपनी बात पर क़ायम रहनेवाला कोई और नहीं है।

रानी—बाबा जी दुर्योधन नाम का तो एक ही राजा हुआ है पर

बनारसी उमा के नाम को तो कई रानियाँ हुईं। उनमें एक के नाम का यह दोहा मशहूर है—

हार दियो कबों दियो मोलो मास मरम
उमा पीड़ न कबों जानी मैन करम।

रानी हार दिया छिपाया इसका चोली फिर भी उमा को पति का सुख न नसीब हुआ। उसकी छिपाया की तस्वीर जानी पड़ गयी। बाला थी—यह भी बड़ी थी उमा लाडली थी। और तुम उमा मशहूर हो। दोनों का बखान भी एक नहीं।

रानी—(रोकर) बाबा जी, दोहे में सिर्फ उमा कहा है, लाडली मशहूर कैसे जाने।

बाबा जी—क्यों न जाने। यह दोहा बनरबाद का कहा हुआ है। बनारसी लाडली उसकी रानी थी। सब जानते हैं क्या तुम नहीं जानतीं?

रानी—और और तुम्हारे जानने से क्या होता है। दोहे में तो कोई व्याख्या नहीं थी। और और तुम्हारे पीछे कौन जानेगा?

बाबा जी—तुम्हारे पीछे तक अगर दोहा रहा तो तुम्हारे नाम को अमर कर जाऊँगा।

---

१ बनारसी लाडली बाबरों के राजा बनबाद की रानी थी। उसके और छोटी रानी राजा के पूछे भेद करती थी कि राजा उसके डर से लाडली के पास नहीं जाता था। जब इस तरह बहुत समय गुजर गये तो एक दिन छोटी रानी ने लाडली के पास एक अनमोल हार भेजकर एक रात के लिए मोला। उसने इस शर्त पर वह हार लिया कि छोटी राजा को एक रात उसके पास जाने दे। छोटी ने यह बात मंजूर कर ली मगर राजा को समझा दिया कि जाए, मगर चुपचाप रात काटकर चले आना। राजा ने ऐसा ही किया। सबेरे लाडली रानी ने बड़ी व्यथा के स्वर में यह दोहा पढ़ा। मगर अलगुदार राजा को जरा भी तरस न आया। रामकृपाला के लोग निरासा के समय में यह दोहा पढ़ा करते हैं।

रानी—बड़ी खैरियत हुई कि आप आ गये। अगर आप न आते तो न जाने क्या होता। आपके भतीजे के कमजोरों में आकर मैं अपनी मरजाद छोड़ देती तो सौतें मुझ पर हँसतीं और कहतीं कि बस इतना ही पानी था।

इतने में चोबदार ने आकर अर्ज किया कि ईसरदास हाजिर हैं। भारता जी यह सुनते ही खटक गये। ईसरदास ने आकर कहा—बाई जी आपने यह क्या जुल्म किया चलती सवारी राह में ही ठहरा दी। राव जी आपका रास्ता देख रहे हैं। कुमार रामसिंह रायमल उदयसिंह और चन्द्रसेन आदि आपकी अगवानी के लिए तैयार हैं। सारे शहर में चर्चा हो रहा है कि रूठी रानी तशरीफ़ लाती हैं और राव जी उन्हें किला सौंपकर लड़ने जाते हैं। भला यहाँ रुक जाने से लोग अपने दिल में क्या समझेंगे।

रानी—इन्तजाम जो हो वह मेरे सुपुर्द करें और खुद शौक़ से लड़ने जायें। राजपूतों को दुश्मनों से लड़ने में ढील-ढाल न करनी चाहिए।

ईसरदास—क्या अँधेर करती हो यहाँ रहकर क्या करोगी। राव जी ने अपने-पराये सबसे दुश्मनी पैदा कर रक्खी है, सारे खानदान में फूट फैली हुई है। वहादेव मेड़तिया और मारवाड़ के दूसरे ठाकुर और जागीरदार, जिनकी जमीन राव जी ने छीन ली है शेरशाह के पास फ़रियाद करने गये हैं। एक तरफ़ से शेरशाह और दूसरी तरफ़ से हुमायूँ के आने की खबरें उड़ रही हैं। ऐसी हालत में तो यही मुनासिब है कि आप जोधपुर चलकर क़िले की निगरानी कीजिये।

रानी—बादशाह आते हैं तो आने दो मुझे उनका क्या डर पड़ा है। मैंने तो तुमसे जो बात अजमेर में कही थी वही यहाँ भी कहती हूँ। राव जी अगर कोई काम मेरे सुपुर्द करेंगे तो मैं यहीं बैठे-बैठे जोधपुर सम्हाल लूँगी। राव जी चाहे जहाँ जायें मैं अब जोधपुर न जाऊँगी। हाँ अगर राव जी की मर्जी हो तो रामसर में जा रहूँ।

ईसरदास कह-सुनकर हार गये। जब कुछ बस न चला तो जोधपुर जाकर राव जी से अर्ज की कि मैंने तो बाई जी को यहाँ आने पर राजी कर लिया था मगर भारता जी ने बनी बात बिगाड़ दी सारी मेहनत पर पानी

फर दिया। आपने उसे मेवा क्यों। रानी उमादेई को तो आप जानते ही हैं। बाबा जी ने जाते ही माल मस्बाब का जिक्र छेड़ दिया तब वह समझ गयी और कीनाने से हैरे झाड़ दिये। मैंने बहुत चाहा मिसर की मगर उन्होंने एक न सुनी। किसी ने पागल से पूछा — बाग क्यों जलाया? उसने कहा — खूब याद दिलाया अब जलाता हूँ।

राव जी — फिर अब क्या करना चाहिए? किसे भेजूँ?

ईश्वरदास — मुझे तो ऐसा कोई नजर नहीं आता जो वहाँ जाकर समझाये और वह भी बाबा जी के ढंग से।

राव जी — बाबा जी तो मुझसे घर जाने की छुट्टी ले गये हैं?

ईश्वरदास — बस इसी से कुछ बात हुई।

राव जी — बात कैसी?

ईश्वरदास — कोई खास बात नहीं कहते-कहते रुक गये क्योंकि कुछ भी रिश्वत हवाल किये देते थे।

राव जी — तो कुछ तो क्या करना चाहिए।

ईश्वरदास — फिलहाल बाबा जी को हुक्म मिलना चाहिए कि वहाँ से चले जायें फिर देखा जायगा।

इसी बीच हुमायूँ सिंध से मारवाड़ के बाबा और आलते हे शेरशाह के डर राव जी के पास यह पैगाम भेजकर कहीं कि हुमायूँ को पकड़ना हर्गिज न जाने देना। इसके बदले में गुजरात छोड़ करके तुम्हें दिया जायगा। यह सुनकर राव जी दुविधे में पड़ गये। यह खबर हुमायूँ ने भी सुनी। खबर न आया। ऊपर ही ऊपर कोई रहा गया। उनके साथ के लोगों ने मारवाड़ में बोहुली की थी। राव जी ने इस अपमान का बदला लेने और कुछ शेरशाह की नजरों में वफादार बनने की गरज से कामी फौज हुमायूँ के पीछे रवाना की। मगर वह बचकर निकल गया।

राजपूतों की बहादुरी

शेरशाह ने जब सुना कि हुमायूँ साफ बचकर निकल गया तो उसे शक हुआ कि राव जी की खबर उनसे सांठ-गांठ है। फिर क्या

फ़ौरन मारवाड़ पर चढ़ दौड़ा। राव जी अजमेर जाने को तो पहले से ही तैयार थे अब मेड़ते का रास्ता छोड़कर जैतारण के रास्ते से चले। जोधपुर के फ़ौजदार ने राव जी के हुक्म से कोसाना में जाकर रानी उमादेई के जुलूस का इन्तज़ाम मेड़ते के हाकिम से ले लिया। मेड़ते के हाकिम और आसा जी दोनों ने रुख़सत होते वक़्त रानी की सरकार से ख़िलअत पायी। हाकिम मेड़ते को गया आसा जी जैसलमेर सिधारे। राव जी ने नादिरशाही हुक्म दे दिया था कि तुम आज से हमारे राज में न रहना।

जब राव जी अजमेर पहुँचे तो शेरशाह ने सुना कि उनके पास अस्सी हज़ार सवार हैं। सुनते ही सन्नाटे में आ गया। हियाव छूट गया। आगे क़दम न उठे। मगर वीरम जी मेड़ते ने कहा—आप चलें तो सही, मैं राव जी को दम के दम में भगाये देता हूँ। हिन्दुओं में अनबन और फूट ने हमेशा मुल्क वीरान किये हैं और ग़ैरों से हमेशा हारें दिलायी हैं। यह वीरम जी मेड़ते का सरदार और उस बहादुर जैमल का बाप था जिसने चित्तौड़ के घेरे में अकबर को नाकों चने चबवाये थे और जिसके नाम पर आज तक सारा राजस्थान गर्व करता है। राव जी ने उसे मेड़ते से निकाल दिया था। इसी का बदला लेने के लिए वह शेरशाह से जा मिला था।

शेरशाह को वीरम जी के कहने का यक़ीन न हुआ वह फूंक-फूंककर क़दम धरता आगे को चला मगर जब अजमेर के बहुत क़रीब पहुँच गया तो उसने उससे कहा कि अब आप अपनी होशियारी दिखाइये। वीरम ने कहा—बहुत ख़ूब। चुनांचे उसने राव मालदेव जी के सरदारों के नाम फ़ारसी में इस मज़मून के फ़रमान लिखे—

हम आप साहबों के लगातार तक़ाज़ों से मजबूर होकर यहाँ तक आ पहुँचे हैं। अब आप लोग अपने वचन के अनुसार राव जी को गिरफ़्तार करके हमारे पास ले आयें। ख़र्च के लिए फ़ीरोज़िया[1] भेजी जाती हैं।

इसके बाद बहुत-सी ढालें मँगाकर एक फ़रमान उनकी गद्दी में रखकर सी दिये और जिस ढाल में जिस सरदार के नाम का फ़रमान था वह उसी

१ फ़ीरोज़शाही सिक्कों को कहते थे जो इस ज़माने में चलता था।

जाते हैं, खुशी से जाइये हम तो शेरशाह से यहीं लड़कर मरेंगे। यह भी तो देखें कि राजपूत जमीन के लिए कैसी बेदर्दी से लड़कर जान देते हैं।

राव जी ने कहा — यहाँ ठहरना फिजूल है। अब बचे हैं तो जोधपुर ही पहुँचकर लड़ेंगे। मगर जैता कोंपा ने न माना। वे अपने दस हजार जान पर खेलनेवाले बहादुर राठौरों को लेकर पड़े रहे और बादशाही फौज पर गिर पड़े और ऐसा जी तोड़कर लड़े कि बादशाह समझा अब हारा तब हारा। मगर दस हजार राजपूत पचास हजार पठानों के मुकाबिले में क्या कर सकते थे। हाँ, उन्होंने उस राजपूती शिजाअत का नमूना दिखा दिया जो [illegible] हल्दीघाटी चित्तौड़ के मैदानों में बार-बार जाहिर हो चुकी है और अपने सब के सब खेत रहे मगर अपनी बहादुरी का सिक्का बादशाह के दिल पर जमा गये। शेरशाह ने खुदा का दोहरा शुक्रिया अदा किया और सरदारों से कहा — बड़ी खैरियत हुई वर्ना मुट्ठी भर बाजरे के लिए हिन्दोस्तान की सल्तनत हाथ से गई थी।

दूसरे दिन यह हार की खबर पाकर राव जी ने बीकानेर की तरफ बाग मोड़ी। जोधपुर को लिखा कि किले की खूब हिफाजत करो और रानियों को हमारे पास भेज दो। बड़ी रानी को बुलाने को भी वहीं [illegible] दो। किलेदार ने हुक्म पाते ही सब रानियों को बुलाने भेज दिया। जोधपुर से पश्चिम तीन कोस की दूरी पर वह जगह है। और खुद किला दुरुस्त करके उसके बचने के लिए तैयार हो बैठा। जो राठौर सरदार राव जी की मसलहत से दुखी होकर अलग हो गये थे वे भी आ मिले और कोंपा के साथियों में हाजिर हो गये। इस तरह रानी के पास जान पर खेलनेवालों की एक अच्छी जमात तैयार हो गयी। रानी ने मशहूर किलेदार के कमाण्डर दरवाजों के खोलने से चूक न किया।

शेरशाह खुद तो न आया मगर उसने अपने सरदार खवास खाँ को पाँच हजार सिपाहियों के साथ जोधपुर फतह करने के लिए भेजा। उसने आकर किला घेर लिया। किलेदार उससे कई दिन तक लड़ा मगर जब किले का सब पानी खर्च हो चुका तो उसने दरवाजा खोल दिया और एक [illegible]

लड़ाई लड़कर मर गया। क़िले पर खवास खाँ का कब्ज़ा
तरह राव जी की बदगुमानी और बुज़दिली ने दुश्मनों के हाथ
फ़तेह का झंडा दे दिया।

जेता और कोंपा के मारे जाने के बाद भी राव जी के पास सत्तर हज़ार सिपाही थे मगर बजाय जैतारने के जोधपुर आते और सारी ताक़त से मुक़ाबला करते तो यक़ीन था कि बादशाह की हार होती वर्ना यह नौबत आ गयी कि पाँच हज़ार आदमियों ने जोधपुर को घेरा डालकर जीत लिया। राजपूतों ने जहाँ असीम वीरता दिखायी है वहाँ बहुत बार रणनीति के अपने अज्ञान का सबूत भी दिया है।

खवास खाँ ने क़िले पर अपना कब्ज़ा जमाकर फ़ौज का एक हिस्सा बीकानेर को रवाना किया कि वह राव जैतसी के लड़के कल्यानमल को गद्दी पर बिठा दे। इसी तरह वीरम जी के साथ भी थोड़ी-सी फ़ौज मेड़ता फ़तेह करने के लिए भेजी।

इतने में खवास खाँ को खबर मिली कि राठौर कोसाने में जमा हो रहे हैं। वह फ़ौरन पहुँचा और रूठी रानी से कहलाया कि या तो हमसे लड़ो या जगह खाली कर दो। रानी ने जवाब दिया कि मैं लड़ने को तैयार हूँ तेरा जब जी चाहे आ जा। मैं औरत हूँ तो क्या मगर राजपूत की बेटी हूँ।

खवास खाँ ने अपने सरदारों से सलाह की कि अब क्या करना चाहिए। उन्होंने कहा अभी थोड़े से राजपूतों ने बादशाह से लड़कर आफ़त मचा दी थी। उनके साथ राजा भी न था। अगर वह होता तो नहीं मालूम क्या ग़ज़ब हो जाता। अब फिर उन्हीं से खामख्वाह झगड़ा मोल लेने की क्या ज़रूरत। यह ठीक है कि राजा यहाँ नहीं है, मगर रानी तो है। उसके सरदार अपनी रानी की इज़्ज़त बचाने के लिए जी तोड़कर लड़ेंगे और रानी खुद भी दबनेवाली नहीं नज़र आती। खवास खाँ ने कहा यह तो ठीक है मगर यहाँ से बिना लड़े चला जाऊँगा तो लोग कहेंगे कि मर्द होकर एक औरत के सामने से भाग गया। सरदारों ने जवाब दिया कि औरत से न लड़ने में इतनी जिल्लत नहीं जितनी उससे हार जाने में। आखिरकार यह फ़ैसला हुआ कि इस मामले में बादशाह की राय भी दरियाफ़्त की जाय।

मैं रानी की ही पहचान है। रानी लाछलदे ने अपने बेटे कुमार राव को
राणी उदेलाने का सामान करके राव जी से इस रस्म के अदा करने और
सधान सगाने की इजाजत मांगी। उन्होंने मंजूर कर लिया मगर चूँकि
जोधपुर में बहुत वर्षों से इसलिए राव का मलाल हुआ कि सरदार अ
बाकर दुखियों सताये जो जिल्लत वालों और नसवारों से भरा हुआ है। इस
बहाने से यह सरदार बना लाया और यहाँ अपने दोस्तों और सहेलियों और
अपना मेल आनेवालों को जमा करके बोला कि राव की बुराई हो गये हैं
उनकी बदसलूकी से मुझ से छिपके नहीं हुए हैं। अपने दोस्त लोग
दीन व रोब दुश्मनों से छिपके जाते हैं। छिड़का जाय यहाँ से बच्चे ही
उन्हें पकड़ को और कैद कर दो ताकि मुझ से अमन-चैन हो जाय। यहाँ
वह मकाड़ होती ही नहीं बल्कि राव की को उसका बाहर जब गयी।
उन्होंने बदस्तूर सहायक रानी लाछलदे को इन्द्राणी पर बालकी खिलवाने की
और कहलाया कि अभी किले से बाहर न आओ। रानी ने बूढ़ा बेटी
बला? जवाब मिला कि डेरा बेटा तुम्हें बदला देना। रानी को मनी सब
किला छोड़ना पड़ा। बाप की राव को सजा के नसे में बुरा हुआ जाना
और किले से जाने ला तो किलेदार ने कहा कि वह छूटी भी कैद का हुक्म
नहीं है। राव ने कहा बाकर राव जी से पूछो कि फौज सजा ली है।
उन्होंने जवाब दिया—तुम मजबूत हो और किले के ठहरे के काबिल नहीं।
बेहतर है कि तुम गौरीव जाओ। यहाँ तुम्हारे लिए सब इन्तजाम कर
दिया जायगा। बमूजब राव अपनी मां के साथ गौरीव चला गया।
बाकी रानियों ने जब यह हाल अपनी बहनों के मुताबिक कर लिया तो अब
बड़ी रानी के पीछे पड़ीं कि किसी तरह वह फिर उनकी गद्दी पर से उतारी
तो फिर किसी बात का खटका न रहता। हमारे हाथ में राव जी हैं ही
को चाहते करते। मुझको राव जी के काम करते नहीं कि बड़ी रानी ही के
हमारे से राव ऐसा नाराजगी और फसादी हो गया है। रानियों के हमारे

---

१ मंडोर मारवाड़ की पुरानी राजधानी है। जोधपुर से तीन कोस उत्तर में एक पहाड़ी के नीचे बसा है।

से और लोगों ने भी रूठी रानी की शिकायत की। यहाँ तक कि राव जी ने उसे भी गोंदोज भेज दिया। अब की बार पति की आज्ञा उसने बड़े शौक से मानी क्योंकि कछवाही रानी और कुमार राम से उसको बहुत स्नेह हो गया था। इसके अलावा वह राव जी को इतनी परेशानियों में फँसा देखकर उन्हें तंग करना ठीक न समझती थी। जिस दिन उसके गोंदोज जाने की खबर रनिवास में पहुँची उसकी सौतों के घर घी के चिराग जले।

कुमार राम की शादी राणा उदय सिंह की लड़की से हुई थी। गोंदोज में अपना निवाह न देखकर वह उदयपुर चला गया। राणा ने उसका बड़ा स्वागत-सत्कार किया और मौजा कल्वा उसके रहने के लिए दे दिया जो मारवाड़ से बहुत नजदीक है। थोड़े दिनों में राम अपनी माँ और उमादे दोनों को उसी जगह ले गया। इस तरह झाली रानियों की आँख का काँटा निकल गया। राव जी भी बाहरी और भीतरी झंझटों से फुरसत पाकर देश जीतने में लग गये और बहुत से खोये हुए इलाके फिर से लिये बल्कि कई नये इलाके भी फ़तेह किये।

मगर इन फ़तेहों का सिलसिला बहुत जल्द टूट गया। अकबर के वक्त पर आने और जोर पकड़ने से राव जी को अपनी ही पगड़ी सम्हालनी मुश्किल हो गयी। धीरे धीरे कितने ही इलाके हाथ से निकल गये। तमाम बादशाह की जोशीली चढ़ाइयों का बूढ़ा राव क्या सामना करता। उसकी जिन्दगी के दिन भी पूरे हो गये थे। आखिर संवत् १६१९ के कार्तिक महीने में राव मालदेव ने बड़ी कामयाबी से राज करने के बाद स्वर्ग की राह ली।

रूठी रानी का सती होना

रानियाँ सती होने की तैयारियाँ करने लगीं। झाली रानी को उसके बेटे चन्द्रसेन ने सती होने से रोक लिया और कहा कि दो-चार दिन में सब सरदार बाहर आ जायेंगे उनसे मेरी मदद का वादा कराके तब सती होना। झाली रानी ने चन्द्रसेन को बावजूद उदयसिंह से छोटे होने के राव जी से कह-सुनकर उत्तराधिकारी बनवा दिया था। रानी हीरादेई ने भी समझाया कि चन्द्रसेन को इस तरह छोड़कर सती होने में बहुत नुकसान

का तो कुछ बखान ही न किया और क्या करता। वह बड़ा देर ठहर बाला
तो हमें राव जी के साथ जाने में इतनी देर न होती। उसको रोकता कौन
था। बात में देर हो चला जाता।

पति का प्यारा नाम सुनकर उमादेई की जैसे जान आ गयी। पति की
अपनी सुहब्बत अथवा प्रेम उस पर छा गया। उस वक्त उसकी निगाह
जिस पर पड़ती थी वह मस्ताना हो जाता था। किसी ने खूब कहा है—

नैन छके नैना छके छके अमर मुहब्बत
छकी दृष्टि जा पर पड़े रोम रोम छक जाय।

प्याली वाली सखी और सुरूपरानी के होंठ तक नहीं मैं मस्त हूँ और मस्त
निगाहें जिस पर पड़ती हैं उसको देखो देखो मस्त हो जाता है।
फिर सखी रानी ने उसे सम्बुझकर कहा—देखो यहाँ कोई राठौर तो
नहीं है? इसके बीच मालदेव नाम का एक बेनाम राठौर मिला। वह
बरछा हाथ और ढाल बाँधकर बोला—इसी वक्त मुझ पर क्या
कीजिये मैं तो मुझ से तंग होकर मारवाड़ छोड़ जाता हूँ और बेकार मैं
मेहनत मजदूरी करके पेट पालता हूँ। मैं किसी में बात देने के काबिल नहीं हूँ।
उमादेई ने कहा—ठाकुर, रुठे सब लाज करके किसी में नाम दे दो।
तुम राठौर वंश के हो इसलिए तुम्हें ढूंढ़ना हुआ है।
उनसे फिर कहा की—उसी माला नाम तो मैं ढूंढ़ा पर सवाली कई
बिठाकर वाह किन कहाँ ढूंढ़ा। बेटा तो वह भी इतना बड़ा नहीं है कि
जोधपुर की रानी का ब्याह करके उसके मान कर सकूं। मैं तो पैरों के
तले नारी की ओर से राव काज करता हूँ।
उमादेई ने यह सुनकर खुशी की इशारा किया। उसने उसी दम राजा
जी के नाम पत्रिका को ठाठ से बना लिया कि राव हमको छोड़ गये लिखे
लिखा गया है। अब यह कविता और उसने छीनकर और मालदेव राठौर को
बैठ है। इस तरह वहीं ने इस ढूंढ़ार का साथ उस राठौर इसी को दिया
दिया।
बीच मालदेव ने पिछले हाथ में की और फ़ौरन कहा बोलकर दि

जान दे दी। इस कस्बे में वहाँ राजा की एक डेरी के सिवा कोई निशान बाकी न रहा। थोड़ी ही घड़ी में हवा ने राख के ढेरों को इधर-उधर बिखेरकर और भी क़िस्सा तमाम कर दिया।

ता सहर वह भी न छोड़ी तूने ओ बादे सबा
यादगारे रौनक़े महफ़िल थी परवाने की ख़ाक

मगर ख़ाक न रही तो क्या रूठी रानी का नाम अभी तक चला जाता है। लोग अभी तक उसके नाम का आदर करते हैं। इस तरह शादी के पच्चीस बरस बाद उमादेई का मान टूटा और मान के साथ ज़िन्दगी का प्याला भी टूट गया। उमादेई महारानी तुझे धन्य है! जब तक तू ज़िन्दा रही तूने अपनी आन निबाही और मरी भी तो आन के साथ मरी। तू विमान पर चढ़ जा फ़रिश्ते हाथों में फूल लिए तेरे इन्तज़ार में खड़े हैं कि तुझे देखें और फूलों की वर्षा करें। ऐ पवित्र देवी जग सतीत्व तुझ पर न्योछावर होने को तैयार है और तेरा प्यारा पति जिसके नाम पर तूने जान दी आँखें बिछाए तेरी प्रतीक्षा कर रहा है।

उमादेई महारानी के सती होने की ख़बर जब जोधपुर पहुँची तो लोग धन्य-धन्य करने लगे। क़ायम रहे वह माटी देश जिसमें ऐसी-ऐसी राजकुमारियाँ पैदा होती हैं पति से रूठने पर भी जिनके सतीत्व की चादर पर कभी कोई धब्बा नहीं लगता, जिससे रूठती हैं उसी के चरणों पर अपना सर निछावर कर देती हैं। ऐसा रूठना कहीं किसने देखा है?

राव जी के देहान्त के बारहवें दिन जीत मालवत के लिए जोधपुर से पगड़ी आयी। उसने सब क्रिया-कर्म करके पगड़ी बाँधी फिर उदयपुर जाकर यह चिट्ठी राणा उदयसिंह को दी। उन्होंने चिट्ठी पढ़कर आदरपूर्वक उसे सिर पर रख लिया और केलवा का पट्टा उसके नाम लिख दिया। उसने लौटकर उस गाँव पर अपना क़ब्ज़ा कर लिया। जहाँ रूठी रानी सती हुई थी वहाँ एक पक्की छतरी बनवा दी थी जिसका निशान अभी तक मौजूद है। रूठी रानी की सिफ़ारिश से जिस तरह जीत मालवत को केलवा मिल गया उसी तरह उसकी बद्दुआ भी बेअसर न हुई। कुँवार राव को जोधपुर

की गद्दी पर बैठा व सलीम हुआ। उदयसिंह और अकबर के दरम्यान
मुगल भी उठे वहाँ का राज किले में मकान रहे। इसी मालवे से वह
कुछ दिनों सेवानिकाले की सुविधाएँ लेकर अधिकार पर बना और अपने
मसनद अपने साथ लेता गया। उसके पीछे फैजबख्श को, जो अकबर और
जहाँगीर के दरबारियों में प्रमुख शाह के नाम से मशहूर है, मालवा में एक
छोटी-सी जागीर मिली थी जिसका नाम अमझेरा था। मगर सन् १८५७
ई. के गदर में वह भी खत्म हो गयी।

मांडो रानी रूपमती की बदगुमानी भी अधिकार दे डाली। उस वक्त
की बदगुमानी का रंग हो गया था मगर बाद को जब अकबर ने राज
मालवे के मरने की खबर पाकर मालवाह पर कोई फौजी तो कुमार राम
रायमल और उदयसिंह दोनों राजकुमार कहीं फौज से था मिले जिसका
नतीजा यह हुआ कि संवत् ११२२ विजयी से बादशाह ने मांडू वाली
कर लिया। अकबर ने उस मुल्क को तोहफ करके अपने हाथ में लेकर
संवत् ११४ में उसे उदयसिंह के हवाले कर दिया। उसकी ठनाने सब तक
मांडू का राज्य करती है। बादशाह के पीछे कमीशन को बहादुर ने अजमेर
के इलाके में बसाने का फरमान दिया था। उसकी औलाद अब तक वहाँ है।

यह नयी रानी की कहानी पूरी हुई। वह नहीं है मगर उसका नाम
बाज बहादुर की बात पूरी करके पर भी बड़ों का सौ बना हुआ है।
बादशाह के दरबारियों ने उस्तादों की तारीख में जो कुछ लिखा है, वह
इतना दुरुस्त और पुख्ता है कि उसे पढ़कर बाज भी ऐसा जाता है और
दिल उमड़ आता है। जब ये सब बातें होती थीं उस समय सब लोगों के सामने
कविताएँ और गीतों को पढ़कर उस समय का हाल मालूम होता है मगर उन
का आता है। बाज भी बादल जिनमें एक दोहा पढ़कर उस्तादों की हमेशा
के लिए पति से अलग कर दिया था, अब बता एक गाने में मालवा और
बाजा के साथ रहता था। जब उसने रानी के सती होने की खबर पायी
तो बोला—हे उस्तादों, तुम्हें धन्य है। तुमे कहा था जब मालिक तक
मेरा मान एक साथ तब तारीख रहेगा। जैसा तूने कहा था, कर दिखाया।
तेरे साहस और तेरे स्वाभिमान को बार-बार धन्य है।

आसा जी ने उसी वक्त चौदह बंदों की एक कविता लिखी और उसकी नकलें सारे राजपूताने में भिजवायीं क्योंकि उसने वादा किया था कि अगर मैं तुम्हारे बाद तक जिन्दा रहा तो तुम्हारे नाम को अमर बना जाऊँगा। बात के पक्के ने अपने वादे को पूरा किया।

यह पद आज तक मारवाड़ में बच्चे-बच्चे की जबान पर हैं और जब तक इन पदों के पढ़नेवाले बाक़ी रहेंगे रूठी रानी का नाम रौशन रहेगा।

o